अपने अपने हिस्से की धूप

(कहानी-संग्रह)

"जैसे सूरज की किरणें देती है, हर पेड़, पौधे, फूल पत्ती को रूप अनूप,
इस धरती पर हर जीव को लगती प्यास और भूख,
छोटा, बड़ा, कोई नहीं, सब उस प्रभु का रूप,
हर एक को चाहिए सिर्फ अपने अपने हिस्से की धूप"

विमला गुगलानी 'गुग'

इसी कलम से :-

उपलब्धियां- अब तक दस पुस्तकें प्रकाशित

1. स्मृतियों के आर-पार (विभाजन के दु:ख और सामाजिक कुरीतियों पर आधारित पारिवारिक पुस्तक)
2. इंद्रधनुषी जीवन कला (निंबध-सग्रंह)
3. उत्सव है जिंदगी (निंबध-सग्रंह)
4. मन कस्तूरी (निंबध-सग्रहं)
5. सन्नी- बन्नी (बाल काव्य-सग्रंह)
6. रंगला जंगल (पंजाबी में पशु-पक्षियों पर आधारित कविताएँ) चंडीगढ़ साहित्य अकादमी की और से 2019 में इस बाल काव्य सग्रंह के लिए अनुदान राशि प्रदान की गई।
7. अमर स्मृतियां (पाकिस्तान से विस्थापित मेरे परिवार की सात पीढ़ियों के संघर्ष और श्रंद्धाजली की सच्ची दास्ताँ)
8. मन-दर्पण- कहानी सग्रंह
9. शब्दों के साए- कविता सग्रंह
10. सना सुहानी – चण्डीगढ़ साहित्य अकादमी की ओर से इस बाल काव्य संग्रह के लिए अनुदान राशि प्रदान की गई।

हिंदी और पंजाबीं में लगभग तीस सांझा काव्य, कहानी संग्रह प्रकाशित, विभिन्न अखबारों, मैगजीनों में लेख, कविताएँ, कहानियाँ, सुझाव, रेसिपीज़ छप चुकी है, रेडियो, दूरदर्शन पर प्रोग्राम देने का सौभाग्य और कई संस्थानों से सम्मानित।

अपने अपने हिस्से की धूप

(कहानी-संग्रह)

विमला गुगलानी 'गुग'

सप्तऋषि पब्लिकेशन

चंडीगढ़

Apne Apne Hisse Ki Dhoop

(Stories)

by

Vimla Guglani 'Gug'
Kothi No. 3200, Sector 40-D,
Chanidgarh
Mobile: 9888973200
E-mail: vimlaguglani@gmail.com

ISBN: 978-93-7407-459-6

Edition – 2025

© Author

Published by

Saptrishi Publication

Plot No. 25/6, Industrial Area, Phase-2,
Near Tribune Chowk, Chandigarh.
E-mail: sapatrishi94@gmail.com
94638-36591, 77174-65715

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopying, recording or any information storage and retrieval system, without permission in writing from the Author.

Visit us at: www.saptrishipublication.com
Printed by: SR Printers

समर्पण

यह मेरा कहानी संग्रह परमपिता परमात्मा के बाद मेरे स्वर्गीय पूजनीय माता-पिता श्रीमती शांति देवी सेतिया और श्रीमान लाजपतराए सेतिया और मेरे हमसफ़र स्वर्गीय श्रीमान विनोद कुमार गुगलानी जी को समर्पित है, जिनके साथ ने मेरे जीवन की राहों को आसान बनाया।

आज भी याद है किताबों की महकती खुशबू—

चंडीगढ़ की जानी मानी लेखिका, कवियत्री और शिक्षिका विमला गुगलानी की ग्यारवीं पुस्तक (कहानी-सग्रहं) के बारें में लिखते हुए सांसों में अपनी पढ़ी हुई किताबों की सौंधी महकती हुई खुश्बू जैसे अंतर्मन तक छू गई। कितना भी डिजिटल युग आ गए, किताबों की जगह नहीं ली जा सकती। बीस सामाजिक कहानियों से सजी इस पुस्तक की सभी कहानियां जैसे हमारे आस पास ही हों। किसी भी क्षेत्र में आगे बढ़ने से पहले परिवार, समाज का साथ जरूरी है। लेखिका की पहली दस किताबों में विभाजन, लेख, कविताएं, कहानियां, बाल कहानियां शामिल है।

किताबें हमारे जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे हमें ज्ञान, अनुभव, और संस्कृति की विरासत प्रदान करती हैं। किताबें हमें नए विचारों और दृष्टिकोणों से परिचित कराती हैं, और हमें अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए प्रेरित करती हैं। किताबें, ज्ञान और अनुभव की गाथा हैं, नए विचारों से अवगत कराती हैं,और हमारे जीवन को रोशन करती हैं। लेखिका की कलम के लिए मेरी और सी बहुत सी शुभकामनाएँ!

किताबों की दुनिया में खो जाओ, किताबें हमारे मित्र हैं,
जो हमें ज्ञान और अनुभव देती है, किताबें हमारी गुरू हैं,
जो हमें जीवन के पाठ पढ़ाती हैं।

वे हमें सत्य और न्याय की राह दिखाती हैं, और हमें एक बेहतर इंसान बनाती हैं।

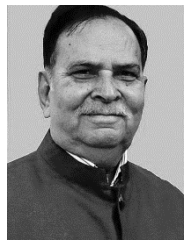

प्रेम विज
प्रख्यात कवि, लेखक,
व्यंगकार, पूर्व संपादक 'जागृति' मैगजीन।

आभार

प्रिय पाठकों,

बीस सामाजिक कहानियों से सजा यह काव्य संग्रह आपकी झोली में डालते हुए मैं अत्यंत हर्ष महसूस कर रही हूं। इससे पहले मेरी दस किताबें जिनमें लेख, कहानी संग्रह, बाल काव्य संग्रह, (दो हिंदी और एक पंजाबी) काव्य संग्रह और भारत पाक बंटवारे पर आधारित पुस्तक, पारिवारिक पुस्तक आ चुकी है। दो बाल काव्य संग्रहों (एक हिंदी और एक पंजाबी) को चंडीगढ़ साहित्य अकादमी से अनुदान भी प्राप्त हुआ, जिसके लिए मैं आभारी हूं। अपने ईष्ट देव के आशीर्वाद और परिवार के सहयोग के ईलावा साहित्य के इस सफ़र में बहुत से महान साहित्यकारों और बुद्धजीवियों से मार्गदर्शन मिला लेकिन साहित्य की दुनिया के विशेष आदरणीय लेखक, कवि, व्यगंकार, और अनेकों किताबों के रचियता 'जागृति' मैगजीन के पूर्व संपादक और महान व्यक्तित्व के स्वामी श्री प्रेम विज जी का और मैगजीन 'सोच दी शक्ति' के मुख्य संपादक एक अद्भुत व्यक्तित्व और अद्वितय कलमकार आदरणीय श्री दलजीत सिंह अरोड़ा जी का सहयोग तो अतुलनीय है। इनके प्रति मैं नतमस्तक हूं और दिल से आभार प्रगट करती हूं और अपने प्यारे पाठकों और सप्तऋषि प्रकाशन का भी अत्यतं धन्यवाद। आप सभी का आशीर्वाद और साथ मेरी कलम के लिए यूं ही बना रहे, यही कामना करती हूं!

विमला गुगलानी 'गुग'
चंडीगढ़
9888973200

अनुक्रमाणिका

1.	उड़न-छू	9
2.	छत या छतरी	20
3.	तार-तार होते रिश्ते	32
4.	अपने अपने हिस्से की धूप	39
5.	सही फैसला	44
6.	देस परदेस	49
7.	ये तेरा घर ये मेरा घर	54
8.	अपने हुए बेगाने	68
9.	बोझ अपना अपना-कहानी	75
10.	अतीत की यादें	82
11.	परी हूं मैं	87
12.	स्वार्थ अपना अपना	91
13.	परख	99
14.	सुंदरियां - हास्य व्यंग	106
15.	दीप जलते रहे	112
16.	हारी हुई बाजी	118
17.	गल्तफ़हमी	123
18.	नई शुरूआत	130
19.	बेनाम रिश्ता	143
20.	सही-ग़लत	147

उड़न-छू

वनीत को आज फिर जैसे ही वो लड़की दिखी, उसके दिल में बाँसुरी सी बजने लगी। उसने कहानियों और फ़िल्मों में ऐसे मौक़े पर गिटार और घंटियाँ बजने का तो पढ़ा सुना था, मगर बांसुरी बजने का अहसास शायद किसी को न हुआ हो, सिवाय राधा के। बचपन में अक्सर माँ कहानियों में राम सीता और कृष्ण राधा का जिक्र किया करती थी कि कैसे कृष्ण की मुरली की तान पर गोपियाँ मस्त हो जाती थी और नाचती, मगर राधा की तो बात ही और थी। उसे तो जैसे हर समय ही कन्हैया की बाँसुरी सुनाई देती और वो पगली उसी में ही मगन रहती। वो भूल जाती कि कान्हा तो आसपास है ही नहीं, केवल अहसास ही काफी था उसके लिए। बस कुछ ऐसा ही हाल था वनीत का। वो लड़की न हुई जादू की छड़ी हो गई।

पहली बार की मुलाक़ात को याद करके वनीत के बदन में आज भी हलचल मच जाती है। हेलमेट पहन कर पार्किंग से वो अपनी बाईक निकाल रहा था, वो लड़की भी अपनी स्कूटी निकालने की कोशिश में थी। दो पहिया वाहनों की पार्किंग में कैसे लोगों ने बेशर्मी से कारें भी पार्क की हुई थी। नियमों की धज्जियाँ उड़ाना तो हमारे देश में आम सी बात है। अपना काम होना चाहिए, दूसरा जाए भाड़ में। किसी तरह कारों के बीच में से आख़िर वनीत अपनी बाईक निकालने में कामयाब हो कर ऐसा महसूस कर रहा था जैसे एवरेस्ट फ़तह कर ली हो, दूसरी तरफ उस लड़की की भी वही हालत थी। हेलमेट सिर पर रखकर वो शायद बैल्ट बांधना भूल गई थी। दोनों तेज़ी से अपना अपना वाहन स्टार्ट करके निकलने ही लगे थे कि झटके से लड़की का हेलमेट गिर गया और उछलता हुआ वनीत के पाँव के पास आ कर लुढ़क गया। बिना देरी किए वनीत ने झुक कर हेलमेट उठाया और देने के लिए हाथ तो बढ़ाया मगर वहीं अटक गया। उसे तो ये मालूम ही नहीं था कि ये हेलमेट किसी लड़की का है, और वो

लड़की, आधा चेहरा बालों से ढ़का जैसे आधा चंद्रमा और उपर से कुछ कुंडल वाली ज़ुल्फ़ें अठखेलियाँ कर रही हो।

लड़की ने धन्यवाद कहते हुए हेलमेट पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया मगर वनीत अगर ज़रा सा साईड में झुकता तभी लड़की का हाथ उस तक पहुँचता, मगर उसे तो जैसे होश ही न हो वो तो वही ठहर गया। लड़की ने अगले ही पल थोड़ा आगे को हो कर हेलमेट पकड़ा और 'थैंक्स' कहते हुए उड़न छू हो गई। हाथ से हेलमेट जाने के बाद भी जैसे कुछ क्षण के लिए उसका हाथ हवा में लटका रहा। होश आने पर उसे अपने आप पर बहुत शर्मिंदगी सी महसूस हुई। कहीं किसी ने उसे इस हालत में देख तो नहीं लिया। फिर उसने बाईक स्टार्ट की और चल दिया, मगर ज़हन में अब तक वही हसीना घूम रही थी। आख़िर क्या बात थी, उस उड़न छू में, उसने मन ही मन उसका नाम उड़न छू ही रख दिया था।

लगभग दो महीने हो गए थे इस बात को, वनीत की आँखे हर समय उसकी तलाश में रहती कि कहीं वो उसे फिर से कहीं दिख जाए, मगर देहली जैसे महानगर में किसी अनजान को ढूढना तो वैसे ही था जैसे घास के ढ़ेर में सुई तलाशना। लेकिन ये करिश्मा तो सचमुच हो गया, जब वो उसे मौल में दूर से एक्सीलेटर पर दिखी। जब तक वनीत वहाँ तक पहुंचता, वो फिर ग़ायब हो गई। उस समय वनीत के साथ प्रतीक भी था। इतवार का दिन था तो दोनों समय बिताने और मौज मस्ती के लिए मौल चले आए। हफ़्ते में एक ही तो दिन मिलता है छुट्टी का, बाकी तो हर रोज आफिस जाना और कम्प्यूटर के साथ सिर खपाई करना। आफिस जाने का समय होता है, मगर वापसी का नहीं। उसके साथ आफिस में कितनी ही लड़किया काम करती है, बहुत खूबसूरत भी है, कईयों ने उसकी और दोस्ती का हाथ भी बढ़ाया मगर उसे तो जैसे इन सब पचड़ों से दूर रहना ही पंसद था। बचपन से ही वो कुछ शर्मीला और मितभाषी था। पढ़ाई लिखाई तो इंदौर में हुई मगर जाब मिली देहली में। जाहिर है आना तो था ही।

दो साल हो गए, फ़्लैट किराए पर ले लिया। एक दो बार माँ ने आकर सब सैटल कर दिया। आफिस में कई दो दो तीन तीन लड़के भी मिलकर रह रहे थे, मगर वनीत को अकेले रहना ही पंसद था। काफी समय बाद प्रतीक से

उसकी दोस्ती हुई थी। कभी कभी वो इकट्ठे घूमने निकल पड़ते थे। दिल से तो नहीं मगर दिमाग़ से वनीत ने उस उड़न छू का ख़्याल निकाल दिया था, कोई चारा भी तो नहीं था, मगर आज उसे दूर से देखकर पहले की तरह जैसे बाँसुरी बजने लगी। भूल गया कि प्रतीक भी उसके साथ है। 'अभी आया' कह कर वो दूसरे एक्सीलेटर पर चढ़ गया लेकिन पूरा चार मंज़िला मौल छान मारा, वो उड़न छू फिर नहीं दिखी। अपने साथ साथ प्रतीक का दिन भी खराब कर दिया। प्रतीक ने कई बार पूछा कि वो किसे ढूढने गया था, आख़िर वो बताए भी तो क्या। बीच में वनीत ने उसे भूलने की पूरी कोशिश की थी, मगर इस एक झलक ने जैसे फिर से उसके दिमाग़ रूपी तालाब में कंकर फेंक दिया था। दिन तो काम काज में निकल जाता मगर रात को फिर उसकी सूरत दिखती। वो अपने सिर को झटक कर सोचता कि आख़िर ऐसा भी क्या है उस उड़न छू में। पर कुछ तो था जिसने उसके दिन का चैन और रातों की नींद उड़ा दी थी।

इस बार दो महीने बाद जब वो इंदौर गया तो माँ का वही पुराना राग चालू कि ,"बेटा, शादी करवा ले, सत्ताईस का होने वाला है, तेरी बहन सुरीली की भी शादी करनी है। पापा की रिटायरमैंट से पहले पहले ये दोनों काम हो जाएं तो हमें भी ज़िम्मेदारियों से मुक्ति मिले"। "ऐसा करो आप पहले सुरीली की शादी करवा दो, मेरी तीस के बाद होगी।" ऐसे कैसे, पहले भैया की, मुझे भी तो भाभी संग रहना है, तुम दोनों को तंग भी तो करना है, "सुरीली ने हँसते हुए कहा।" तुम दोनों आपस में ही निबटो, मैं तो चली रसोई में", सुधा ने कुछ खीजते हुए कहा। ये आजकल के बच्चे नहीं है, बाप है, सुनते नहीं किसी की। बेटा कभी कभार तो घर आता है, चार दिन शांति से रह कर घर का खाना खाए। देहली में तो मेड का बना या फिर बाजार का। यह सब सोच कर ही सुधा का दिल भर आया और वह वनीत का मनपंसद मूँग का हलवा बनाने लगी।

अब वनीत किसी को क्या बताए कि वो किस उलझन में उलझा हुआ है, प्रतीक से उसकी दोस्ती तो बहुत थी, परन्तु उड़न छू वाली बात बता कर वो हँसी का पात्र नहीं बनना चाहता था। किस मुहँ से बताए कि वो एक साए के पीछे भाग रहा है पर इस दिल का क्या करे- दिल तो है दिल, दिल का ऐतबार क्या कीजे, आ गया जो किसी पे प्यार क्या कीजे, ये गाना जैसे वनीत के लिए ही हो। समय और मौसम तो अपनी गति से चलते ही रहते है। एक दिन आफिस

की मीटिंग के सिलसिले में उसे गुरूग्राम जाना था। वहाँ पर किसी होटल में कानफ्रैंस थी। जब वो कानफ्रैंस हाल की तरफ जा रहा था तो उसे लगा कि एक टेबल के पास उड़न छू बैठी है, परन्तु सामने एक स्मार्ट सा लड़का भी दिखा। दोनों हंस हंस कर बाते कर रहे थे। वनीत के कदम कुछ क्षण के लिए वहीं के वहीं जाम हो गए, परन्तु अपने आप को संभालता हुआ वो उसके टेबल के पास से होकर आगे बढ़ गया। आज पहली बार उसने उस उड़न छू को ध्यान से देखा था। वो दोनों तो अपनी बातों में मस्त थे वरना तो इस तरह किसी की और देखना मतलब घूरना, और ये तो बदतमीज़ी ही कहलाता।

वनीत को मीटिंग अटैंड तो करनी ही थी, परन्तु उसका ध्यान तो कहीं और ही था। दो घंटे बाद जब वो वापिस आया तो इत्तेफ़ाक़ से उसे वो दोनों होटल के बाहर दिखे। वो चल तो साथ साथ ही रहे थे, लेकिन कुछ दूरी के साथ। फिर उसने देखा कि लड़का कार की और बढ़ गया और वो उड़न छू अकेली ही चल दी। कुछ दूरी बना कर वनीत भी उसके पीछे हो लिया। कुछ देर के बाद उसने देखा कि उड़न छू तो मैट्रो स्टेशन की और जा रही है। तभी एक तरफ से जैसे आवाज़ आई, वान्या रूको, और दूसरी तरफ से एक लड़की ने आकर उसका हाथ पकड़ लिया। दोनों मुस्कुराते हुए मैट्रो स्टेशन के अंदर चली गई। वनीत की गाड़ी तो होटल के बाहर खड़ी थी। चलो नाम तो पता चला उस उड़न छू का' वान्या', कितना सुंदर नाम है। उसके साथ कौन था, उसका ब्वाय फरैडं या फिर कुलीग या कोई रिश्तेदार,चलो छोड़ो , उसने अपने सिर को एक झटका सा दिया।

कई दिन और बीत गए, कहानी वहीं की वहीं, उसने उसे नाम से सर्च करने की कोशिश की, परन्तु कुछ पता नहीं चला। घर से जब फोन आता, बात उसकी शादी पर ही अटक जाती। उसे ख़ुद समझ नहीं आती थी कि आख़िर वो चाहता क्या है। इतने पढ़े लिखे, अच्छे घर के बढ़िया नौकरी पर लगे लड़के के लिए अपने परिवार से ही कितने रिश्ते आ चुके थे। उसकी बहन कितनी ही लड़कियों की फ़ोटो उसे व्हाट्सएप कर चुकी थी। कुछ दिनों बाद ही उसके एक कुलीग रोहन की शादी थी। बारात में तो घर वाले ही शामिल होने थे, रोहन ने सबको संगीत फंकशन में बुलाया था। खूब नाच गाना, मस्ती, शराब तो होना ही था। लेकिन स्वभाव से शर्मीला वनीत एक तरफ ही बैठा रहा। दोस्तों ने कई

बार उसे खींचने की कोशिश की, लेकिन वो जाकर जल्दी ही वापिस आ जाता और सगींत, नाच गाने का आनंद लेता। फ़ोन की घंटी बजी तो देखा घर से फ़ोन था, वो मोबाईल लेकर बाहर आ गया,जाहिर है अंदर के शोर में तो बात सुननी नहीं थी।

अरे ये वान्या, उड़न छू है, पर इसके साथ कौन है, उस दिन वाला तो नहीं, ये लड़का तो कोई और ही है, और वो दोनों उसके पास से होते हुए लिफ़्ट की और चले गए। आज वान्या ने कुछ पार्टी वियर सा गाउन पहना हुआ था। अच्छा तो ये भी किसी प्रोगराम में आई हुई है। शायद होटल के उपर वाले हाल में भी कोई पार्टी चल रही थी। जल्दी से फ़ोन खत्म करके वनीत लिफ़्ट से उपर का एक चक्कर लगाने आ आया। सामने ही सजा हुआ हाल था, क़तारों में दीपक जल रहे, फूलों की खुशबू, मोमबत्तियों की महक जैसा कि अक्सर देखने को मिलता है। मन तो कर रहा था कि वो अंदर ही चला जाए। किसी को क्या पता चलेगा, कितने ही मेहमान होगें, लेकिन फिर हिम्मत नहीं हुई, तो क्या बाहर रिसेप्शन हाल में बैठकर उसके बाहर आने का इंतजार करे। उसे यही सही लगा। लेकिन वहाँ भी कितनी देर बैठेगा। निराश सा वो वापिस अपनी पार्टी में ही आकर बैठ गया।

वनीत को इतना तो यक़ीन हो गया था कि वो है तो कहीं आसपास, या फिर ये क़ुदरत का कोई इशारा है जो बार बार उसे मिलाती है और फिर दूर ले जाती है। उसके मन में एक कीड़ा और भी कुलबुला रहा था कि उसके साथ उसे दो बार अलग अलग आदमी दिखे। फिर कभी वो मन को समझाता कि वो भी किन झंझटों में पड़ गया है, जान न पहचान और तूं मेरा मेहमान। यह एकतरफ़ा प्यार भी कितना अजीब होता है। लेकिन फिर वही बात, दिल है कि मानता नहीं। कुछ दिनों बाद दीवाली का त्योहार था। कुछ छुट्टियों का जुगाड़ लगा कर वो इंदौर चला गया। माँ ने बताया कि सुरीली की शादी की बात चल रही है, वो तो हाँ कर नहीं रहा, और रिश्ता भी अच्छा है। वनीत को तो जैसे सचमुच कुछ ख़ज़ाना मिल गया, इसी बहाने कोई उसके विवाह की बात नहीं करेगा, और हुआ भी वही, अगले छः महीने सुरीली की शादी की तैयारियों में ही निकलने वाले थे।

उसने वापिस आ कर फिर से वान्या यानि कि उड़न छू को ढूढने का मन बना लिया। लेकिन कैसे ? एक शाम वो और प्रतीक टहलने निकले हुए थे, पार्क में थोड़ी देर के लिए बैंच पर बैठ गए, तभी उसने देखा कि वान्या भी दूसरी तरफ से आ रही थी, उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ, पर फिर जैसे उसके मन में बाँसुरी सी बजने लगी। तभी उसने देखा कि उसके साथ पाँच छः साल की प्यारी सी बच्ची भी है। प्यार से उस बच्ची की अंगुली पकड़ वो उसे झूलों की और ले गई, और वो फिर वो उसी के साथ मग्न हो कर कभी इस झूले पर तो कभी उस झूले पर तो कभी साँप सीढ़ी पर उसके साथ खेलने लगी। एक बार तो वनीत का मन वान्या को देख कर खुशी से झूम उठा था, लेकिन अगले ही पल उसके मन में अजीब से विचार आने लगे। इस बच्ची से इसका क्या रिश्ता है, कहीं ये शादीशुदा तो नहीं। आजकल की लड़कियां भी कुछ ज्यादा ही आधुनिक हो गई है, कोई सुहाग चिन्ह लगाती ही नहीं। आख़िर कैसे पता करे इस उड़न छू का। काश कि आज प्रतीक उसके साथ न होता, तो पक्का वो आज इसका पीछा करता और सच्चाई मालूम करने की कोशिश करता। लेकिन प्रतीक से क्या कहे, क्या उसे अपने मन का हाल सुना दे ?

ना, ना, बिल्कुल नहीं, बेकार में हँसी का पात्र बन जाएगा। आख़िर वो जानता ही कितना है उसके बारे में। उसे आज प्रतीक की बातों पर भी बहुत ग़ुस्सा आ रहा था, हर वक्त आफिस की बातें करता रहता है, बंदा कोई और बात भी कर ले, पर क्या। गल्ती तो उसकी ख़ुद की है, प्रतीक ने कई बार उससे पूछा कि वो कभी कभी गुमसुम सा क्यों हो जाता है, बात करते करते न जाने कहाँ खो जाता है, पर वो हर बार टाल ही गया। और फिर प्रतीक भी चुप रह जाता क्योंकि उसे पता था वनीत के स्वभाव का कि बहुत ज्यादा बोलने वाला और मज़ाक़िया नेचर का नहीं हैं। प्रतीक तो वनीत को ठहरे हुए पानी का तालाब कह कर छेड़ता था, जिस में कभी कभार ही हलचल होती है। पर प्रतीक यह नहीं जानता था कि उस ठहरे हुए तालाब में भी किसी ने ऐसा कंकर फेंका है, जिसकी हलचल किसी को दिखाई नहीं देती।

अधिंयारा सा होने लगा था, दोनों उठ कर चल दिए। दिन तो अपनी गति से निकलने ही होते है, लगभग एक महीना होने को आया, उसे फिर वो उड़न छू कहीं नजर नहीं आई। जहाँ जहाँ वो उसे दिखी थी, उसने उन सब

जगहों के कई बार बिना मतलब के चक्कर काटे लेकिन कुछ हासिल नहीं हुआ। कुछ दिन पहले उसके आफिस में एक नई लड़की ने ज्वाईन किया था, 'दिशा' नाम था उसका। आफिस में अक्सर लडकों का लड़कियों से फ़्लर्ट चलता रहता था, लेकिन सब जैसे हँसी मज़ाक टाईम पास ही था। पिछले तीन सालों से वह इस आफिस में काम कर रहा है, और चार पाँच लोगों की शादी भी हुई है, लेकिन सब की अरेंज मैरिज ही थी। उसे कई बार ये बातें बड़ी अजीब सी भी लगती। चलो थोड़ी बहुत दोस्ती और हँसी मज़ाक तो और बात है, लेकिन कईयों को देखकर तो लगता था कि वो दोस्ती से कहीं आगे बढ़ चुके हैं। दरअसल वनीत जिस परिवार से था, भले ही वो पुराने विचारों के नहीं थे, मगर फिर भी वहां सभी से मर्यादित व्यवहार की आशा रखी जाती थी।

यह नई लड़की दिशा उसे कुछ अलग सी लगी। ज़्यादा किसी से बात नहीं करती थी। उसे कुछ कुछ वो अपने टाईप की ही लगी। न जाने क्यों वो उसकी और कुछ लगाव सा महसूस कर रहा था। वो ज्यादा खूबसूरत नहीं थी और न ही ज्यादा मार्डन। परन्तु उसकी सादगी में भी एक कशिश थी, सबसे खूबसूरत थी उसकी बोलती हुई आँखे और घने लंबे बाल। अक्सर आजकल लड़किया तरह तरह के हेयर कट करवा कर छोटे बाल रखना पंसद करती है, लेकिन दिशा के लंबे घने बाल, और बेलगाम सी उसके चेहरे पर लहराती घुघंराली लटें एक बार तो सामने वाले को कुछ क्षण के लिए आँखे न झपकाने पर मजबूर कर ही देती थी। धीरे धीरे दिशा कुछ कुछ खुलने लगी, मगर फिर भी वो रिज़र्व ही रहती। एक ख़ासियत और थी उसमें, सबसे मुस्करा कर मिलती। कुछ लोग मुस्करा भी मुस्कुराते नहीं लगते और कुछ लोगों का चेहरा ही मुस्कुराता लगता है। जब वो सच में ही मुस्कुराती थी तो उसके चेहरे पर छोटे छोटे दोनों और डिंपल भी पड़ जाते, जो कि उसे दिलकश बनाते।

वनीत की ज्यादा उससे बात तो नहीं हुई थी, लेकिन कई बार उन्होनें इकट्ठे मीटिंग अटैंड की और वो जिस गरूप का प्रौजेक्ट लीडर था, वो उसमें शामिल भी थी। जल्दी ही उसे पता चल गया कि वो काफी ईंटैलीजैंट है। वो शायद बैंगलोर या कहीं उसके आसपास की रहने वाली थी। उस दिन काफी बारिश हो रही थी, सब लोग लगभग जा चुके थे, आफिस में कुछ लोग ही रह गए थे। वनीत किसी काम में लगा हुआ था, वैसे भी उसे घर जाने की कोई

जल्दी नहीं होती थी। उसके सुबह ही मेड आती थी, जो कि नाश्ता और उसका लंच पैक करती और बाकी सारा काम करती थी, डिनर वो बाहर करता या आनलाइन मँगवा लेता। वैसे वो रात को हल्का खाना ही पंसद करता, कई बार तो फल या दूध ब्रैड से ही काम चला लेता। वनीत के पास वैसे तो गाड़ी भी थी, पर उसे बाईक की सवारी ज्यादा पंसद थी। उस दिन वो बारिश के कारण गाड़ी लेकर आया हुआ था। रात हो चुकी थी, थोड़ा आगे चलकर उसने देखा कि बस स्टाप पर दिशा खड़ी है। दो चार लोग ही और होगें। शायद वो बस या आटो के इंतजार में थी।

बारिश थोड़ी कम हो गई थी, पंरतु सड़कों पर अभी पानी था। उसने दूर से दिशा को देख लिया था, और अंसमज में था कि उसे लिफ़्ट दे या न दे। अगर उसने मना कर दिया तो बिना वजह बेइज्ज़ती हो जाएगी। परन्तु उसे इस तरह छोड़ के जाना भी उसे अच्छा नहीं लगा। आफिस से निकले तो उसे लगभग घंटे से भी उपर हो गया था। दरअसल उसने दिशा को आफिस से निकलते देखा था। इसका मतलब बारिश के कारण आवाजाही में दिक़्क़त आ रही है। उसे तो ये भी पता नहीं कि वो रहती कहाँ है। कहीं उसका घर बिल्कुल दूसरी दिशा में हुआ तो। परन्तु पास आते ही जैसे गाड़ी खुदबखुद रूक गई। वनीत का इशारा पाकर वो सकुचाती सी आकर बैठ गई। सचमुच ही उसका घर बिल्कुल विपरीत दिशा में था जहाँ वो किसी पी जी में रहती थी। ग़नीमत ये थी कि कुछ किलोमीटर के फ़ासले पर मैट्रो स्टेशन था, वैसे भी उसे मैट्रो ही पकड़नी थी, उसने पास बनवाया हुआ था।

वनीत और दिशा की कुछ ज्यादा बात नहीं हुई। वनीत इसलिए नहीं बोला कि कहीं दिशा ये न समझे कि वनीत ने उसे लिफ़्ट दी है, इसलिए बोले जा रहा है, और दिशा सोच रही थी कि वो बोले भी तो क्या। मैट्रो स्टेशन पर दिशा को उतार कर वो चल दिया। दिशा ने उतरते हुए मुस्करा कर हल्का सा 'थैक्यूं' बोला और धीरे से गाड़ी का दरवाज़ा बंद कर दिया। पता नहीं क्यों वनीत का मन गुनगुनाने को कर रहा था। कभी उसके ख़्यालों में वान्या आती तो कभी दिशा। कभी उसे अपने ख्याली पुलावों पर हँसी भी आती की आख़िर ये हो क्या रहा है। उड़न छू यानि कि वान्या उसे फिर कभी नहीं दिखी। इधर दिशा से उसकी नजदीकियां बढ़ रही थी, लेकिन सिर्फ दोस्ती तक ही सीमित थी। वो

इतना ही जान पाया था कि वो बैंगलोर के पास किसी क़स्बे से है, जहाँ पर उनका खेती बाड़ी का काम है। तीन भाई बहन है। माँ बाप ज्यादा नहीं पढ़े, मगर उसकी बहन और एक भाई पढ़ रहे है, वो सबसे बड़ी है । हिंदी से ज्यादा अंगरेजी में अच्छे से बात कर पाती थी।

धीरे धीरे दोनों आपस में काफी घुलमिल गए। कई बार इकट्ठा डिनर पर भी गए, डिनर के बाद वनीत उसको उसके पीजी तक भी छोड़ आया। अब वो उसे दूर नहीं लगता था। बातों बातों में पता ही नहीं चलता था कि कब वो गंतव्य तक पहुँच जाते। दोनों ने परिवार, आफिस, पढ़ाई, राजनीति, फ़िल्मों पर खूब बातें की मगर किसके दिल में क्या है, ये कोई नहीं कह पाया।कई दिनों से उसकी प्रतीक से भी ज्यादा बात नहीं हो पाई थी। दरअसल उसके पिताजी बीमार थे तो वो छुट्टी पर ही चल रहा था। अगले महीने ही वनीत की बहन सुरीली की शादी थी। वैसे तो दोनों परिवार इंदौर से ही थे, मगर आजकल जैसे कि ' डेस्टीनेशन मैरिज' का रिवाज है, तो तय हुआ कि शादी शिमला के पास 'कसौली' में की जाएगी। अपने अपने परिवार के लोकल फकंशन के बाद दोनों परिवारों के कुछ ख़ास लोगों के लिए पहाड़ों की सुदंर वादियों में लगभग सौ लोगों के लिए तीन दिन के लिए होटल बुक हो गया। शादी इंदौर में होती तो शायद प्रतीक के सिवाय वनीत किसी को भी आमंत्रित न करता , परन्तु चूँकि कसौली देहली से ज्यादा दूर नहीं था तो उसने अपने सात आठ दोस्तों को भी निंमत्रंण दे दिया। वो सब तो कसौली का नाम सुनकर ही उत्साहित थे।

आफिस से तीन लड़कियां और चार लड़कों का जाने का प्रोगराम बन रहा था। दो तीन ने अपनी मजबूरी बताते हुआ मना कर दिया था। जाहिर है कि लड़कियों में दिशा भी थी। जैसा कि आजकल हल्दी, मैंहदी, संगीत कई रस्में होती है, और जब इस तरह की डेस्टीनेशन मैरिज हो तो हर फंक्शन पर दोनों परिवार इकट्ठेहो जाते है। शगुन की रस्म के लिए सब मेहमान एक हाल में इकट्ठा हो रहे थे। जैसा कि रिवाज है, लड़की वाले शगुन में फल मिठाइयाँ वगैरह लेकर जाते है, तो लड़की का भाई होने के नाते वनीत की तो बहुत ज़िम्मेदारियाँ थी। हर रस्म में उसे आगे ही रहना था। शगुन की थाली लेकर जब वो मेहमानों के सामने पहुचां तो एकदम से गिरते गिरते बचा। देखने वालों को लगा कि शायद उसका पैर कालीन में अड़ गया है, लेकिन ऐसा कुछ नहीं था। दरअसल सामने

से लड़के वालों की और से उसे वान्या आती हुई दिखी, जो कि और भी कई लड़कियों के साथ खिलखिला रही थी। एकदम से उस उड़न छू को सामने देखकर वो कुछ घबरा सा तो गया, मगर अबके उसके दिल में पहले की तरह बाँसुरी नहीं बजी।

किसी तरह अपने आप को संभाला। शगुन की रस्म पूरी हो गई। उसे पता चल गया कि वान्या उसके होने वाले जीजा समर की मौसेरी बहन है। समर का अपना सगा एक भाई था। बहन की सारी रस्में वान्या ही निभा रही थी। जिसको वो गली गली ढूढ़ता फिर रहा था, आज वो उसके सामने थी। परन्तु उसके दिल में अब वो बात, वो हलचल नहीं थी। शादी के माहौल में नौजवानों में हँसी मज़ाक, एक दूसरे पक्ष की टाँग खिंचाई न हो तो मजा कैसा। मिसाल के तौर पर जब बारात आती है तो लड़की की सब बहनें, सहेलियाँ द्वार पर रिबन लगा देती है, दूल्हें को वो रिबन काट कर ही अंदर आना होता है, जिसके लिए सालियां मोटे नेग की माँग रखती है। फिर शुरू होता है दौर बारगेनिंग का। इसी तरह हंसी खुशी के माहौल में विदाई की घड़ी भी आ गई। वनीत के दोस्तों ने भी खूब एंजाय किया। कुछ तो बीच में शिमला भी चक्कर लगा आए। दिशा और उसके साथ आई दोनों लड़कियों ने भी खूब मस्ती की।

इन सब के बीच वनीत का ध्यान दिशा की तरफ बहुत रहा। वान्या भी उसके आसपास ही थी, मगर न जाने क्यों उसे दिशा का साथ ज्यादा भाता। वान्या चंचल नदी थी तो दिशा जैसे मंद मंद चलती पवन। उसे ये भी पता चल गया था कि वान्या की शादी नहीं हुई और वो ग्वालियर से है। वो प्यारी सी बच्ची उसकी भतीजी थी और जो लड़के उसने उसके साथ देखे, उनके बारे में वो कुछ नहीं जानता। सब अच्छे से निबट गया। अपने अपने कामों पर वापसी हो गई। वनीत जानता था कि जल्दी ही घर वालों की सुई फिर से उसकी शादी पर अटकने वाली है। आदमी मुँह से भले ही कुछ कह न पाए मगर ख़्वाबों पर तो किसी का पहरा नहीं । मुहब्बत का इज़हार किसी से नहीं हुआ, मगर वनीत के सपने में दोनों ही आती। शादी के बाद सुरीली की पहली राखी थी तो वनीत इंदौर गया। खूब उत्सव का माहौल था।

अगले दिन सुरीली तो चली गई, मगर वनीत दो दिन की छुट्टी लेकर आया था। रात को जब सब फरी होकर बैठे तो ममी ने वनीत की शादी की बात

छेड़ दी। वनीत को पता ही था, मगर ममी भी जैसे कुछ सोचकर ही बैठी थी। उन्होनें मोबाईल से एक फ़ोटो दिखाते हुए कहा, "देखो ये लड़की, इसका रिश्ता आया है तुम्हारे लिए"। "उफ्फोह, ममी, अभी तो सुरीली की शादी से निबटे है"। "एक दो साल आराम करो, फिर सोचेगें "। नहीं , नहीं, सुरीली के जाने से घर सूना हो गया है, अब बहू तो आनी ही चाहिए, तूं एक बार ये फ़ोटो देख, माँ ने फिर फ़ोन उसके आगे करने की कोशिश की। "अच्छा, मुझे सैंड कर दो", वनीत जान छुड़ाते हुए वहाँ से उठ गया। अगले दिन वो वापिस देहली आ गया। तीन चार दिन निकल गए। ममी का मैसेज आया" देखी फ़ोटो उस लड़की की, सुरीली के ससुराल से है'',

"ओह, माँ भी ना," उसने फ़ोन देखा। एकदम से वो उछल पड़ा । फ़ोटो वान्या की थी। किस्मत भी न कैसे कैसे रंग दिखाती है। जब वो उसे हर कोने में ढूढ़ रहा था, दीवानों सी हालत थी, उसके विचार से ही कानों में बाँसुरी बजने लगती , तो मिली नहीं, आज जब वो उसकी हो सकती हो, तो उसे कुछ नहीं हुआ। शायद अब वो स्थान दिशा को मिल गया था। हर लिहाज़ से दिशा उससे उन्नीस ही थी, मगर उसकी सादगी पर ही वो मर मिटा था। वान्या से उसने कोई ज्यादा बात भी नहीं की थी, अभी तो दिशा के मन का भी पता नहीं था। मगर उसे विश्वास था कि दिशा भी उसे चाहती है। जब मन में फीलिंग ही न हो तो कोई कैसे आगे बढ़ा जा सकता है। उसकी जिंदगी में वो 'उड़न छू' एक किरदार बन कर ही रहे तो ठीक है। ममी से बात करने की हिम्मत भी नहीं थी और मूड भी नहीं था। एक गोलमोल सा मैसेज डाल कर निकल पड़ा वो मंजिल की और 'दिशा' की तलाश में।

छत या छतरी

मधुलिका को इस मुहल्ले में आए अभी कुछ ही समय हुआ था। आसपास वालों को ठीक से जानती भी नहीं थी। उसके पति बिज़नेसमैन थे, और तीन भाई थे। समय रहते ही सबने प्रेमपूर्वक बँटवारा कर लिया था ताकि आगे चलकर कोई मनमुटाव न हो। मधुलिका के पति के हिस्से में जो प्रॉपर्टी आई वो यहाँ से पास थी तो उन्होनें वहीं पास में ही प्लाट लेकर घर बना लिया। उसके अपने दो बेटे थे, जो अभी पढ़ रहे थे। बेटी की चाह तो थी, पंरतु तीसरे बच्चे की ज़िम्मेवारी का सोचकर वो चुप ही हो गए थे। लेकिन कहीं न कहीं मधुलिका के मन में बेटी की चाह थी जो वो अपने देवर की बेटी को देखकर पूरा कर लेती। खूब लाड़ करती वो उसे। पहले तो वो सब इकट्ठे ही रहते थे, लेकिन अलग होकर भी कुछ फ़र्क़ नहीं पड़ा। मन पास होने चाहिए। दिल तो बहुत करता पंरतु अब रोज मिलना संभव नहीं था। जब चूल्हे अलग हो जाते है, शहर भले ही एक हो, कभी एक तो कभी दूसरा काम कहो या बहाना निकल ही आता है।

मधुलिका धीरे धीरे अपने आप को इस नए मुहल्ले में एडजस्ट करने लगी थी। कुछ सहेलियाँ भी बन गई थी। तीन मकान छोड़कर स्नेहा से भी उसकी अच्छी दोस्ती थी। स्नेहा का अपना एक पाँच साल का बेटा था, एक बड़ी बेटी भी थी लगभग पंद्रह सोलह साल की, जिसका नाम शीना था। उम्र के हिसाब से स्नेहा और शीना बहनों सी लगती थी। मधुलिका को बाद में पता चला कि शीना उसकी सौतेली बेटी थी। धीरे धीरे उसे सब पता चल गया। शीना की माँ की जब मौत हुई तो उसकी उम्र बस सात आठ साल ही थी। दरअसल प्रसव के दौरान ही उसका नवजन्मा भाई और माँ दोनों ही चल बसे। घर में मातम छा गया। दादी ने दोनों को संभाला। बहुत मुश्किल से उसने अपने बेटे को दूसरी शादी के लिए राजी किया तो स्नेहा घर में आई। दो साल बाद ही दादी चल बसी, मगर जाते जाते उसका मन शांत था कि बेटे का घर बस गया था। स्नेहा की उमर शादी के समय बाईस साल की थी, तो शीना लगभग सोलह साल की।

ग़रीब घर से थी, लेकिन बहुत अच्छी लड़की थी। उसने शीना को माँ का प्यार देने की पूरी कोशिश की, मगर शीना कभी उसके नज़दीक नहीं आ पाई।

यह भी नहीं कि शीना का स्नेहा से कोई झगड़ा था, पंरतु न जाने उसके मन में क्या बात थी कि वो स्नेहा से घुलमिल नहीं पाई। सौतेलापन कहो या उम्र का कम फ़ासला, बातें तो दोनों ही थी। इस बार कालिज में उसका पहला साल था। अच्छे अंकों से उसने सीनियर सैकेंडरी पास किया था। शीना के पिता गौतम की बढ़िया सरकारी नौकरी थी, स्नेहा से काफी बड़े थे पर वो ज्यादा उम्र के लगते नहीं थे। उम्र का फ़ासला होते हुए भी स्नेहा और गौतम की जोड़ी बेमेल नहीं लगती थी । घर में किसी चीज की कमी नहीं थी। पहली पत्नी और बेटे का गम तो था पंरतु किस्मत के आगे तो किसी का वश नहीं चलता। और फिर होनी को कौन टाल सकता है। अब सबसे अच्छी बात यह थी कि स्नेहा का स्वभाव बहुत अच्छा था और और जल्दी ही अनुज का जन्म हुआ तो पुराने ज़ख़्म धीरे धीरे भरने शुरू हो गए थे। शीना अपनी पढ़ाई में मस्त रहती, स्नेहा से उसकी बात कम ही हो पाती। उसने कभी अनुज को गोद में नहीं लिया था। वो तो बच्चा था, बचपन में उसकी और प्यार से बाँहें फैला देता था, मगर शीना चुपचाप यहाँ वहाँ हो जाती।

गौतम ने दो चार बार उसे समझाने की कोशिश की परन्तु अब उन्होनें सब कुछ समय पर ही छोड़ दिया था। वो तो इस बात से ही संतुष्ट थे कि घर में कोई क्लेश नहीं होता। मन में टीस तो थी परन्तु क्या करते। शीना की एक सगी मौसी और मामा थे। आना जाना लगभग ना के बराबर ही था, जब अपनी बेटी ही न रही तो जाने का मन भी कहाँ होता है। मगर शीना की मौसी रितु उसे बहुत प्यार करती थी। शीना में उसे अपनी बहन नजर आती। दोनों में बहुत प्यार था। शीना भी मौसी से लगभग हर बात शेयर करती। मधुलिका को स्नेहा से बहुत लगाव सा हो गया था। स्नेहा निशछल स्वभाव की थी। वो मधुलिका को दीदी कह कर बुलाती। स्नेहा के दो छोटे भाई थे, कोई बहन नहीं थी, लेकिन मधुलिका के रूप में जैसे उसे बहन ही मिल गई थी। कहते है कि अच्छे दोस्त किस्मत से ही मिलते है। भगवान जिन्हें रिश्तेदार नहीं बनाता, उन्हें दोस्त बनाता है। वैसे भी दोस्त हो या रिश्तेदार बात तो दिल मिलने की है।

रितु तो शीना के घर नहीं आती थी, उसे वहाँ आकर अपनी बहन की याद सताती, जो कि स्वाभाविक ही था। गौतम तो चाहता था कि शीना के ननिहाल में आना जाना रहे पर ये हो न सका। शीना के नानी नाना तो पहले ही नहीं थे, मामी को कोई लगाव नहीं था तो मामा ने भी कोई ध्यान नहीं दिया। वैसे भी वो अपने परिवार में व्यस्त थे। जब से सरकार ने बेटियों को जायदाद में हिस्सा लेने का हक दिया है, रिशतों में कई बार तनाव देखने को मिलता है। शीना दो बार रितु मासी के पास हो आई थी, उसकी बेटी भी लगभग शीना की उम्र की ही थी, उससे भी उसकी अच्छी बनती थी, रितु में उसे माँ का अक्स दिखता था। स्नेहा के मायके वाले एक तो काफी दूर किसी गाँव में रहते थे, उनका आना जाना तो न के बराबर ही था।

शीना की बी. काम हो गई तो उसने कम्प्यूटर कोर्स ज्वाईन कर लिया। गौतम की इच्छा थी कि वो एम. बी. ए. करे, परन्तु वो नौकरी करने के साथ साथ पढ़ाई करने की इच्छा भी रखती थी। दरअसल शीना को अब अपने ही घर में घुटन महसूस होने लगी थी। वो घर से दूर स्वंछद वातावरण में रहना चाहती थी। जहाँ वो रहते थे, वो भी अच्छा ख़ासा शहर था, मगर महानगर नहीं था। जल्दी ही शीना को मुंबई से नौकरी की आफर आई। गौतम बेटी को इतनी दूर अकेला भेजने के हक में नहीं थे, परन्तु शीना को मना भी नहीं कर सके। स्नेहा और मधुलिका की दोस्ती का स्नेहा को एक ख़ास लाभ था और वो ये कि शीना और मधुलिका के भी अच्छे रिश्ते थे। माँ का स्थान तो दुनिया में कोई भी नहीं ले सकता, मगर फिर भी शीना मधुलिका की बहुत इज्जत करती थी। मधुलिका के बेटे भी उसे अपनी बहन समान ही मानते थे। जब शीना का मुंबई जाने का पक्का हो गया तो स्नेहा के मन में भी हलचल सी मच गई। सगी माँ की तरह वो उसे कोई उपदेश तो दे नहीं सकती थी, लेकिन मन ही मन चिंतित बहुत थी।

शीना भले ही उसे अपनी माँ न माने परन्तु वो तो उसे बेटी ही समझती थी। अनुज के जन्म के बाद ही उन दोनों ने फैसला कर लिया था कि वो और बच्चा नहीं करेगें। स्नेहा को डर था कि अगर बेटी पैदा हो गई तो उसका प्यार कहीं बँट न जाए। शीना के मुंबई जाने की बात स्नेहा ने जब मधुलिका को बताई तो मधुलिका ने उसे हौंसला देते हुए कहा कि चिंता की कोई बात नहीं। अब

जमाना बहुत आगे निकल चुका है। लड़किया अक्सर ही पढ़ाई, नौकरी या काम के सिलसिले में विदेश तक जा रही है, ये तो फिर भी अपना ही देश है, और फ़्लाइट से समय भी कितना लगता है। टेक्नोलोजी ने सब दूरियां मिटा दी हैं, मधुलिका ने स्नेहा से वायदा किया कि वो अपनी और से शीना को कुछ उंचनीच तरीके से समझा भी देगी।

मुंबई जाने का सोचकर ही शीना को तो पंख लग गए थे। पापा से दूर जाने का दुख तो था, परन्तु घर के पिंजरे से आज़ाद होने की खुशी ज्यादा थी। उसने रितु मासी को भी सब बता दिया था। जाने से एक दिन पहले उसने शिष्टाचार के नाते मधुलिका से मिलना भी जरूरी समझा। मधुलिका ने बातों ही बातों में उसे जमाने की उंच-नीच समझाते हुए ये जरूर कहा कि लडकों से दोस्ती सीमा में ही रखनी चाहिए। भले ही दुनिया चाँद पर पहुँच गई है। हमारा समाज अलग ही नजरिया रखता है। औरत की इज्जत काँच के समान है, ज़रा सी भी तरेड़ जिंदगी भर का दाग बन सकती है। अपनी और से ऐसी ही दोचार बातें और भी समझा दी। शीना ने मुस्कुराते हुए मधुलिका का हाथ पकड़ कर बस इतना ही कहा, चिंता न करो आंटी, सब ठीक है, और हाँ, आपकी बातों का मान और ध्यान दोनों रखूँगी। "टच में रहना बेटा", मधुलिका ने गले मिलते हुए कहा। जरूर मधु आंटी, शीना उसे मधु आंटी ही कहती थी।

पहली बार हवाई जहाज़ में बैठना और मुंबई जैसे शहर में जाकर नौकरी करने का एक अलग ही अनुभव था। गौतम चाहता था कि पहली बार वो साथ जाकर बेटी को छोड़ कर आए मगर शीना ने प्यार से मना करते हुए कहा कि," पापा, आप चिंता न करें, मुझे अपनी राह ख़ुद ही तलाश करने दे, मेरे पास शिक्षा के पंख और आपका और उपर आकाश में तारा बनी मेरी माँ का आशीर्वाद हरदम मेरे साथ है"। मुंबई की जंमी पर पहला कदम रखते ही जैसे उसने खुलकर साँस ली। पंद्रह दिन तक कंपनी की और से रहने के लिए गैस्ट हाउस का इंतज़ाम था। कंपनी का माहौल भी काफी अच्छा था। जल्दी ही उसकी दोस्ती तान्या से हो गई। तान्या के पास वन बैडरूम फ़्लैट किराए पर था। घर के सिवाय मुंबई में सब कुछ मिलना आसान है। तान्या को भी एक रूम मेट की तलाश थी। शीना की मुश्किल भी आसान हो गई। फ़ोन पर शीना की गौतम से अक्सर बात होती पर स्नेहा और अनुज से विडियो काल हाय हैलो

तक ही सीमीत थी, पहले भी उसकी स्नेहा से काम की बात ही होती थी। अनुज अब कुछ कुछ समझने लगा था, पर था तो बच्चा ही।

छः महीने बाद तान्या की मँगनी अपने एक सहकर्मी से ही हो गई, शादी भी जल्द ही होने वाली थी। बात तो बहुत खुशी की थी, मगर शीना को अपने लिए नया आशियाना ढूढ़ना पड़ा, जो कि बहुत मुश्किल काम था। बड़े शहरों का रहन सहन, लाईफ़ स्टाइल अलग ही होता है, और शीना पूरी तरह उसमें रच बस गई थी। एक बार भी घर वापिस नहीं आई। गौतम ही एक बार उसे मिलकर आए। इसी बीच शीना के मौसा जी चल बसे। रितु मासी के पास दो दिनों के लिए वो गई। रितु मासी की एक ही बेटी थी जो कि उन्होनें हायर स्टडीज़ के लिए अमेरिका भेजी हुई थी। मौसी को ढ़ाढ़स देकर शीना वापिस आ गई। गौतम का जाना भी हुआ था, परन्तु वहाँ शीना और गौतम का मेल नहीं हुआ। शीना के पास घर बदलने की समस्या थी। उसकी एक सहकर्मी की मदद से उसे एक जगह मिल तो गई, वहाँ तीन बैडरूम थे और लड़कियां लड़के दोनों ही रहते थे।

शीना को अब लडकों के साथ बातचीत में कोई संकोच नहीं था, मगर एक ही फ़्लैट में रहना थोड़ा अजीब भी लगा, परन्तू एक बार वहाँ रहना मजबूरी थी। तीन अटैचड बाथरूम बैडरूम, एक हाल और किचन और बालकनी भी थी, कुल मिलाकर घर अच्छा था। छः सात लोग थे वहाँ पर। एक बैडरूम में दो लड़कियां तो आराम से रह लेती, लड़के कई बार हाल में ही पसर जाते। अब गुजारा तो करना ही था। वैसे भी सब लोग काम में व्यसत रहते, छुट्टी वाले दिन कोई घूमने निकल जाते तो कोई घर भी चले जाते। खाने पीने का भी कुछ इंतज़ाम था। परन्तु शीना ने ये बात अपने घर पर नहीं बताई थी। वो जानती थी कि गौतम उसे लड़कों के साथ रहने की इजाज़त कभी नहीं देगें। लेकिन उसने रितु मासी को बता दिया था। रितु को भी उसका इस तरह लड़कों के साथ रहना अच्छा नहीं लगा, परन्तु शीना की मजबूरी को देखते हुए उसने जल्दी ही उसे घर बदलने की हिदायत दे डाली थी।

पहले पहल तो शीना ने घर तलाश करने के लिए एजेंट को बोला मगर कहीं सेटिंग हुई नहीं। कहीं किराया ज्यादा तो कहीं दूरी, कोई एरिया अच्छा नहीं तो कहीं से सीधी लोकल बस या ट्रेन नहीं। मुंबई वालों की आधी जिंदगी तो

आने जाने में ही निकल जाती है। शीना के साथ रहने वाले दो लोग ऐसे भी थे, जो कहने को तो मुंबई वासी थे, मगर घर पहुँचने में तीन घंटे और दो तीन जगह बस ट्रेन बदल कर जाना पड़ता। इसलिए वो यहाँ किराए पर रह रहे थे, आफिस से दूरी काफी कम थी। अब सब लोग आपस में घुलमिल गए थे तो शीना ने भी घर बदलने का मूड बदल दिया था। एक साल से भी उपर हो गया था। गौतम के बहुत कहने पर और मधुलिका ने भी कई बार कहा तो वो दीवाली पर घर हो आई थी। शीना पहले से भी कुछ अलग थी, मगर अब तो उस पर मुंबई का रंग चढ़ चुका था। चाल ढ़ाल, कपड़ों का स्टाईल, इंग्लिश बोलनी भी खूब आ गई थी। एक हफ़्ता रह कर वो वापिस चली गई।

मधुलिका के पति भले ही बिज़नेसमैन थे, परन्तु वो घूमने के बहुत शौकीन थे। लगभग वो हर साल ही कहीं न कहीं घूमने जाते। अब दोनों लडकें पढ़ाई में व्यसत थे, तो वो दोनों ही चले जाते। इस बार उनका मुंबई, पूना और आसपास के एरिया में घूमने का प्रोगराम था। मधुलिका ने शीना को फ़ोन पर बताया अपने मुंबई ट्रिप के बारे में, मगर शीना ने न मिलने का कोई बहाना बना दिया। कुछ तो मिलने की सैंटिग नहीं हो पाई और कुछ शीना नहीं चाहती थी कि उसके मुँह से रहने के बारे में कोई बात निकल जाए। वहाँ पर तो अक्सर ही लड़के लड़कियां बिंदास घूमते है, दिन रात में कोई फ़रक ही नहीं। तभी तो कहते है कि मुंबई तो सोती ही नहीं। वीकैंड पर शीना के कुछ साथियों का लोनावाला का प्रोगराम बना। इत्तेफ़ाक़ देखिए कि जिस होटल में मधुलिका और उसके पति ठहरे हुए थे, वहीं पर इन्की पार्टी थी। डाईनिंग हाल में मधुलिका को शीना दिख गई। छोटे छोटे कपड़ो वाली लड़कियां और लड़के, जम कर मस्ती और हाथों में गिलास। मधु तो जैसे भागकर शीना की और जाने को हुई ही थी कि उसके पति ने उसे खींच कर वापिस कुर्सी पर बिठा दिया, और धीरे से कुछ कहा।

मधु भी शांत होकर बैठ गई, जल्दी ही वो दोनों खाना खाकर वहाँ से निकल गए। शीना की नजर उन पर नहीं पड़ी थी। मधु का मन अगले दिन तक अंशात रहा, परन्तु वो क्या कर सकती थी, उसने अपने मूड को ठीक कर लिया ताकि उनका ट्रिप खराब न हो। वापिस आकर उसने अपने मन की बात स्नेहा से शेयर की। स्नेहा का चिंतित होना स्वाभाविक था परन्तु उसे समझ नहीं आ

रहा था कि क्या करे। आज तक उसकी और गौतम की शीना को लेकर कोई बात कम ही होती थी और स्नेहा ने कभी भी शीना की कोई बुराई नहीं की थी। वैसे कोई बुराई लायक बात थी भी नहीं, दोनों की आपस में टयूनिगं नहीं थी तो लड़ाई भी नहीं थी। लेकिन मधु ने जो बताया, उससे वो सोच में पड़ गई थी। मौका देखकर उसने गौतम से कहा कि दो साल हो गए शीना को नौकरी करते, उम्र भी हो गई है, उसकी शादी के बारे में सोचो। गौतम के मन में भी कई दिनों से यही ख़्याल आ रहा था, लेकिन काम की व्यस्तता के चलते वो बात ही नहीं कर पाया। एकदम से उसे अपनी पहली पत्नी की याद आ गई, अगर आज वो होती तो वो भी यही कहती। कमी तो स्नेहा में भी नहीं थी, मगर सौतेलेपन का ठप्पा ही बहुत था।

उधर शीना अपनी ही दुनिया में मस्त। गौतम ने उससे फ़ोन पर शादी की बात की तो वो हंस कर बोली, पापा, इतनी भी क्या जल्दी है, हो जाएगी शादी, और दो चार बातें करके फ़ोन रख दिया। गौतम अपने आप को असहाय से महसूस कर रहे थे, कैसे समझाए लड़की को। तभी उन्हें रितु का ख़्याल आया। उन्होंने यह ज़िम्मेवारी रितु को ही सौंपने की सोची और उसे फ़ोन कर दिया। पति की मृत्यु का सदमा, और उसका अकेलापन, पंरतु वो हिम्मतवाली औरत थी। आर्थिक रूप से उसे कोई कमी नहीं थी और बेटी प्रीति भी पढ़ाई में होशियार थी। अभी प्रीति को दो तीन साल अमेरिका में और रहना था, पढ़ाई के लिए। ये भी पता नहीं कि वो वापिस आती है या वहीं पर ही सैटल होती है।

रितु की बात शीना से होती ही रहती थी। अबके बार जब बात हुई तो उसने भी शादी की बात चला दी। शीना समझ गई कि पापा ने ही रितु मासी को कहा होगा। रितु ने तो इतना भी कह दिया कि मैं भी अपने दोस्तों रिशतों में देखती हूँ, अगर तुझे कोई पंसद है तो भी बता दे। वो फिर छेड़ते हुए बोली, आज कल तो कम्प्यूटर बाबा में ही सब कुछ है, वहीं देख ले। आप भी क्या रितु मासी, और फिर उसने शर्माते हुए मोबाईल बंद कर दिया। गौतम के मन में न जाने कैसी शंका होने लगती। अब उसे सच में लगने लगा कि बेटी का बाप होना कितनी बड़ी ज़िम्मेवारी है। अपने आसपास तलाश उसकी भी जारी थी। उधर शीना भूल ही गई कि उसे घर की तलाश है, अब उस अपार्टमैंट में दो लड़कियाँ और चार लड़के थे, बीच बीच में सबके दोस्त भी आते जाते रहते।

कोई रोक टोक तो थी नहीं। मकान मालिकों को तो किराए से मतलब होता है, और बड़े शहरों में ये सारे काम ब्रोकर ही करते है।

जबसे रितु को ये पता चला कि उसने घर नहीं बदला तो वो उसके पीछे ही पड़ गई थी। "बेटी, लड़कियों के सिर पर मायके या ससुराल की छत होनी जरूरी है, पढ़ाई, नौकरी के साथ साथ सही समय पर शादी, परिवार भी जरूरी है"। अरे मासी, आप भी किस जमाने की बातें कर रही हो, छत, परिवार। आजकल छतरियों का जमाना है, रंग, बिरंगी, धूप, बारिश, सब से बचाती है, और दोस्त मित्र भी परिवार है, बल्कि परिवार से बढ़कर है। अब रितु उसे कैसे समझाए, उसके मन में प्रीति की भी चिंता हो आई। उसने अपने मन को समझाया और काम में लग गई। पिछले दो दिनों से शीना की तबियत कुछ ठीक नहीं थी, उसकी रूममेट रूही ने पूछा भी कि वो आफिस नहीं जाकर आजकल, तो उसने कहा कि, वैसे ही आराम करने का मन है, थकान सी हो रही है। रूही उसकी रूममेट थी, परन्तु उनकी बात कम ही हो पाती थी। उनका आफिस भी अलग था, और वो दो महीने पले ही वहाँ आई थी।

शीना के लड़के, लड़कियाँ दोस्त तो बहुत थे, मगर बहुत पक्की दोस्ती किसी से भी नहीं थी। मुसीबत में ही अपनों की याद आती है। तीसरे दिन सवेरे उसने सोचा कि पहले डाक्टर के पास चैकअप करवा कर फिर आफिस चली जाएगी। कभी ज़रूरत ही नहीं पड़ी डाक्टर की, एक दो बार थोड़ी बहुत तबियत खराब हुई भी तो नैट से पढ़ कर या फिर मैडीकल स्टोर से दवाई ले ली, लेकिन आज उसे लगा कि डाक्टर को दिखा देना चाहिए। नैट में देखा और पहुँच गई। लेडी डाक्टर ने जो उसे बताया, उसे सुनकर तो उसका सिर घूम गया, पैरों तले ज़मीन निकल गई। चार महीने की प्रैगनैसीं। किसी तरह वो घर पहुँची। आफिस में छुट्टी के लिए फ़ोन कर दिया। किसको बताए, किससे बात करे, उसे कुछ याद नहीं, ये सब कैसे कब हुआ। घूमने फिरने, पार्टियों में इतनी मगन हो गई कि उसे कुछ होश ही नहीं। उसकी किसी लड़के के साथ प्यार मुहब्बत वाली कोई दोस्ती नहीं, पर वैसे बहुत दोस्त थे। साथ रहने वाले भी, आफिस वाले भी, पार्टियों में मिलने वाले भी। दिखावे के लिए तो वो जूस ही लेती थी, पंरतु उसमें क्या मिला होता। उफ़्फ़, ये किस मोड़ पर आ गई वो। मन तो किया, कुछ खा

कर खत्म करे ये किस्सा। मगर पापा का ध्यान, और अब उसे बाकी परिवार भी याद आया।

तुरंत रितु मासी को फ़ोन लगाया, और उसे आने को बोला। ये भी कहा कि जरूरी काम है, प्लीज़ किसी को न बताए। रितु दौड़ी चली आई और सब सुन कर सुन्न पड़ गई। और तो कुछ सूझा नहीं, अगली फ़्लाइट से ही वो उसे अपने साथ भोपाल ले आई। शीना की तो आँख मिलाने की हिम्मत भी नहीं थी। समझ नहीं आ रहा था क्या करें। पापा की बीमारी का बहाना बना कर नौकरी से तो रिजाईन कर दिया। अंदर ही अंदर रितु का बी.पी. बढ़ रहा था, परन्तु शीना को हौसला देना भी जरूरी थी। शीना का तो खाना पीना ही छूट गया, चेहरा ऐसे जैसे बरसों की बीमार। रितु की एक जानकार लेडी डाक्टर थी। उसके पास गए तो अबार्शन की बात करने मगर एक तो उसने साफ मना कर दिया, दूसरा उसने कहा कि कम्लीकेशनसं बहुत है। कुछ दिन और निकल गए। गौतम का फ़ोन आता तो वो काम का बहाना बना कर मैसेज डाल देती। किस मुँह से पापा से बात करे। कितना विश्वास था उन्हें अपनी बेटी पर।

अगर किसी से सचमुच ही उसकी दोस्ती होती तो वो पापा से सर उठाकर भी बात कर सकती थी। समय निकलता जा रहा था। आख़िर रितु ने गौतम को अपने किसी काम का बहाना करके बुलाया। जब सारा किस्सा पता चला तो सर पकड़ कर बैठ गए, मुँह से जैसे आवाज़ निकलनी बंद हो गई। अगले दिन ही वापिस चले गए। स्नेहा को बताए बिना कोई चारा ही नहीं था। यह सुनकर स्नेहा चुप रही, जब गौतम कुछ संभले तो उसने मधुलिका ने जो उसे बताया था , वो सब बताया। इस पर वो स्नेहा पर बरस पड़े कि उसने उसे बताया क्यों नहीं, वो शायद तभी सँभल जाते। अभी तो उनहें और भी बहुत कुछ पता नहीं था जैसे कि वो वहाँ कैसे रह रही थी। उन्हें आत्मग्लानि हो रही थी कि उन्होनें कभी घर जा कर देखा क्यों नहीं कि वो कहाँ किसके साथ रह रही है। विश्वास करना अच्छी बात है, परन्तु उन्होनें तो शीना पर अंधविश्वास किया। सौतेलेपन के टैग के कारण स्नेहा बेचारी तो वैसे ही कुछ भी कहने से डरती थी।

गौतम को कुछ नहीं सूझ रहा था। स्नेहा भी क्या करे। गौतम से पूछ कर उसने मधुलिका से सलाह करने की सोची। स्नेहा जानती थी कि मधुलिका बहुत सुलझी हुई औरत है। दु:खी तो मधुलिका भी बहुत थी, शीना से उसे बेटी

जैसा स्नेह था। जब से वो मुंबई से आई, उसके मन में रह रह कर शंकाएँ तो उठ रही थी, पर किसी दूसरे के घर में वो कैसे दखल दे सकती थी। दो तीन दिन सोचने के बाद मधुलिका ने एक योजना बनाई। मधुलिका , रितु, स्नेहा और गौतम की बात हुई। दो चार दिन में यहाँ-वहाँ खबर फैल गई कि स्नेहा पेट से है। अनुज भी दस बारह साल का हो चुका था। गौतम के मुंहलगे सहकर्मी चुहलबाजी से बाज नहीं आए, उम्र तो बेटी की शादी की है। परन्तु गौतम मुस्करा कर रह गए। दिल में सुलगते तूफ़ान को कैसे दिखाते। पीठ पीछे तो ये भी सुनने को मिला कि अब ख़ुद बूढ़ा हो गया तो क्या, बीवी तो जवान है। गौतम ने अपने कान बंद कर लिए थे। वहाँ रितु से बात होती रहती थी। शीना को भी मजबूरियों ने सब सिखा दिया। समय आने पर स्नेहा को भोपाल भेज दिया और सबको यहाँ वहाँ ये बताया कि प्रसव के लिए मायके गई है। कामवाली के साथ साथ मधुलिका ने अनुज और घर का भी ध्यान रखा।

शीना ने प्यारी सी बच्ची को जन्म दिया। एक महीने बाद गौतम तीनों को लेकर वापिस आ गए। शीना में भी आख़िर माँ का दिल धड़क रहा था, लेकिन समाज में नाजायज़ शब्द का मतलब वो अच्छे से जानती थी। अब स्नेहा और गौतम ही उसके माँ बाप थे। अब वो ये भी समझ चुकी थी कि नाजायज़ बच्चे नहीं , नाजायज़ तो माँ बाप होते है, परन्तु हमारा समाज अभी इस सोच को समझने से कोसों दूर था। शीना अब भोपाल में ही थी। रितु मासी ने उसे छत और छतरी का अंतर समझाया था, परन्तु वो तो और ही हवाओं में थी। क़ुदरत की और से लड़के और लड़की में जो अंतर है, उसका ध्यान तो रखना ही होगा। और फिर अपने तो अपने ही होते है। आज जो कुरबानी सौतेली मां ने दी वो सगी नहीं दे सकती थी। रितु मासी और मधु आंटी की तो दिल से कर्जदार बन चुकी थी। पापा से बात करने की तो वो हिम्मत ही नहीं कर सकी। काम धंधा, नौकरी, पढ़ाई सब बराबर परन्तु लक्ष्मण रेखा की सीमा जरूरी है। मुंबई वापिस वो जाना नहीं चाहती थी।

उसने भोपाल में ही नौकरी ढूढनी शुरू कर दी। कुछ दिन पहले रितु के ससुराल से रिश्ते में देवर का बेटा प्रशांत वहां नौकरी में ट्रासंफर हो कर आया। घर मिलने तक वो रितु के घर में ही रूका। शीना भी वहीं पर थी, सादगी भरी शीना उसे पहली नजर में ही भा गई। मुंबई की शीना में और भोपाल की

शीना में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ था। अपने पहले शहर की शीना और अब की शीना की सोच में बहुत अंतर आ चुका था। विचारों से बहुत मैच्योर हो चुकी थी। किस्मत ने बहुत बड़ा घाव दिया था, जिस पर मरहम तो लग गई थी, परन्तु ज़ख़्म बहुत गहरा था। दस दिन तक प्रशांत रितु के घर ही रहा, शीना से भी बात होती, परन्तु वो हूँ हाँ में ही जवाब देकर यहाँ वहां हो लेती। प्रंशात को घर मिल गया था, शीना को भी नौकरी मिल गई थी। शीना अब रितु पर और बोझ नहीं बनना चाहती थी, और अमेरिका से प्रीति भी आने का प्लान बना रही थी। परन्तु रितु उसे जाने नहीं देना चाहती थी।

प्रशांत बीच बीच में आता रहता था। एक महीने बाद उसके ममी पापा आए तो रितु से मिलने आ गए। छुट्टी का दिन था, शीना घर पर ही थी।शीना उन्हें भी पंसद आ गई थी। दरअसल वो प्रशांत के कहने पर ही आए थे। रितु ने कहा कि वो शीना और उसके घरवालों से पूछकर बताएगी। शीना ने जब सुना तो वो सोच में पड़ गई। छत की तलाश तो उसे भी थी और प्रंशात में कोई अवगुण भी नहीं था, लेकिन क्या वो उसे उसके अतीत के साथ स्वीकार करेगा। गौतम से बात की तो उसने तो सब स्नेहा पर छोड़ दिया था। शीना, स्नेहा, रितु, मधुलिका, गौतम के बीच ही ये राज दफ़्न हो चुका था। डाक्टरों के लिए तो ऐसे क़िस्से आम सी बात है, वैसे भी वो रितु की क़रीबी थी। शीना प्रशांत को सब बताना चाहती थी। वो झूठ के साथ अपनी जिंदगी की शुरूआत नहीं करना चाहती थी।

प्रशातं तो शीना का दीवाना था, बड़ी बहन शादीशुदा थी, माँ बाप काफी समय से प्रशांत को शादी के लिए मना रहे थे, लेकिन उसे कोई पंसद ही नहीं आ रही थी। यहाँ आकर उसकी सुई शीना पर ऐसी अटकी कि हिलने का नाम ही नहीं ले रही थी। रितु ने एक शाम दोनों को बाहर भेज दिया, ताकि शीना जो उसे बताना चाहे बता दे। शीना ने बिना किसी लाग लपेट के सब बता दिया, सिरफ ये नहीं बताया कि उसकी बेटी ही अब उसकी बहन है। इतना झूठ बोला कि बच्चा मृत पैदा हुआ। जिस झूठ से किसी का नुक्सान न हो उसे बोलने में कोई बुराई नहीं। वो नहीं चाहती थी कि कल को कोई और विवाद खड़ा हो। प्रशांत को यह सुनकर कुछ फ़रक नहीं पड़ा। वो उसका हाथ पकड़ कर बोला,

पहले मुझे तुमसे प्यार था, ये सच सुन कर तो तुम्हारा सम्मान मेरे लिए और भी बढ़ गया है।

शीना के अपने शहर में धूमधाम से शीना की शादी हुई। विदाई के वक्त वो स्नेहा के गले लगकर इतना रोई कि पिछले सारे गिले शिकवे बह गए। मधु और रीतु अब उसकी दो मौसियां यानि की माँ जैसी थी। एक छत को छोड़कर वो दूसरी छत में पनाह लेने जा रही थी। भले ही वो एक मिसाल थी परन्तु सारी उम्र उसे छतरी से नफ़रत रही। बारिश में भी उसने कभी छतरी नहीं ख़रीदी।

तार-तार होते रिश्ते

वैभव आज थोड़ा जल्दी घर आ गया था, और दोनों हाथों में सामान ही सामान। फल, सब्जियाँ, मिठाई और भी न जाने क्या क्या। पानी का गिलास लेकर तृप्ता आई तो बिना कुछ बोले बस मुस्करा कर रह गई। वो जानती थी कि आज मुंबई से ईशा दीदी दोनों बच्चों आर्यन और आशिमा के साथ आ रही है। मुबंई से देहली तक तो वो हवाई जहाज से ही आती थी। लेकिन आगे घर तक पहुंचने के लिए दो घंटे का सफर बस या टैक्सी से तय करना होता था। ईशा चाहती तो टैक्सी से भी आ सकती थी लेकिन भाई वैभव हमेशा उसे हवाई अड्डे के बाहर खड़ा ही मिलता। और स्वंय अपनी गाड़ी से लेकर आता। ईशा ने कभी कभी कहा भी कि वो आ जाएगी मगर वैभव कहां मानने वाला था। ईशा को ससुराल जाने में भी वहां से तीन घंटे लगते थे, जब भी जाना होता वो अपनी दुकान से किसी को गाड़ी देकर साथ भेज देता। वैभव का स्टेशनरी का बहुत बढ़िया काम था।

काम तो वैभव के पिताजी का भी स्टेशनरी का ही था, लेकिन ठीक-ठाक सी दुकान थी जो कि वैभव ने बहुत बड़ी कर ली और अब वहां पर फोटोस्टेट के इलावा और भी नई तकनीक के बहुत से काम होते थे। वैभव का बड़ा भाई सौरभ बहुत पहले से ही विदेश में सैटल हो गया था। वहीं पर गोरी मेम से शादी भी कर ली थी। दो बच्चे थे। पिताजी तो कई साल पहले ही गुजर गए, मां भी पांच साल पहले प्रभु चरणों में समा गई थी। वैभव भले ही छोटा था मगर बड़े होने की सारी जिम्मेवारियां उसी ने पूरी की थी। सौरभ पढ़ाई में होशियार था, वजीफे पर अमेरिका गया तो फिर वहीं का हो गया। मां के मरने पर भी नहीं आया। सच-मुच छुट्टी नहीं मिली या आने की नीयत नहीं थी। वैसे तो ले देकर जायदाद के रूप में एक घर ही था और छोटी सी दुकान, परन्तु वैभव के पिता बहुत समझदार और दूरदर्शी थे, वो सौरभ को समझ चुके थे, बाद में कोई विवाद न हो इसलिए उन्होंने अपनी वसीयत में पहले पत्नी और बाद में वैभव के नाम ही सब लिख दिया था। उनके विचारानुसार सौरभ की पढ़ाई, विदेश जाना और ईशा की पढ़ाई शादी पर बहुत खर्च हो चुका था। वैभव

के हिस्से तो कम ही आया होगा। सौरभ पिताजी के होते एक बार पत्नी और एक बच्चे के साथ आया था, फिर कभी इधर का रूख नहीं किया। भाई बहन में बहुत कम बातचीत होती थी। पढ़ाई में वैभव भी अच्छा था, मगर मां की इच्छा का मान रखते हुए बी. काम. करने के बाद वो पिताजी के बाद दुकान पर ही बैठ गया। मां और पत्नी ने भी बहुत साथ दिया, तभी तो आज दुकान का नाम अपने शहर के इलावा आसपास भी मशहूर था।

दरवाजे पर गाड़ी रूकने की आवाज सुनकर तृप्ता समझ गई कि ननद रानी आ गई है। भागकर बाहर गई और गले लगकर अत्यंत गर्मगोशी से सभी का स्वागत किया और मीठी सी शिकायत भी की, की रमन जीजा जी को भी साथ लाया करो। सब जानते थे कि रमन किसी मल्टीनेशनल कम्पंनी में बहुत बड़े ओहदे पर है। बहुत व्यस्त रहता है, कभी कंपनी के काम से देहली आना होता तो वो अपने घर और ससुराल भी चक्कर लगा जाता था। शादी ब्याह या कभी कभार किसी विशेष उत्सव को छोड़कर ईशा, रमन बच्चों सहित इकट्ठे कम ही आए होगें। वैभव के दो जुड़वा बेटे हुए, नाम रखा लव, कुश। लव का पढ़ाई से ज्यादा ध्यान बिजनेस में देखते हुए उसे ग्रेजुऐशन के बाद दुकान संभालने का काम ही सौंपा गया। अब बाहर के काम वो देखता और दुकान का वैभव। कुश ने रूड़की से इंजीनियरिंग की पढ़ाई की।

इस बार दस दिन तक ईशा वहां रही। शहर छोटा था, परन्तु आजकल हर जगह सहूलतें हैं। आसपास काफी हरियाली और कुदरती नजारे और कुछ किलोमीटर की दूरी पर बहुत सुदंर नहर के आसपास टूरिस्ट रिजोर्ट भी था। अक्सर लोग शहर की भागदौड़ से दूर वीकएंड पर छुट्टी बिताने यहां आ जाते थे। भले ही उनके अपने खेत नहीं थे मगर वैभव की बहुत जान पहचान थी तो दो बार तो उनका आसपास वहां भी घूमना हो गया। वहां घने पेड़ों के नीचे चारपाई पर लेटकर ठंडी ठंडी हवा का आंनद लेना, कभी कभी मोरों को नाचते देखना और पेड़ पर मोटी रस्सी के झूले का आंनद लेना तो आशिमा को बहुत पंसद था। साथ में घर के बने बढ़िया खाने का आंनद। दस दिन कैसे बीते पता ही नहीं चला।

मांजी के होते भी ईशा का बहुत ध्यान रखा जाता मगर तृप्ता अब उससे भी ज्यादा ध्यान रखती ताकि उसे ये न लगे कि मायका माँ से ही होता है। हमेशा

की तरह जाते समय बहुत से नेग, नकद और घर की बनी मठरियां, आचार वगैरह भी साथ बांध दिया जाता। वो तो ऐरोप्लोन से सामान एक निश्चित सीमा व वजन से ले जाना होता है, नहीं तो तृप्ता न जाने क्या क्या बनाकर देती। दोनों बच्चे सोलह साल का आर्यन और अठारह साल की आशिमा दिन भर मामी के आगे पीछे घूमते और तरह तरह के खाने की फरमाईशें करते। ईशा वैसे तो वैभव से छोटी थी परन्तु उसकी शादी पहले हो गई थी। वैभव की शादी बाद में हुई परन्तु लव कुश का जन्म पहले हुआ जबकि आर्यन आशिमा का बाद में। बच्चों का जन्म तो मुंबई में हुआ, परन्तु बाद में ईशा कई कई महीने मायके में ही रहती और खूब आराम करती, मौज से खाती-पीती, तृप्ता खुशी खुशी उसका और बच्चों का ध्यान रखती। उसके अपने लव कुश की फरमाईश भले ही न पूरी हो, ईशा के साथ साथ आर्यन, आशिमा का पूरा ध्यान रखा जाता।

मां के जाने के बाद भी ईशा पहले की तरह हर साल ही आती, कई बार तो बीच में रिश्तेदारी में किसी उत्सव या दिन त्यौहार पर भी आना हो जाता। तृप्ता और वैभव ने कभी भी अहसास नहीं होने दिया कि मायका मां से ही होता है। समय के साथ बच्चे बड़े हो गए। कुश की डिग्री पूरी होते ही उसकी नौकरी मुंबई में लग गई। जैसा कि अक्सर होता है, कुछ दिन कम्पनियां ठहरने के लिए गैस्ट हाऊस में जगह दे देती है, बाद में रहने का खुद से इंतजाम कर लिया जाता है। ईशा और बच्चें अक्सर मामा मामी को मुंबई आने के लिए कहते थे, लेकिन घर गृहस्थी की व्यस्तता के चलते तृप्ता तो कभी जा नहीं पाई और वैभव एक दो बार गया भी तो एक दो घंटे मिलकर आ गया। कुश जब मुंबई जाने को तैयार हुआ तो उसने मां तृप्ता को भी साथ चलने के लिए कहा।

तृप्ता को भी मौका अच्छा लगा, एक तो बेटे के साथ का मोह दूसरा ननद भी कई बार कह चुकी थी, रमन जीजाजी भी कई बार मुंबई घूमने को कह चुके थे तो तृप्ता ने साथ चलने का मन बना लिया। सच तो ये था कि उसने कभी हवाई यात्रा भी नहीं की थी और समुद्र देखने की भी मन में बहुत लालसा थी। तृप्ता बारहवीं पास थी और छोटे शहर से थी मगर गंवार नहीं थी। सलीका, संस्कार, आत्मीयता, सेवाभाव जैसे सब गुण थे। अपनेपन के चलते उन्होंने सोचा कि चलो ईशा को सरप्राईज देते है, तो वो बिना बताए ही लगभग शाम के चार बजे उनके फ्लैट पहुंच गए। दरवाजा खोलते ही ईशा चौंक गई। सामने

भाभी भतीजे को देखकर बजाए खुशी के उसके चेहरे का रंग ही बदल सा गया। फिर भी फीकी सी हंसी के साथ वो गले मिली और कहा कि आने की खबर तो दे देते। तृप्ता तो सोच रही थी कि वो उन्हें देखकर खुशी से उछल पड़ेगी, मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ। सरल स्वभाव तृप्ता को अपनी ही गल्ती लगी कि उन्हें आने से पहले बता देना चाहिए था। चलो मेड चाय-पानी रख गई। रमन तो शहर से बाहर था, कोचिंग क्लासेज़ वगैरह से जब आर्यन, आशिमा वापिस आए तो उनके चेहरे पर भी कोई खुशी दिखाई नहीं दी। औपचारिकतावश नमस्ते कह कर अपने अपने कमरों में चले गए। मौके की नज़ाकत को देखते हुए ईशा ने बात संभालते हुए कहा कि, बच्चे थक कर आए है, फ्रैश होकर आऐगें। वैसे ईशा ने उन्हें मामी के आने की खबर भी दे दी थी।

तृप्ता को छोड़ कर थोड़ी देर के बाद कुश को जाना था। तृप्ता तो ये सोच कर आई थी कि ईशा के साथ खूब मुंबई घूमेगीं। वो साथ में खाने पीने का सामान भी लाई थी। आठ दस दिन रह कर कुश के साथ ही उसे वापिस अपने शहर जाना था। अगले ही दिन कुश फिर वापिस मुंबई आ जाता। लेकिन यहां का माहौल उसे बेगाना सा लगा। उसके घर आ कर मामी, भाभी सी चहकने वाली आवाजें यहां खामोश थी। फिर उसने मन को शांत करते हुए सोचा कि शायद ये उसका वहम है। इतनी जल्दी कुछ भी फैसला लेना ठीक नहीं। गैस्ट रूम में उसके रहने का इंतजाम कर दिया गया। फ्रैश होकर उसने अपना सामान कुछ ठीक किया और आराम करने लगी। ईशा के लिए लाया गया सामान वो उसे पहले ही दे आई थी। तृप्ता शाम के सात बजे तक आराम करती रही। दो घंटे हो चुके थे, कोई उसके पास न आया। वो उठी और आसपास देखा, कोई नहीं था।

उसकी चाय की इच्छा हो रही थी। लंच तो उन्हें हवाई जहाज में ही मिल गया था। यहां पहुचंकर चार बजे चाय पी थी, लेकिन सो कर उठने के बाद वो चाय लेती थी। बच्चों का कमरा भी बंद और ईशा भी कहीं नहीं दिख रही थी। वो रसोई में गई तो मेड बर्तन साफ कर रही थी। पूछने पर पता चला कि ईशा जिम गई है। मेड से सामान पूछ कर उसने खुद ही चाय बना ली और आकर ड्राईंग रूम में पीने बैठ गई, अभी दो घूंट ही भरे थे कि ईशा आ गई, साथ में कुत्ता भी था। तृप्ता को देखकर वो झपटने को हुआ, डर के मारे उसके

हाथ से प्याली छूट गई, चाय सोफे पर बिखर गई और प्याली गिर कर चूर-चूर हो गई। बजाए तृप्ता को संभालने के ईशा ने जोर से गुस्से में मेड को पुकारा और सब साफ करने का आदेश देकर बुड़बुड़ाती हुई कमरे में चली गई। तृप्ता अपने आप को ठगा सा महसूस कर रही थी। उसे यकीन नहीं आ रहा था कि क्या ये वही है, जो उसके पास कितने-कितने दिन रहती है और वो हर रोज उसकी और बच्चों की फरमाईशें पूरी करती है। जरा सा सोफे पर चाय गिरने से उसका इतना मूड खराब हो गया। जब उसके बच्चे छोटे थे तो कितनी धमाचौकड़ी मचाते थे, और तो और लव कुश की हर चीज़ पर अपना हक जमाते और जो भी पंसद आता, साथ ही ले आते।

आखिर वो भी तो बच्चे थे, मगर तृप्ता उन्हें समझा देती। ईशा अक्सर ही वहां आकर उसकी साड़िया पहनती। पिछली बार तो उसकी नई साड़ी ईशा के सैंडल में फंस कर फट गई थी, मगर उसने मुस्करा कर कहा था, "कोई बात नहीं, रफू करवा लेगें" और जब एक बार वैभव की गाड़ी लेकर गई थी तो कितनी बुरी तरह ठोक दी थी, लेकिन किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा, हालांकि पूरी गल्ती ईशा की थी, वो ही गलत तरफ से आ रही थी। तृप्ता को और भी कितनी घटनाएं याद आ रही थी। उसका मन कसैला हो गया, बिना कुछ कहे वो अपने कमरे में आ गई। समझ नहीं आ रहा था कि वो क्या करे। रात के खाने पर मेड ही उसे बुलाने आई, मन तो नहीं था, मगर वो कोई तमाशा नहीं करना चाहती थी, इसलिए चुपचाप आकर खाना खाने बैठ गई। आशिमा और आर्यन भी आए मगर किसी ने आपस में कोई बात नहीं की। किसी तरह चार निवाले गले से उतार कर तृप्ता जल्दी ही उठ कर आ गई। किसी ने उसे एक बार भी नहीं रोका या और खाने के लिए पूछा। एक तरफ गुलाबजामुन पड़े थे, मगर किसी ने उसकी प्लेट में नहीं रखे, जबकि वो उन सबको अपने घर में कितने मनुहार से खिलाती थी। तृप्ता का मन वहां से उड़ जाने को हो रहा था मगर क्या करे, समझ नहीं आ रहा था। क्या शहरों में रहने वाले ऐसे होते है। शायद नहीं, क्योकिं अक्सर उसकी किट्टी मैंबरस अपने घूमने और रिश्तेदारों के किस्से सुनाती थी।

पिछले दिनों ही उसकी एक सहेली अपने पति के साथ आफिस टूअर पर लखनऊ साथ ही चली गई और वो होटल में ठहरे। उसकी रिश्ते की ननद

भी वहीं पर थी। आजकल मोबाईल के चलते खबरें हवा से भी पहले पहुंचती है। उसकी ननंद को जैसे ही उसके आने की खबर मिली, वो तो अपने पति के साथ रात को ही होटल में आ पहुंची और अपने साथ चलने का आग्रह किया। किसी तरह समझा कर उसे वापिस भेजा लेकिन अगले चार दिन वो साथ साथ ही रहे। रिश्तों में गर्माहट आज भी है, लेकिन यहां तो जैसे बर्फ ही जम गई। सुबह जल्दी उठ कर चाय पीने की आदत थी तृप्ता को लेकिन यहां का माहौल देखकर वह कमरे से बाहर ही नहीं निकली। वो जानती थी कि ईशा को देर से उठने की आदत है, लेकिन यहां तो वो उठकर मेड के साथ बच्चों का नाश्ता तैयार करवा रही थी। इसका मतलब सारे नखरे मायके में ही चलते है। वो भी चुपचाप रसोई की और चल दी, बाहर से ही उसे आर्यन की आवाज सुनाई दी, ये मामी यहां क्यूं आई है, हमें बोर करने, और कितने दिन रूकेगी। अभी उसकी बात खत्म नहीं हुई थी कि आशिमा की आवाज सुनाई दी, आज मेरी दो सहेलियां आने वाली है शाम को, प्लीज मामी को अंदर ही रखना गैस्ट रूम में, सलवार कमीज पहने दिखने में ही गंवार लगती हैं। वो आगे भी कुछ बोल रही थी लेकिन तृप्ता सुन न सकी, मगर जाते जाते आर्यन की आवाज में कुछ और शब्द भी कानों में पड़े, अब कुश तो यही मुंबई में रहेगा तो ज्यादा मुंह मत लगाना, ये न हो कि हर हफ्ते यहीं आ धमके।

अभी तृप्ता आंसू समेटती गैस्ट रूम की और जा ही रही थी कि रमन जीजाजी ने अंदर प्रवेश किया, शायद वो देर रात आए थे। "अरे सलहज साहिबा, हमसे मिले बिना ही चल दी, रात देर से आया इसलिए आपको जगाया नहीं, जब से आपके आने की खबर मिली मैं तो बैचेन हो रहा हूं आपसे मिलने के लिए" रमन जी की आवाज सुनकर तृप्ता एकदम सकपका सी गई, मुंह दूसरी तरफ था तो झट से दुपट्टे से आसूं साफ किए और नकली मुस्कराहट से पीछे मुड़कर रमन जी को अभिवादन किया। "अरे मुझे तो आपके आने की इतनी खुशी है कि बता नहीं सकता, आओ बैठो, मिलकर चाय पीते है, और सुनाओ, क्या हाल चाल हैं वहां वैभव के, सुना है कुश की यहां जॉब लगी है, अच्छा है ना, आप सबका यहां आना जाना लगा रहेगा।" रमन जीजाजी बिना ईशा की और देखे अपनी ही धुन में मग्न बोले जा रहे थे।" अरे मैं तो कहता हूं, कुश को अलग घर लेने की जरूरत ही नहीं, हमारे साथ ही आकर रहे, इतना बड़ा फ्लैट है, दो कमरे खाली पड़े है। अरे भई, चाय लाओ, कब से मैं ही बोले जा

रहा हूं, आप भी कुछ बोलो सलहज साहिबा"। रमन जी हमेशा तृप्ता को भाभी न कह कर सलहज साहिबा ही कहते थे। सलहज यानि साले की पत्नी। रमन जी की बातें सुनकर तृप्ता मुस्करा दी। तब तक चाय आ चुकी थी। रमन ने अपने हाथों से कप उठाकर तृप्ता को पेश किया और मिठाई की प्लेट भी आगे बढ़ाई। तब तक ईशा भी आ कर बैठ गई। बच्चों की वैसे तो छुट्टी थी परन्तु वो होबिज़ क्लास के लिए निकल चुके थे। किसी को नहीं पता था कि रसोई में बच्चों की बातचीत को तृप्ता सुन चुकी है।

चाय खत्म होते ही रमन जी उठ खड़े हुए और मीटिंग के लिए तैयार होने चल दिए मगर जाते जाते ईशा को कह गए कि सब तैयार रहें शाम को, चौपाटी घुमा कर लाऐगें इनको और खाना भी बाहर खाऐगें। रमन का स्वभाव हमेशा से ही मिलनसार था, लेकिन ईशा और बच्चे ऐसा करेगें, तृप्ता ने कभी सोचा भी नहीं था। गिरगिट तो यूं ही बदनाम है रंग बदलने के लिए, इंसान तो उससे भी कहीं आगे है। रमन जी के जाते ही तृप्ता उठ कर आ गई और अपना सामान पैक करने लगी। उसने कुश को फोन कर दिया था। अगले दिन की फ्लाईट बुक हो गई थी। वहां वैभव को भी कह दिया था देहली गाड़ी भेजने के लिए, कुछ बताया नहीं बस बहाना सा बना दिया।

दोपहर को कुश को आया देख ईशा कुछ हैरान सी हुई, मगर तभी तृप्ता अपना बैग लेकर बाहर आती दिखी। ईशा के मुंह से निकला, इतनी जल्दी चल दी भाभी, रूक जाओ कुछ दिन, आज शाम घूमने चलेगें समूंद्र किनारे। तृप्ता के मन में तो आया कि एक तमाचा जड़ दे, क्योंकि जब स्वाभिमान को ठेस पहुंचती है तो आदमी अपने होश खो बैठता है और कुछ भी उल्टा सीधा कर देता है। मगर तृप्ता बहुत ही समझदार और सुलझी हुई स्त्री थी, मौके की नज़ाकत को देखते हुए सिर्फ इतना ही कहा, चलती हूं, कुछ काम है, जब कुश यहां घर ले लेगा तो जी भर कर समूंद्र घूमूगीं। उस रात दोनों होटल में रूके क्योंकि फ्लाईट अगले दिन की थी। ईशा शर्मिदां तो बहुत थी, परन्तु तीर कमान से निकल चुका था। अपने हाथों से ही उसने बरसों के रिश्ते तार-तार कर दिए।

अपने अपने हिस्से की धूप

दो साल पहले मेरे एक रिश्ते के मौसा का देहांत हो गया था। भले ही मौसी मेरी माँ की दूर के रिश्ते में बहन थी मगर दोनों में सगी बहनों जैसा प्यार था। इत्तेफ़ाक़ से हमारे घर भी पास पास ही थे। मौसी के पाँच बच्चे, तीन बेटे और दो बेटियाँ और हम भी दो बहने और दो भाई। उस जमाने में पाँच सात बच्चे होना आम बात थी। हम सभी साथ साथ खाते पीते, खेलते कूदते, लड़ते झगड़ते बड़े हुए। समय के साथ साथ सब अपनी अपनी गृहस्थी में रम गए, लड़कियां अपने अपने ससुराल चली गई और दोनों घरों में बहुएँ आ गई। चार साल पहले मेरी माताजी का भी प्रलोकगमन हो गया। हम सभी बहुत दुःखी हुए, पंरतु कोई चारा नहीं होता। पिताजी तो पहले ही जा चुके थे। जाने से पहले दोनों अपनी पारिवारिक ज़िम्मेदारियाँ पूरी कर चुके थे। माँ-बाप की कमी तो कोई पूरी नहीं कर सकता मगर ये दुनिया तो सबके लिए रैन बसेरा है। मेरा एक भाई विदेश सैटल हो गया था और दूसरा अपने उसी घर में रहकर अपना पुश्तैनी बिज़नेस सभांल रहा है। मौसी का भी एक बेटा दूसरे शहर में सैटल हो गया, दूसरा उसी शहर में अलग घर रह कर रह रहा है और तीसरा सबसे छोटा उसी पुराने घर में माँ-बाप के साथ ही रहता है। सरकारी नौकरी में अच्छी पोस्ट पर है। उसकी पत्नी भी नौकरी पेशा है।

बात करते है मौसी की। पंद्रह-सोलह साल की उम्र में ही मौसी की शादी हो गई, शायद चार-पाँच जमात पढ़ी होगी। मौसा जी बीस साल के रहे होगे, दसवीं पास करके सरकारी नौकरी में लगे हुए थे। मौसा जी के पिताजी बहुत कम उम्र में ही स्वर्ग सिधार गए थे,जाहिर है, दो बहनों के बाद पैदा हुए मौसा जी बहुत लाड़ले थे। जब मौसी इस घर में ब्याह कर आई तो दोनों बड़ी नन्दों की शादी हो चुकी थी और दोनों उसी शहर में ही रहती थी। ये वो जमाना था जब बहुओं को बहुत दबा कर रखा जाता था। प्रताड़ित भले ही न किया जाए मगर घर में उनकी चलती बिल्कुल भी नहीं थी। यहाँ तक कि सब्ज़ी भी सास से पूछ कर ही बनाई जाती थी। मेरी और मौसी की उम्र में सात साल का अंतर था। मौसी चार भाईयों की अकेली बहन थी, तो मेरी माँ से उनका सगी

बहनों सा नाता था। मेरी अपनी सगी तीन मौसियां है, पंरतु वो अलग-अलग शहरों में रहती है, तो इस मालती मौसी से हमें कुछ ज्यादा ही अपनापन मिला।

मालती मौसी के घर में जा कर अच्छा लगता परन्तु उसकी सास का दबदबा चारों तरफ दिखता। मौसा जी भी अपना छोटे से छोटा काम माँ से पूछकर ही करते, मसलन जब सुबह आफिस के लिए तैयार होते तो कपड़े पहनते वक्त आवाज लगाते, "माताजी, ज़रा देखना, इस काली पेंट पर ये धारीदार क़मीज़ जच रही है या नहीं"। मौसी भी वही आस-पास ही होती, आस-पास क्या, वो तो किचन में ही होती। किसी भी काम के लिए मौसी की सलाह नहीं ली जाती।

इसी प्रकार की और भी बहुत सी रोज़मर्रा की बातें। उन दिनों साईकल का जमाना था। स्टील के टिफिन में रोटी सब्ज़ी सलाद कुछ मीठा रखकर थैले में लपेटकर पवन मौसा जी की साईकल के हैंडल पर टाँगने की ड्यूटी भी उन्हीं की थी। अगर कहीं मौसी टिफिन तैयार करके बंद करके रख देती तब भी उनकी मां टिफिन खोल कर फिर से सब चैक करती, और कभी-कभी तो थोड़ी सी और सब्ज़ी या सलाद या कुछ और सामान भी डाल देती। जब तक मौसा जी की साईकल आखों से ओझल न हो जाती उनकी माँ वही खड़ी देखती रहती, और फिर दरवाज़ा बंद करके घर के अंदर आती। हमारा अक्सर उनके घर आना जाना रहता था। ये वो जमाना था जब एक दूसरे घरों में खाने पीने के सामान का या कोई चीज घर में खत्म हो गई तो उधार के तौर पर ले ली जाती। जैसे कि एक घर में चीनी खत्म हो गई तो हम बाजार नहीं जाते थे, वैसे भी बाजार दूर था तो एक कटोरी चीनी, चावल, दाल या जो भी ज़रूरत होती आपस में ले लेते और फिर वापिस भी कर देते। किसी बच्चे को घर में बना घिया पंसद नहीं होता तो उसे ये छूट थी कि मालती मौसी को वो सब्ज़ी देकर जो वहाँ बनी है वो ले आए, लेकिन हँसी तब आती जब दोनों घरों में एक ही सब्जी बनी होती। मजबूरी में फिर दही, चीनी, मलाई से काम चलाना पड़ता।

किचन में अक्सर काम तो मालती मौसी करती मगर सास की पूरी नजर बाज की तरह हर चीज पर रहती। मौसी को इतनी भी इजाज़त नहीं थी कि साफ किया हुआ धनिया, मेथी, पालक, साग की डंडियाँ पत्ते वगैरह कूड़े दान में डाल दे। उनकी सास सब चैक करती और उसमें से कुछ कुछ और निकालती

तब वो फेंकती। और तो और, "बहुरानी, ये आलू के छिलके, बहुत मोटे उतार दिए, ज़रा पतले करती, गाजर, मूली भी पीलर से मत करो, चाक़ू से पतला पतला खुरच दो"। ये पतीले में कितनी मलाई तूने वैसे ही छोड़ दी, थोड़ा गरम करके निकाल लेती। मालती मासी कितनी भी कोशिश कर लेती, नुक़्स तो निकलना ही होता। मौसी भी न जाने किस मिट्टी की बनी थी, हर समय मुस्कुराती रहती। मौसी की दोनों नन्दें भी जब मायके आती तो माताजी उनको भी टोकने से बाज नहीं आती थी। दोनों की माँ की बजाए भाभी से ज्यादा बनती थी। मौसी थी ही ऐसी। नन्दों के बच्चे नानी की बजाए मामी के ज्यादा क़रीब थे। हर फरमाईश मामी से ही करते और मामी भी सबकी पंसद पूरी करती। खाना हो, घूमना हो या कुछ ख़रीदना हो। मामा से भी कम ही कहते क्योंकि मामा ने तो हर कम अपनी माँ से पूछ कर ही करना होता था। आजकल की भाषा में कहा जाए तो मौसा जी पूरी तरह से 'माम,स ब्वाए' थे।

बच्चों से ज्यादा घर में मौसा जी का ध्यान रखा जाता। घर में कोई कमी नहीं थी परन्तु सब्ज़ियाँ फल सबसे पहले मौसा जी को परोसे जाते। मौसा जी जब तक घर में रहते, उनकी कोई न कोई फरमाईश रहती ही रहती, ज़रा सी कोई तकलीफ होती तो उनकी सेवा में मौसी को हर समय हाज़िर रहना होता। माताजी का काम था निर्देश देना, और पूरा करना मौसी जी का काम था। माना कि माँ की उम्र भी थी, चिंता भी होती है, मगर मौसी जी भी तो थक जाती थी। कामवाली थी, परन्तु परिवार भी तो बड़ा था। उन दिनों रिश्तोंदारों का भी आना जाना काफी होता था। किसको क्या नेग देना, कहाँ जाना है, कितने बजे जाना है, सब काम माताजी और मौसा जी की आपसी सलाह से होते। मौसी के कपड़े वगैरह भी मौसा जी ही ख़रीद कर लाते। शादी के बाद मेरा मौसी से मिलना कम हो गया था, परन्तु मेरे मन में मौसी के लिए प्यार कभी कम नहीं हुआ। मुझे कई बार मौसी पर दया भी आती, हमारी उम्र में कोई बहुत ज्यादा अंतर नहीं था, लेकिन मुझे पढ़ने लिखने और नौकरी करने के इलावा ससुराल में काफी खुला माहौल मिला था।

मौसा जी रिटायर हो गए, सब बच्चों की शादियाँ हो गई, माताजी की उम्र लंबी थी, वो चल फिर कम पाती मगर होशोहवास पूरे क़ायम थे। दबदबा अब भी वैसा। उम्र तो मौसी जी की भी हो गई थी, सब कमाने लगे तो सुख

सुविधाओं की भी कमी नहीं। बच्चें अपने अपने पंख फैलाकर उड़ गए। घर में छोटे बेटे की बहू, दो बच्चे, मौसी, मौसा और माताजी थे। लेकिन बाकी सभी का आना जाना लगा ही रहता। मेड सब काम करती, लेकिन मौसी को मौसा जी और सासु माँ का स्वयं ध्यान रखना होता। कुछ साल पहले मेरा मायके जाना हुआ तो मौसी से मिलने तो जाना ही था। मौसा जी का हार्ट का आपरेशन भी हुआ था। मौसी को भी घुटनों में दर्द रहने लगा था। घर में सब थे, मगर मौसा जी की और माताजी की चाय, उनकी पंसद की सब्ज़ी, उनको दवाई, फल सब देना मौसी के ही जिम्मे था। उनकी सेवा में ख़ुद की सेहत का ध्यान रखना तो क्या ढ़ग से कपड़े भी नहीं बदल पाती। छोटे से छोटे काम के लिए भी हर समय 'मौली, मौली' बुलाते, बुलाते क्या, अब तो चिल्लाते। कई बार उठते समय मौसी को घुटने के दर्द के कारण कुछ समय लग जाता तो आसमान सिर पर उठा लेते। मसलन उनके फल खाने का समय है तो मौसी ने ही सेब, पपीता वगैरह काट कर लाने है, और जब तक वो खा कर वापिस लेट न जाए मौसी ने वहीं पर ही बैठे रहना है।

ऐसे और भी बहुत से काम। अपनी ही पड़ी है, मौसी की कोई चिंता नहीं। मुझे यह सब देखकर बड़ी हैरानी हुई। उदास सी मैनें घर आकर सब माँ को बताया तो उन्होनें बस इतना ही कहा, बस यही उसकी किस्मत है, किसी को उसका ध्यान नहीं। नौकरों के होते हुए भी उसकी किस्मत में आराम नहीं। कुछ सालों के अंतराल में ही मासी की सास और मेरे माता पिता भी नहीं रहे और फिर मौसा जी के परलोकगमन की खबर तो मिली परन्तु पारिवारिक मजबूरियाँ के चलते मैं आ नहीं पाई। अब जब आई तो मौसी से मिलने जाने का सोच रही थी कि शाम को मौसी ही आ गई। मुझे बड़ी हैरानी हुई, मैं अपने आपको शर्मिदां महसूस कर रही थी कि मौसा जी के देहांत पर आ नहीं सकी। मौसी जी को सादी मगर सुंदर क़ीमती साड़ी पहनी हुई, और क़रीने से तैयार हुई देख कर मुझे समझ नहीं आ रहा था कि मैं खुश होऊँ या अफ़सोस के दो शब्द कहूँ।

मौसी की चाल से साफ पता चल रहा था कि उनके दोनों घुटनों का आपरेशन हो गया है। एक हफ़्ता मैं वहाँ रही तो रोज ही मिलना होता। तीन चार बार मौसी मुझे बाजार ले गई। मौसी की बहू भी बहुत अच्छी थी, मगर नौकरी

के कारण व्यसत थी। जिसने सारी उम्र काम किया हो, अकेले कभी बाहर की दुनिया देखी न हो, उसके लिए अब समय काटना मुश्किल हो गया था। बहू ने उन्हें दो किटी पार्टी ज्वाईन करवा दी है। मौसी के लिए ये नया तजुर्बा था। ख़ुशमिज़ाज और हँसमुख तो वो थी ही, सबक चहेती बन गई। मौसा जी की अच्छी खासी पेंशन उनके खाते में आ जाती है। पैसे की कमी भी नहीं। पहली बार जिंदगी में मैनें मौसी को खुलकर जीते देखा, दूसरे बच्चों के पास भी जाना आना लगा रहता है। मुझे मौसी का ऐसा रूप पहली बार देखने को मिला, और मुझे बहुत खुशी भी हुई। मैं ये नहीं सकती कि मौसा जी और उनकी सासू माँ के रहते उन्हें ख़ुशियों की कमी थी, मगर मैं इतना जरूर कहंगी कि अपने अपने हिस्से की धूप लेने का हक तो सबका बनता है। और यह तभी हो सकता है, जब हम सिरफ अपना ही न सोचे, सब एक दूसरे की ख़ुशियों का ख़्याल रखें।

सही फैसला

रितु ने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि मात्र एक साल में उसकी दुनिया इतनी बदल जाएगी। पति राजीव का साथ क्या छूटा, सारी खुशियां ही रूठ गई। किसी भी उम्र में जीवनसाथी का साथ छूटना तो दु:खदाई ही है, लेकिन ये भी अटल सत्य है कि किसी एक को तो पहले जाना ही होगा। पीछे वाले के पास सब्र के सिवाय कोई चारा भी तो नहीं, मगर सत्तर साल की उम्र में अगर यही प्रभु इच्छा है, तो सर झुकाना ही पड़ेगा, और फिर अगर अपना भरा पूरा परिवार हो, सब सुख सुविधाएँ हो तो दु:ख आधा रह जाता है। रितु के मोहित और रोहित दो बेटे और पाखी, एक प्यारी सी बेटी। पति राजीव सरकारी नौकरी से उच्च पद से रिटायर हुए थे। बहुत पहले ही काफी बड़ा अपना दो मंज़िला घर और रिटायरमैंट से मिले पैसों से अच्छी सेंविग भी हो गई थी। शादी के बाद पाखी पति के साथ अमेरिका चली गई थी और दोनों बेटे भी पढ़ लिख कर अच्छी प्राईवेट कंपनियों में नौकरी कर रहे थे। कहने का मतलब ये कि सब शादी शुदा अपनी अपनी जिंदगी में खुश थे।

छोटे बेटे रोहित का परिवार नीचे और बड़े मोहित का परिवार उपरी मजिंल पर रहता। रितु राजीव नीचे ही रहते थे, घुटनों के दर्द के कारण रितु को सीढ़ियाँ चढ़नी मुश्किल लगती थी। भले ही रसोईयां दो थी, मगर नीचे के पकवान उपर और उपर के नीचे आते ही रहते। सब बढ़िया चल रहा था कि एक रात राजीव को ऐसा मेजर हार्ट अटैक आया कि फिर न उठ सके। डाक्टरों के अनुसार साईलेंट अटैक था। अब जो प्रभु इच्छा। बेटी पाखी भी आई और एक महीना रह कर चली गई। जिंदगी वापिस अपने ढर्रे पर चल निकली, सब अपने अपने कामों में मस्त, मगर रितु का समय तो काटे न कटता। बीस साल की उम्र में ग्रेजुएशन करते ही शादी हो गई। उसकी हमउम्र कई सहेलियाँ नौकरी करती थी। वो चाहती तो उसे भी नौकरी मिल सकती थी, परन्तु उसे घर गृहस्थी और बच्चों से दूरी पंसद नहीं थी।

घूमने फिरने का भी कोई ज्यादा शौक़ नहीं था। आम औरतों की तरह न वो फिल्में देखती और न ही किटी पार्टियों में जाती। रसोई घर से उसे बहुत लगाव। बढ़िया से बढ़िया खाना पकाना और परिवार को खिलाना उसका शौक़ था। खाली समय में कभी स्वैटर बुनना तो कभी कुछ सिलाई कढ़ाई करना भी उसकी हाबी में शामिल था। अपने बच्चों के समय तो उसे फुर्सत नहीं थी, मगर जब उनके बच्चे हुए तो उसने उनके लिए छोटे छोटे कपड़े और स्वैटर, मौजें, टोपियाँ अपने हाथों से तैयार किए। सब उसे छेड़ते थे कि आज जब सब बाजार में मिलता है तो क्यों फालतू में माथापच्ची करती हो, लेकिन उसे तो इन सब कामों में असीम सुख की प्राप्ति होती थी। इन सब कामों के साथ उसे शुरू से ख़ुद तैयार होने का बहुत शौक़ था। शुरू से ही सादगी और सुंदरता का सुमेल थी रितु। राजीव और रितु जैसे एक दूजे के लिए ही बने थे। संस्कारी और सर्वगुणसम्पन राजीव बहुत दूरदर्शी भी थे। उन्होनें कई बार रितु को बाहर के कामों के, बैंकों की बचत, बीमा की किश्तों, मकान के काग़ज़ात वगैरह के बारे में बताने की कोशिश की, लेकिन रितु कुछ नहीं सुनती थी।

जब भी राजीव कोई ऐसी वैसी बात 'मेरे बाद' कहने की कोशिश करते वो उनके मुँह पर अपना हाथ रख देती और राजीव की फिर कुछ कहने की हिम्मत ही न होती। अच्छी खासी पढ़ी लिखी होने के बावजूद भी वो कभी अकेली बैंक नहीं गई थी, दो चार बाद जरूरी साईन करने राजीव के साथ ही गई होगी। उसके पास ए. टी. एम. था, मगर वो प्रयोग करने से डरती थी। पूरी तरह राजीव पर ही आश्रित समझो। थक हार कर राजीव ने उसे कुछ भी कहना छोड़ दिया, मगर समय की गति कहाँ रूकती है। समय अगर दु:ख देता है तो मरहम वही लगाता है। आँसू भी एक दिन सूख जाते है। हर समय रसोई में घुसी रहने वाली रितु जैसे रसोई का रास्ता ही भूल गई थी। दिन में चार बार बाल ठीक करने वाली दो दो दिन तक कंघी को हाथ भी नहीं लगाती थी। जब तक पाखी रही उसने तो मां को एक पल के लिए भी अकेला नहीं छोड़ा, रिश्तेदार भी रहे, लेकिन कब तक। दो तीन महीने तो बहुएँ उसका कुछ ध्यान रखती रही, मगर धीरे धीरे सब कम होता गया।

बेटे भी आकर पास बैठ जाते। अल्मारी की चाबी तो कब से उनके पास ही थी। वो जो भी काग़ज़ लेकर आते, वो चुपचाप बिना देखे पढ़े ही उन

पर साईन करती जाती। साईनों का सिलसिला बंद हुआ तो बेटे बहुओं का आना भी जैसे बंद हो गया। बच्चे कभी कभार दादी के पास आकर बैठ जाते, मगर दादी को उदास देखकर थोड़ी देर बाद वो भी चले जाते। अब चाय, खाना वगैरह भी नौकरानी रख जाती। रितु की किसी से कोई ख़ास दोस्ती ही नहीं थी, बस हाय हैलो ही थी, मगर हाँ, मंदाकिनी यानि मंदा उसकी बहुत ख़ास थी। राजीव के देहांत के समय वो बेटी के पास आस्ट्रेलिया गई हुई थी। कुछ दिन पहले ही वापिस आई थी। खबर तो उसे मिल गई थी, दो तीन बार फ़ोन पर बात करने की कोशिश भी की, मगर रितु बात तो क्या करती, उसकी हिचकियाँ ही बंद नहीं होती थी। जब आई तो खूब गले मिलकर रोई। पाखी के बाद जैसे उसे रोने के लिए एक मज़बूत कंधा मिला था। मंदा से रितु की हालत देखी नहीं जाती थी। बहुओं को तो कोई चिंता थी नहीं, पाखी इतनी दूर, वैसे भी रितु उससे ज्यादा बातें करके उसे परेशान नहीं करना चाहती थी। मंदा लगभग रोज ही रितु के पास आती, उससे बाते करती। धीरे धीरे अब रितु भी कुछ संभलने लगी थी। मंदा के कहने पर अच्छे कपड़े वगैरह पहनने लगी थी।

पहले तो उसने मेकअप करना बिल्कुल ही छोड़ दिया था, मगर मंदा भी कहाँ मानने वाली थी। वो प्यार से समझाती कि उपर बैठे राजीव जीजाजी सब देख रहे है, तुम्हें इस रूप में देखकर उन्हें कितना बुरा लगता होगा, और देखो कैसे सारे सफेद बाल झाँक रहे है, पहले की तरह कलर करो। रितु हल्का सा मुस्करा कर कहती, अब किसके लिए सजना संवरना, कौन देखता है। "ऐसा नहीं है रितु, क़ुदरत के आगे भले ही हम बेबस है, मगर ख़ुद को खुश रखना भी हमारी ही ज़िम्मेवारी है। परिवार, समाज, देश के प्रति भी तो हम सभी का कुछ न कुछ दायित्व बनता है। सब काम पहले की तरह शुरू करो। शुरूआत तुम से ही करते है"। और मंदा बहाने से उसे पार्लर ले आई। बिल बना तक़रीबन पाँच हज़ार। रितु के पास तो पैसे ही नहीं थे, मंदा ने बिल चुकता कर दिया।

काफी देर हो चुकी थी तो मंदा रितु को बाहर से ही बाय बोलकर चली गई। सास को इस रूप में देखकर बहुओं की हैरानी की सीमा न रही। सजा सँवरा चेहरा, क़रीने से बाँधे कलर किए हुए बाल, हल्का मेकअप, सतर की उम्र में भी वो पहले की तरह दस साल छोटी लग रही थी। "बहू, ज़रा एक कप कोफी तो बना दे, आज बहुत मन कर रहा है"। राजीव के होते वो अक्सर ही

दोनों मिलकर हफ़्ते में तीन चार बार चाय की बजाए कॉफ़ी पीते। उसके मना करने के बाद भी राजीव कई बार उसे काफी पीने के बहाने बाहर ले जाते और घूमना फिरना भी हो जाता। "माँ जी, आप ख़ुद ही बना लो कॉफ़ी, मैं बच्चों को होम वर्क करवा रही हूँ"। रितु को बुरा तो लगा, परन्तु बच्चों के नाम से वो चुप रह गई, और रसोई में चली गई। महीनों बाद रसोई की शक्ल देखी थी। क्या ये वही रसोई है, उसे समझ नहीं आ रहा था। सब बिखरा बिखरा सा। कुछ ही दिनों में वो सब समझ गई। दोनों बहुएं अपने में ही मस्त, नौकरानी जितना काम कर गई, कर गई। सीमा उनकी पुरानी मेड थी और बहुत अच्छे से सारे काम करती थी, परन्तु रितु उसके साथ होती या बताती रहती। रितु के दिल को बहुत ठेस लगी, पर वो क्या कहती।

अगले दिन उसने मोहित से कहा कि उसे दस हज़ार रूपए चाहिए। मोहित ने हैरानगी से कहा, "इतने पैसे क्या करोगी माँ"। वैसे वो माँ को देख कर कुछ तो समझ गया था।" वो मैनें पाँच हज़ार तो मंदा को देने है और कुछ खरीददारी भी करनी है"। रात को बात करता हूँ, कह कर मोहित निकल गया। दो दिन बीत गए। रितु को अब कुछ होश आने लग गया था, महसूस कर रही थी अपनी गल्तियों को। अल्मारी खोल कर देखी तो उसमें वो फ़ाईल ग़ायब थी, जिसमें बैंक के काग़ज़ात वगैरह थे। शाम को उसने रोहित से कहा कि बेटा, मेरा ए.टी. एम. तेरे पास होगा, देना मुझे। 'हाँ, माँ ,अभी देख कर देता हूँ, शायद कोट की किसी जेब में रख कर भूल गया हूँ। पर माँ आपको तो आता ही नहीं ए.टी. एम. चलाना, पर तब तक रितु वहाँ से जा चुकी थी। दो चार दिन और निकल गए, न किसी ने पैसे दिए, न ए.टी.एम. और न ही कोई बात की। उसने पहले की तरह रसोई में कुछ समय जाना शुरू कर दिया था, पर वो सीमा को कुछ जरूरी निर्देश ही देती थी साफ सफाई के।

रात को रितु की तबियत एकदम से बहुत खराब हो गई, मोहित ने उन्हें सरकारी हस्पताल में एडमिट करवा दिया, सुबह जब रितु को होश आया तो उसने कहा कि उसका तो काफी बड़ा कैशलैस बीमा है,उनका तो हर इलाज प्राईवेट हस्पताल में होता है, अक्सर डाक्टर चैक अप के लिए घर पर ही आता है। परन्तु उसके हृदय को यह जानकर आघात लगा कि किसी ने उसका सालाना प्रीमियम ही नहीं भरा, जबकि वो इसके बारे में जानते थे।

एक हफ़्ता इंतजार करने के बाद उसने कुछ फैसला लिया। उसे रह रह कर राजीव की कही बातें याद आती, और आँखे भर आती। यह गम तो अब जिंदगी भर का था, परन्तु आत्मसम्मान से समझौता उसे क़तई मंज़ूर नहीं था। कितनी नादान थी वो, उसे तो अपनी बैंक की पास बुक का नंबर तो क्या, ये भी पता नहीं कि पासबुक रखी कहाँ है। राजीव की पैंशन कितनी है, उसने कभी पूछा ही नहीं था। अल्मारी से कुछ भी नहीं मिला। अगले दिन हिम्मत जुटाकर मंदा को साथ लेकर वो बैंक गई। मंदा हमेशा से ही बहुत एक्टिव थी, उसने कई बार रितु से बात करने की कोशिश भी की, परन्तु उसकी कोई रूचि न देखकर वो चुप हो जाती। वैसे भी दोस्ती और निजी जीवन दोनों अलग है। लेकिन अब मंदा से कुछ भी छिपाना बेकार था। बैंक मैनेजर ने बहुत सहयोग दिया। सबसे पहले तो कार्ड ब्लाक किया रितु का पति के साथ ज्वाईटं अकाऊंट लगभग खाली था। सब एफ. डीज तुड़वाई जा चुकी थी। फ़ैमिली पेंशन सैटल हो चुकी थी, जो कि हर महीने निकाली जा रही थी।" बस, अब और नहीं, रितु को झटके पे झटके लग रहे थे, पर मंदा ने उसे अच्छे से संभाला। अपना ही लहू ऐसा रंग दिखाएगा, रितु ने कभी सोचा भी नहीं था। मकान रितु के नाम था और राजीव की पैंशन ही काफी थी उसके जीने के लिए।

मन पक्का करके उसने कुछ फैसला लिया। रात को दोनों बेटों को कमरे में बुलाया और सिर्फ इतना ही कहा, कि एक महीने के अंदर अंदर वो चाहे तो अपने रहने का कहीं और इंतज़ाम कर ले या उपर इकट्ठा रह ले। सीमा सिरफ उन्हीं का काम करेगी। जल्दी ही वो कुछ और फैसले लेगी। लाकर उसके नाम ही था। लेकिन माँ- रोहित की बात काटते हुए रितु ने कहा, माँ हूँ, इसलिए तुम्हें घर से नहीं निकाल सकती, अब तुम जा सकते हो, मैनें पहले ही फैसला लेने में बहुत देर कर दी।

देस परदेस

"नीलू, अच्छे से तैयार हो जाओ, आज तुझे लड़के वाले देखने आ रहे है, लगता है यहां बात बन जाएगी। ये रिश्ता मेरी एक सहेली ने बताया है, लड़के वालों को जैसी लड़की और घर बार चाहिए, वो सब यहां पर है, भगवान करे सब ठीक रहे", माधवी ने बेटी से कहा।

"तैयार होने में क्या देर लगती है, पश्चिमी परिधानों की यही तो मौज है, जीन टाप पहनों और तैयार, और आपको मेरी पंसद का तो पता ही है, मुझे विदेश रहने वाले लड़के से शादी करनी है, अमेरिका, कैनेडा, ईगलैंड, आस्ट्रेलिया या और भी कहीं"। बाकी सब कुछ तो आप देखें। हां हां ठीक है, पता है मुझे, तेरे सिर पर तो बचपन से ही बाहर जाने का भूत सवार है।प्रथम कैनेडा में ही है।एक बार देखा दिखाई हो जाए बाकी बातें फिर तय करेगें।

माधवी जल्दी जल्दी बाकी तैयारियां देखने लग गई। तभी उसकी सहेली आंचल का फोन आया कि ट्रैफिक के कारण आने में शायद एक घंटा और लग जाए।" उफ, ये देहली का ट्रैफिक, बंदा आता आता ही बूढ़ा हो जाए"। लेकिन क्या किया जा सकता है। हर किसी के पास कार है, पहले कहां थी इतनी कारें। आजकल शहरों में तो ट्रैफिक, पार्किंग की समस्या सच में ही बहुत हो गई है। कोई करे भी तो क्या, हमारे देश में पब्लिक ट्रांसपोर्ट इतनी अच्छी भी तो नहीं। आजकल तो मैट्रो का भी बुरा हाल है, और बसें, सड़के, तौबा तौबा। नौकरी वगैरह पर जाने के लिए तो फिर भी चलो पहुंचा जा सकता है लेकिन अगर फंकशन वगैरह में जाना हो तो कार या टैक्सी के बिना गुजारा ही नहीं। गंतव्य तक पहुंचते पहुंचते सारा मेकअप तो धुलेगा ही, कपड़े भी ऐसे हो जाऐगें कि बताना मुश्किल।

ये सब सोचते सोचते माधवी न जाने कहां पहुंच गई। उसे याद आया अपना जमाना। मास्टर डिग्री करते ही उसकी शादी की बात चली। उसकी भी इच्छा बाहर जाने की ही थी। ये वो जमाना था जब लड़कियां अपनी शादी की बात खुलकर नहीं कर सकती थी या नहीं करती थी। माधवी ने मां से अपनी

इच्छा जताई थी तो मां ने कहा, शादी ब्याह तो किस्मत का खेल है, जहां किस्मत ले जाएं वहीं जाना होता है। बाकी कोशिश करूंगी। उन्होंने ये भी कहा था कि बेटी, दूर के ढ़ोल ही सुहावने लगते है। अपने देश में क्या कमी है। और अपनों के बीच में ही रहने का मजा है, परदेस तो परदेस ही होता है।

लेकिन माधवी का कहना था कि मां तो पुराने जमाने की है, वो क्या जाने बाहर के मुल्कों की बातें। पता है वहां कितना पैसा है। वैसे ये वो जमाना था जब बहुत कम लोग विदेश जाते थे। माधवी की स्कूल के जमाने की एक सहेली इंदु की मासी ने उस जमाने में नर्सिंग की थी तो उसे किसी तरह कैनेडा जाने का मौका मिल गया। आजकल तो सब चलता है लेकिन उन दिनों नर्स के कार्य को अच्छी नजर से नहीं देखा जाता था जबकि विदेशों में इसकी बहुत डिंमाड थी, आज तो हमारे देश में भी हैल्थ संबधित कितने प्रकार के कोर्सिज चलते है।

यह तो सर्वविदित ही है कि बाहर अगर काम मिल जाए तो पैसे भी अच्छे मिलते है। कितनी भी मुसीबतें आएं लेकिन डॉलरों का मोह बना ही रहता है। किस्मत से इंदु की मासी वहां जाकर अच्छे से सैटल हो गई और उसने भारत में रह रहे अपने परिवार की भी बहुत सपोर्ट की, तभी से माधवी के दिमाग में ये बात बैठ चुकी थी। अपने बलबूते पर जाना इतना आसान भी नहीं था और बाहर इनकी रिश्तेदारी में कोई था भी नहीं। बाहर रहने वाले लड़के से शादी करना ही उसे बेहतर विकल्प लगा। लेकिन काफी कोशिशों के बाद भी बात नहीं बनी। माधवी के पिता बहुत समझदार थे, उन्हें पता था कि बाहर की चकाचौंध लोगों को बहुत प्रभावित करती है, लेकिन बेटी का मामला था तो वो पूरी तसल्ली करना चाहते थे।

माधवी के पिता काफी पढ़े लिखे और सुलझे हुए नौकरीपेशा व्यक्ति थे, उन्होंने अक्सर अखबारों वगैरह में पढ़ रखा था कि यहां आकर विदेश की डींगे हांकने वाले वहां पर कैसे छोटे मोटे काम करते है, जबकि वही काम अपने देश में करने में उन्हें शर्म लगती है। परन्तु बेटी की इच्छा को देखते हुए तलाश करने पर उन्हें उसके अनुकूल वर मिल गया। उनके किसी दोस्त का ही रिश्तेदार लड़का था जो कि एम.बी.ए. करने के बाद किसी अच्छी कंपनी की और से चार साल पहले बाहर चला गया था और उन दिनों भारत आया हुआ था। चूंकि

उम्र हो चुकी थी तो घर वाले उसकी शादी करना चाहते थे। बात चली तो दोनों पक्षों की रजामंदगी से बिना ज्यादा ताम झाम के शादी सम्पंन हो गई थी। माधवी की खुशी का कोई ठिकाना ही नहीं था। मन चाही मुराद मिल गई। आलोक जैसा स्मार्ट और पढ़ा लिखा पति और कैनेडा में नौकरी। शादी पर ज्यादा खर्च भी नहीं किया गया था ताकि वही पैसे बाहर जाने के समय काम आएं।

भले ही हम किस्मत को न माने लेकिन कर्म और किस्मत का चोली दामन का साथ रहता है। एक महीना भारत रह कर आलोक वापिस चला गया। बाहर जाने के लिए कानूनी कार्यवाही भी तो करनी होती है। छः महीने बीत चुके थे। ज्यादातर माधवी मायके में ही रही। था तो ससुराल भी उसी शहर में, परन्तु वहां उसका मन नहीं लगता था और उसके ससुराल वाले भी भले लोग थे। समझते थे कि पति के बगैर नई दुल्हन का वहां रहना इतना आसान नहीं, चलो कुछ समय बाद तो सब ठीक हो जाता है। माधवी की किस्मत में बाहर जाना नहीं लिखा था। उन दिनों कुछ ऐसा आर्थिक संकट आया कि कंपनियों ने छंटनी शुरू कर दी थी तो आलोक पर भी ये गाज गिरी। उसने वहीं पर और नौकरी की तलाश जारी रखी लेकिन बात नहीं बनी। बाद में चार महीने मुश्किल से वहां रहा, सारी सेविंग्स खत्म हो चुकी थी। घर वालों ने भी मदद की लेकिन कब तक, आखिर वापिस भारत आना पड़ा।

यहां आने के कुछ समय बाद ही उसे यहीं पर अच्छी नौकरी मिल गई और वो देहली से पूना शिफ्ट हो गए। आलोक तो यहां पर आकर बहुत खुश था लेकिन माधवी के अरमानों पर पानी फिर गया। उसकी हसरत दिल में ही रह गई। उसने कई बार आलोक को बाहर नौकरी ट्राई करने की कोशिश के लिए कहा लेकिन उसका मन नहीं किया। वो अपने देश में अपने परिवार के साथ ही रहना चाहता था। हां, इतना जरूर हुआ कि उसने एक बार माधवी को पद्रहं दिन का युरोप टूअर लगवा दिया था। तब तक नीलू और साहिल का जन्म भी हो चुका था। अब माधवी के जो सपने पूरे नहीं हुए वो बच्चों द्वारा पूरा करना चाहती थी। साहिल नीलू से काफी छोटा था। बचपन से ही माधवी ने नीलू के दिमाग में बाहर की दुनियां की बातें भर दी थी। मन में एक कसक रह गई थी जो शायद बच्चे पूरी कर दें।

इतिहास अपने आप को दोहरा रहा था। आज वो ही इच्छा नीलू की थी जो कभी माधवी ने की थी, अंतर इतना था कि माधवी ने दबे शब्दों में सिर्फ मां को ही कहा था, जबकि नीलू तो सबके सामने ही कह रही थी। अब जमाना बहुत आगे बढ़ चुका था। बाहर हार्न बजने की आवाज से माधवी की तंद्रा टूटी, ओह एक घंटा बीत गया और वो भूतकाल में खो गई। साड़ी का पल्लू ठीक करते हुए वो बाहर आई। इन दिनों वो अपने घर देहली आए हुए थे। आलोक तो पहले से ही वहां मौजूद थे। प्रथम हर पहलू से नीलू के लायक था और वो अमरीका में सैटल था और वहीं का नागरिक था, उसका जन्म वहीं पर हुआ था, बाद में उसका परिवार भारत आ गया था।

हंसी खुशी के माहौल में शादी संपन्न हुई और जल्दी ही नीलू भी अमेरिका पहुंच गई। नीलू से ज्यादा माधवी के कलेजे में ठंडक पहुंची। अब तो माधवी की प्रबल इच्छा थी कि कब नीलू उसे अमेरिका बुलाए। दो साल बाद जब नीलू प्रैगनैंट हुई तो उसे जाने का सुअवसर मिल ही गया। माधवी तो मानों आकाश में उड़ रही थी। उसे बेसब्री से उस दिन का इंतजार था, साहिल का कालिज था तो आलोक ने तो जाने से मना कर दिया था, वैसे भी उसकी कोई इच्छा नहीं थी जाने की। कुछ उसकी सेहत भी ठीक नहीं रहती थी, हवाई जहाज का लंबा सफर और फिर बेटी के घर ठहरना, दोनों ही उसे पंसद नहीं थे। दादा जी के गुजर जाने के बाद आजकल साहिल की दादी पूना उनके पास ही रहती थी। बुजुर्ग थी लेकिन सेहत ठीक ठाक थी। प्रथम की मां भी अमेरिका जाने में असमर्थ थी तो नीलू के पास किसी को तो जाना ही था।

छ: महीने वहां रहने का सोच सोच कर ही माधवी को तो खुशी के मारे नींद नहीं आ रही थी। खूब तैयारियां की, जितना ले जा सकती थी सामान रख लिया। नियत दिन वो हवाई जहाज में बैठ गई। वहां प्रथम उसे लेने आया हुआ था। कुछ दिन तो हंसी खुशी बीत गए। थोड़ा बहुत आसपास घूम लिया। नीलू ज्यादा चल नहीं पाती थी तो एक दो बार ही प्रथम उसे ले गया और फिर ज्यादा देर तक नीलू को अकेला भी नहीं छोड़ा जा सकता था। कुछ दिनों बाद नीलू ने बेटे को जन्म दिया तो खुशियों के साथ साथ काम भी बढ़ गया। वहां घर में हर तरह की सहूलियत थी लेकिन हमारे यहां की तरह मेड रखना बहुत मंहगा था।

हफ्ते में एक बार ही सफाई करवाई जाती और वो भी बहुत मंहगी पड़ती। माधवी के आने के बाद सफाई वाले महीने में एक बार ही बुलाए जाते। कितनी भी मशीनें हो, उन्हें चलाना भी तो पड़ता है। माधवी को तो इतना काम करने की आदत भी नहीं थी। मां बेटे को संभालने में ही समय निकल जाता। वो तो घूमने फिरने का सोच कर आई थी परन्तु यहां तो सारा काम ही स्वंय करना पड़ता। नीलू भी अभी कमजोर थी और बच्चा भी छोटा। वो कहती भी तो क्या। रात को वो थक कर चूर हो चुकी होती। बाहर निकली भी तो आसपास कोई सामान वगैरह लेने। ना कोई जान न पहचान, बात भी किस से करें। पूना में तो घंटो आस पड़ौस में ही बातें करते थे। अब तो उसे अपने देश की, त्यौहारों की याद सताती। चलो छः महीने पूरे हो गए तो वो वापिस लौट आई। एयर पोर्ट पर उतर कर उसने लंबी सांस ली जैसे पिंजरे से बाहर निकली हो।

उसे बेटी और बच्चे की याद तो बहुत आती, लेकिन बाहर के नजारे उसने देख लिए थे। उसे तो अब अपना घर और अपना देश ही अच्छा लगता। नीलू ने उसे बाद में भी कई बार बुलाने की कोशिश की लेकिन 'बेबी सिटिगं' के लिए वो नहीं जाना चाहती थी। हां अगर कभी आलोक साथ गया तो वो जरूर जाएगी परन्तु सिर्फ कुछ दिनों के लिए। अपने देश में जो अपनापन है वो परदेस में कहां और फिर नौजवान बच्चे तो काम करते करते उसी सांचे में ढ़ल जाते है लेकिन बुजुर्गों के लिए मुश्किल है। देस परदेस में अंतर माधवी को अच्छे से समझ आ चुका।

ये तेरा घर ये मेरा घर

आशी का मूड आज फिर खराब हो गया। वैसे तो कोई नई बात नहीं थी कि वीणा ने उसे जली कटी सुनाई हो, मगर आज जो उसने कहा वो सचमुच ही उसे अंदर तक बींध गया। वीणा का ये कहना कि कब तक मेरे घर में पड़ी रहोगी, ने उसे सोचने पर मजबूर कर दिया कि क्या ये घर जहां उसने जन्म लिया, वो घर जहां की जंमी पर उसने पहला कदम रखा, चलना, हंसना, बोलना, सीखा, अपने दो बड़े भाईयों सरल और साहिल के साथ लड़ी, झगड़ी भी और प्यार से राखी टीका भी मनाया, ये घर उसके लिए पराया कैसे हो गया। शादी के बाद जब लड़की को दूसरा घर मिल जाता है, उस समय अगर कोई कहे तो शायद इतना बुरा न लगे, लेकिन अब जबकि उसकी शादी भी नहीं हुई तो उसका अपना घर पराया कैसे हो गया।

सरकारी कानून के मुताबिक तो लड़की लड़का मां बाप की जायदाद में बराबर के हिस्सेदार है, लेकिन सामाजिक नियम और लोगों की सोच, उसका क्या किया जाए। देवरानी जेठानी लड़ती झगड़ती भी एक घर में रह सकती है मगर ननद भाभी के लिए अक्सर मुश्किल होता है। एक तरफ भाभी अपना अधिकार समझती है तो दूसरी तरफ ननंद भी तो उसी घर की बेटी है। बड़ी पेचीदा स्थिति पैदा हो जाती है। जब कभी भाभी वीणा की जुबान के तीर या फिर ओछी हरकतें आशी की सहनशक्ति को पार कर जाती, तो उसे वीणा से ज्यादा अपनी मां पर गुस्सा आता, जिसने कि समय रहते उसकी शादी नहीं होने दी। आशी खूबसूरत तो थी ही, उपर से बी.काम. कर रही थी, पिताजी की अच्छी नौकरी, दो भाईयों की इकलौती बहन, अच्छा खाता पीता इज्जतदार परिवार, बीस साल की उमर से पहले ही रिश्ते आने शुरू हो गए थे। मां की इच्छा थी कि आशी की शादी भाईयों से पहले हो जाए, मगर नियति को ये मंजूर नहीं था। आशी की मां माधवी ने आशी को बहुत लाड प्यार से पाला या यूं भी कह सकते है कि कुछ ज्यादा ही सिर पर चढ़ा रखा था, जबकी आशी की सोच कुछ अलग थी। अपनी सुंदरता से वो गर्वित थी, मगर उसे घंमड नहीं था।

बच्चे तो कच्ची मिट्टी के समान होते है, जैसे ढ़ालो, ढ़ल जाते हैं। हर समय माधवी ने आशी को ये अहसास दिलवाया कि वो बहुत खूबसूरत, गुणवान है, पढ़ाई में तो वो वैसे भी तेज थी। माधवी तो आशी को घर का कोई काम भी नहीं करने देती थी, वो तो आशी को न जाने क्यों किचन में काम करना अच्छा लगता और सफाई पंसद भी बहुत थी। माधवी के मना करने पर भी वो तरह तरह की डिशिज ट्राई करती रहती। वैसे तो वो पापा के साथ साथ दोनों भाईयों की भी लाडली थी, परन्तु बचपन में जब माधवी गल्ती न होने पर भी बेटों को डांटती और आशी का पक्ष लेती तो वो दोनों कई बार उससे चिढ़ जाते और मौका मिलने पर चोटी खींचने या चपत लगाने से भी बाज न आते, आखिर तो बच्चे थे, दो दो साल का अंतर था तीनों का। समय न जाने कब पंख लगाकर उड़ गया।

तीनों बच्चे जवान हो गए। सरल और साहिल भी पढ़ाई में तेज थे। सरल की तो शुरू से ही डाक्टर बनने की इच्छा थी और साहिल का मन था अपना कोई रेस्टोरैंट वगैरह खोलने का। जहां सरल को मैडीकल में दाखिला मिला, वहीं साहिल ने होटल मैनजमैंट का कोर्स जाईन कर लिया। आशी की अकाऊंटस में दिलचस्पी को देखते हुए उसे बी. काम के बाद सी. ए. करवाने का सोचा गया। लेकिन हमेशा वही नहीं होता जो हम सोचते हैं। स्किन स्पैशलिस्ट बनते ही सरल ने अपने साथ पढ़ने वाली डा़ हरिता से शादी करने की इच्छा जाहिर की। सरल को ज्यादा तामझाम पंसद नहीं था तो शादी साधारण तरीके से कुछ विशेष मेहमानों की उपस्थिति में ही संम्पन हो गई। हनीमून से लौटते ही दोनों बैंगलौर चले गए। साहिल की होटल व्यवस्था की ट्रैनिंग चल रही थी। आशी बी.काम. के अन्तिम वर्ष में थी जब उसके लिए पहला रिश्ता माधवी की कज़न ने सुझाया। लड़का आई टी की अच्छी जाब में था। घरबार सब बढ़िया लेकिन जब माधवी को पता चला कि उसकी दो बड़ी शादीशुदा और एक कुंआरी बहन है तो उसने ये कह कर बात टाल दी कि मेरी बेटी तो सारी उमर ननदों के नखरे ही उठाती रह जाएगी।

अगला रिश्ता जो देखा गया वो दो भाई थे परन्तु साझां बिजनस होने के कारण लड़के के पिता और ताऊ इकट्ठे रहते थे यानि कि संयुक्त परिवार। माधवी को ये बात भी न भाई हालाकिं लड़का बैंक में आफिसर था। मिलट्री या

पुलिस वाला रिश्ता तो उसे कतई पंसद नहीं था। हर तरह से परफैक्ट एक इकलौता लड़का भी लिस्ट में आया, लेकिन माधवी ने यह कह कर ठुकरा दिया कि सास ससुर के साथ साथ लड़के की दादी भी जिंदा थी। "बाप रे बाप, मेरी छोटी सी जान, तीन तीन बूढ़ों की सेवा करती हल्कान हो जाएगी। इसी बीच आशी ने बी. काम. के बाद किसी प्राईवेट फर्म में नौकरी ज्वाईन कर ली थी, और आगे पढाई भी जारी रखी। अच्छी सैलरी थी। मां ने उसके दिल की टोह लेते हुए कई बार ये भी जानने की कोशिश की, कि शायद उसे कोई लड़का पंसद हो, लेकिन आशी ने साफ मना कर दिया। एक तो वो उस टाईप की लड़की नहीं थी, दूसरा वो जानती थी कि मर्जी तो मां की ही चलनी है, व्यर्थ में झंझट क्यूं पालना। वैसे उसे साथ ही काम करने वाला एक एडवोकेट लड़का कुछ कुछ भाता था, लेकिन उसने पहले से ही दूरी बना कर रखी हुई थी क्यूंकि लड़के यानि की गौतम की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। उसकी मेहनत और लगन को देखते हुए लगता था कि वो बहुत आगे तक जाएगा, मगर एक तो वो विजातीय और उपर से काफी कमजोर आर्थिक स्थिति तो मां को समझाना मुश्किल और दूसरी और वो अपने काम पर ज्यादा फोकस करना चाहती थी।

जहां आशी की उमर अठाईस की होने वाली थी, वहीं साहिल भी तीस का हो चला था। सरल और उसकी पत्नी तो दोनों डाक्टर थे, और अपनी ही दुनिया में व्यस्त थे। गांव की कुछ जमीन और पुराना घर बेचकर पिताजी ने साहिल को उसी शहर में होटल खोलकर दे दिया था जो कि अच्छा चल निकला। रिटायरमैंट के पैसे और आशी की शादी के लिए रखे कुछ पैसे भी इसी काम में खर्च हो गए थे। माधवी के नखरों को देखते हुए अब रिश्तेदारों मित्रों ने रिश्ते बताने लगभग बंद ही कर दिए थे। मां की बातों को आंख मूंद कर मानने वाल आशी को भी अब कुछ गल्त लगने लगा था। उसके साथ पढ़ने वाले दोस्त मित्र लगभग सबके घर बस गऐ थे। उससे कई साल छोटे कज़नस की भी शादियां हो गई, बच्चे भी हो गए। अब तो अगर वो किसी पारिवारिक समारोह में जाती तो लोगों की सवालियां निगाहें जैसे उसे घूरती सी लगती।

कुछ तो पीठ पीछे ये भी कहने से न चूकते कि मां बाप शादी ही नहीं करना चाहते, कमाई जो आ रही है। साहिल भी अब सैटल हो चुका था। उसके लिए भी कब से रिश्ते आ रहे थे, अभी तक तो माधवी आशी के लिए रूकी हुई

थी, लेकिन कब तक, और अब उसकी इच्छा भी थी, तो वीणा घर में बहू बनकर आ गई। दो साल बाद ही आशी के पिता का देहांत हो गया। डा. सरल के एक बेटी और साहिल के घर बेटे का जन्म हो गया। पोते के पालन पोषण में माधवी इतनी मस्त और व्यस्त हो गई कि आशी की शादी का जैसे भूल ही गई। लेकिन पैतींस पार की आशी को मां के साथ साथ अब अपनी भी गल्ती का अहसास हो रहा था। क्यूं नहीं उसने मां की नाजायज बातों का विरोध किया। अब उसे वो गाना याद आ रहा था," कभी किसी को मुकम्मल जहां नहीं मिलता"। और अब जब वो अपनी मां द्वारा नकारे रिशतों के बारे में सोचती तो उसे खुद को बुरा लगता। जो कमियां हम दूसरों में निकालते है वो खुद हममें भी तो हो सकती है।

अब तो आशी जैसे घर में अनचाहे अतिथि की तरह रह रही थी। पहले दिन से ही वह अपनी पूरी सैलरी मां के हाथ में देती। आजकल तो कार्ड का जमाना है, उसका एक कार्ड मां के पास ही रहता, जैसे मर्जी वो खर्च करती। पिता के न रहने पर मां को जो फैमली पेंशन मिलती थी वह उसके लिए बहुत कम थी। आशी जितना सादा जीवन पंसद करती वहीं मां तो शुरू से ही तड़क भड़क वाली थी। साहिल का होटल बहुत अच्छा चल रहा था, मगर वो घर खर्च के लिए बहुत कम पैसे देता। अपनी बीवी के हाथ में जो देता वही देता। सारा घर तो आशी के पैसों से चल रहा था। इस पर भी वीणा ताना मारने का एक भी मौका नहीं छोड़ती थी और मां भी चुपचाप अनसुना कर देती। चूकिं आशी को किचन का शौक था तो हर छुट्टी वाले दिन रसोई उसी के हवाले कर दी जाती। अब उसका मन किचन में भी नहीं लगता था, मजबूरी में ही अब ये सब कर रही थी।

दो साल और निकल गए। नन्हा रेयांश अब स्कूल जाने लगा था। इतवार का दिन था, रेयांश को पिकनिक पर ले जाने के लिए पास्ता चाहिए था। रात को ही वीणा ने आशी को हुक्म सुना दिया कि कल सवेरे सात बजे तक वो रेयांश और उसके दोस्तों के लिए पास्ता तैयार रखें। तबियत ठीक न होने के कारण वो सुबह उठ न पाई। इस बात पर वीणा ने सुबह सुबह घर में हंगामा खड़ा कर दिया। अब तो आशी की सहनशक्ति जवाब दे चुकी थी। किसी ने ये नहीं देखा रात भर वो ज्वर से तपती रही, कोई उसके कमरे में झांकने तक नहीं

आया, वीणा का उंची उंची बोलना और बर्तन पटकना, इसकी आवाजे उसके कमरे तक आ रही थी। आशी की रूलाई बंद होने का नाम नहीं ले रही थी। कहां गई उसकी वो मां जिसने उसके पैरों के नीचे अपनी हथेलिंया बिछाई थी। काश कि उसे रेतीली जमीन पर चलने दिया होता, उसे दुनिया की सच्चाई से वाकिफ करवाया होता तो आज ये दिन न देखना पड़ता। समय रहते अगर उसका घर बस गया होता तो आज उसका अपना परिवार होता।

जब सब हंगामा बंद हो गया, शायद रेयांश जा चुका था, तो मां उसके कमरे में चाय लेकर आई। रोते रोते आशी की आंख लग गई थी। मां का स्नेहभरा स्पर्श पाकर वो फिर से रोने लगी। मां की आंखों में उसे बेबसी और आत्मग्लानि स्पष्ट दिख रही थी। दो दिन निकल गए। अगले दिन जब वो आफिस गई तो चुपके से अपना अटैची भी उठा कर साथ ले गई। मन ही मन उसने कुछ कड़ा निर्णय लिया था। छुट्टी की अर्जी देकर वो अपनी सहेली के पास पूना चली गई। आस्था उसकी कालिज की सखी थी जो कि शादी के बाद पूना सैटल हो गई थी। दोनों की आपस में बातचीत होती रहती थी। आस्था ने कई बार उसे शादी करने के लिए कहा, दुनिया के रीति रिवाज, उंच-नीच समझाने की कोशिश की मगर आशी ने हमेशा हंस कर टाल दिया। आस्था ने तो उसे ये भी कहा था कि अगर वो शादी न करना चाहे तो कोई जरूरी नहीं, लेकिन अपना आशियाना अलग बना ले, मां बाप तक तो फिर भी ठीक है, लेकिन बाद में मुश्किल हो सकती है। लेकिन कहते है न कि दिल के सच्चे को सब सच्चे लगते है। अब जो आशी के साथ हो रहा था उसकी तो कभी उसने सपने में भी कल्पना नहीं की होगी। भले ही मां दोषी थी, मगर वो तो उसका भला ही चाहती होगी। सारा दोष उसकी किस्मत का ही रहा। उसने मन को समझा लिया और कुछ दिन आस्था के पास रहने चली आई। एक तरफ सरल अपनी डाक्टरी में व्यस्त तो दूसरी तरफ साहिल को अपने होटल के बिजनैस से ही फुर्सत नहीं थी। सरल की पत्नी तो मुश्किल से अपने ससुराल दो तीन बार ही आई थी। आना जाना न के बराबर ही था।और अपने घर में वीणा का राज चलता, पहले पहल तो मां ने कुछ विरोध किया मगर गज भर लंबी जुबान वाली वीणा के आगे मां की भी एक न चली और कुछ इसलिए भी वो चुप रहती कि घर में शांति बनी रहे। पिताजी की मौत के बाद तो वो जैसे मौन ही हो गई और अंदर ही अंदर समय पर आशी की शादी न कर देने का गम उन्हें घुन की तरह खाए जा रहा था।

हमेशा स्वस्थ रहने वाली माधवी अब अक्सर ही बीमार रहने लगी। अक्सर शूगर कम हो जाती या बहुत बढ़ जाती।

पहले तो आशी का मन था कि घर छोड़ने की बात किसी को न बताए, मगर मां की चिंता तो थी, फालतू में ही बात बढ़ने के डर से उसने पूना पहुंच कर उसे मैसेज डाल दिया कि वो जहां भी है, सुरक्षित है, न उसकी चिंता की जाए और न ही उसे ढूढ़ने की कोशिश की जाए। सही समय आने पर वो अपने आप लौट आएगी। आस्था ने बहुत प्यार से अपने पास रखा, उसका एक पांच साल का बेटा अनुज था, जो दिन भर मौसी मौसी कह कर उसके आगे पीछे घूमता। आस्था के पति अनुभव भी बहुत मिलनसार थे। चार पांच दिन बीत गए, आशी का मन कुछ कुछ संभलने लगा, परन्तु भविष्य का सोचकर उसे मन ही मन घबराहट होने लगती। वापिस अपने शहर तो मां उसे अकेले रहने नहीं देगी। उसकी कंपनी की ब्राचिजं और शहरों में भी थी, यहां पूना में भी वो ट्रांसफर ले सकती थी, पंरतु अभी वो पद्रहं दिन की छुट्टी पर थी। कभी कुछ सोचती तो कभी अपने भविष्य की नैया को किस्मत के सहारे छोड़ कर निश्चिंत होने का प्रयास करती। एक शाम आस्था के बेटे अनुज के साथ वो शाम को पास वाले पार्क में चली गई। अनुज पार्क में खेल रहे बच्चों के साथ खेलने लगा। आशी भी सामने पड़े बैंच पर बैठ कर अपने भविष्य के बारे में सोचने लगी। बीच में मां का फोन आता लेकिन वो एक दो बातें करके ही बंद कर देती। वो घर जो उसका अपना था, अब वही सबसे पराया लग रहा था। सरल को तो शायद पता भी नहीं होगा कि वो कहां पर है, लेकिन साहिल वीणा को तो माधवी ने बता दिया था। दोनों ने कभी आशी को फोन नहीं किया।

माधवी दिन रात बैचेन रहती, लेकिन क्या करे, कहां ढूढे आशी को। साहिल को कहा तो उसका जवाब था" कोई छोटी बच्ची तो है नहीं, जो गुम हो जाएगी, आ जाएगी घूम फिर कर"। माधवी को तो ये भी नहीं पता था कि उसने कितने दिन की छुट्टी ले रखी है। "अगर वो दफ्तर जाकर पूछे तो वो क्या सोचेगें। आशी की एक सलोनी नाम की सहेली भी और कलीग को माधवी जानती थी। उम्र में अंतर होने के बाद भी सलोनी की आशी से बहुत दोस्ती थी। दोनों आपस में दुख सुख साझां कर लेती थी। सलोनी अपनी विधवा मां के साथ रहती थी। वो भी एक तरह से मुसीबत की मारी थी। उसके पिता फौजी थे जो

कि बार्डर पर देश रक्षा करते हुए बहुत पहले ही शहीद हो चुके थे। रिश्तेदारों से दिखावे का ही नाता रह गया था। सलोनी की मां बहुत स्वाभिमानी थी। कुछ पति की पैंशन और बुटीक के काम से ही उसने अपना घर चलाया और सलोनी को भी काबिल बनाया।

आशी उसे हमेशा यही सलाह देती कि समय रहते ही अपना घर बसा ले। सलोनी भी यही चाहती थी, लेकिन उसकी अपनी मां को साथ रखने की शर्त के चलते कहीं बात बन नहीं रही थी। अब हमारे समाज का क्या किया जाए। लड़के के माता पिता साथ रह सकते है, लेकिन मजबूरी में अगर लड़की की मां को सहारा चाहिए तो मुश्किल है। चलो आशी पे आते हैं, सलोनी से आशी की बात हो रही थी, क्यूंकि दफ्तर की जानकारी रखनी भी तो जरूरी है। बीच बीच में जरूरत पड़ने पर आशी आनलाईन काम भी कर देती थी, लेकिन उसने सलोनी से उसके बारे में किसी को भी बताने से मना किया हुआ था। माधवी ने सलोनी को दो तीन बार फोन किया मगर सलोनी ने इतना ही कहा कि," आंटी जी, आप चिंता न करो, वो जहां भी है, खुश है"।

पार्क में बैठी आशी अपने ही ख्यालों में जैसे डूब गई, तभी अनुज ने उसे आकर झिझोंड़ा, "मौसी ,मौसी, वो देखो, वो चुहिया मेरी बाल नहीं दे रही, कहती है मेरी है"। अनुज की बात से वो वर्तमान में लौट आई, और अनुज के कहने पर उस और चल दी जिधर अनुज उसे खींच कर ले गया। वहां बहुत ही प्यारी बच्ची बाल को अपने हाथ से पीछे छुपाने का प्रयास कर रही थी। आशी और अनुज को आते देख कर भी वो भागी नहीं बल्कि अपनी जगह पर खड़ी रही और अनुज के बार बार कहने पर भी वो बाल पर अपनी दावेदारी जता रही थी। वहां खड़े कुछ बच्चे उस बच्ची जिसका नाम पल्लू था, कुछ उसकी तरफ थे तो कुछ अनुज की तरफदारी कर रहे थे। आशी की समझ में नहीं आया कि क्या करे। तभी पल्लू के साथ आई लड़की जो शायद उसकी केयर टेकर थी, उसे घर चलने के लिए कहने लगी। अनुज ने पल्लू से बाल छीनने का प्रयास किया, लेकिन पल्लू कहां कम थी, धक्का देकर उसे गिरा दिया, इसी छीना झपटी में पल्लू की कलाई पर अनुज के नाखून से कुछ ज्यादा ही खरोंच आ गई और खून निकलने लगा। आशी को समझ न आई कि वो क्या करे। उसने अनुज को खींचते हुए एक तरफ किया और वैसी ही नई बाल दिलाने का वायदा

किया। बड़ी मुश्किल से आशी उन दोनों को अलग कर पाई। लेकिन बच्चों की इस लड़ाई में आशी को बड़ा मजा आया। कुछ समय के लिए वो अपनी समस्याएं भूल ही गई और एक पल के लिए उसके सोए अरमान जैसे जाग उठे।

तभी उसका ध्यान पल्लू की कलाई पर से बहते हल्के से खून पर गया और वो घबरा गई। पल्लू की मेड उसे घर ले जाने वाली थी कि तभी एक बच्चा झाड़ियों के पीछे से वैसी ही एक बाल लेकर भागता हुआ आता दिखाई दिया। दोनों बालें एक जैसी थी, अनुज ने झपटकर वो बाल पकड़ी और गोल गोल घुमाकर देखने लगा, फिर उसने पल्लू की बाल झपट ली और दोनों को मिलाने लगा और बोला, ये पल्लू वाली बाल मेरी है, मैनें इस पर ममी की नेलपालिश से निशान लगाया हुआ है, ये देखो, और सचमुच ही बाल पर एक लाल सी बिंदी लगी हुई थी। अब पल्लू का मुंह देखने लायक था। आभा ने पल्लू की हालत समझते हुए उसे प्यार से अंक में भर लिया और पुचकारते हुए बोली, कोई बात नहीं बेबी, हो जाता है। तभी मेड ने उसकी बांह पकड़ते हुए घर ले जाना चाहा। पल्लू को घबराई हुई देखकर जैसे आशी की ममता उमड़ पड़ी। "चलो अनुज, हम इसे घर छोड़कर आते हैं, कहां है इसका घर"। "यहीं पास में ही है," अनुज उछलकर बोला चारों पल्लू के घर की और चल पड़े, अनुज के घर के रास्ते में ही था। बाहर नेमप्लेट पर लिखा हुआ जी. के. महता (हाई कोर्ट जज)। तो पल्लू के पिता जज है, तभी इतनी निडर बेटी है। अंदर जाकर देखा तो व्हील चेयर पर एक बुजुर्ग औरत बैठी कोई किताब पढ़ रही थी।

"दादी मां, दादी मां, देखो मेरे साथ कौन आया", पल्लू चहकते हुए बोली। बुजुर्ग औरत ने मुस्कराते हुए नजरें उपर उठा कर आशी की नमस्ते का जवाब दिया। अनुज ने भी पल्लू की दादी के पैर छुए। पार्क की सारी कहानी मेड मीना ने ब्यां कर दी। थोड़ी देर बैठने के बाद आशी चलने को हुई तो पल्लू की दादी शकुंतला ने चाय पी कर जाने के लिए कहा। इससे पहले की आशी कुछ कहती मीना चाय ले भी आई। सकुचाते हुए आशी को फिर बैठना पड़ा, और समय बिताने के लिए आशी ने पल्लू के ममी पापा के बारे में पूछ लिया। उसने सोचा कि शायद वो काम से नहीं लौटे होगें। तभी बाहर गाड़ी रूकने की आवाज सुनाई दी। अगले मिंट ही एक सजीला सूटड बूटड पुरूष अंदर आया,

साथ में शायद ड्राईवर होगा जो उसका बैग लैपटाप वगैरह रख कर सलाम करता हुआ चला गया। उसे देखते ही आशी का चेहरा जर्द हो गया। वो तो उसके साथ काम करने वाला एडवोकेट गौतम ही था। कनपटी से थोड़े बाल सफेद हो गए थे और चश्मा लगा हुआ था, जो कि उसके व्यक्तित्व को और बढ़ा रहा था। "अब मैं चलती हूं मांजी, बहुत अच्छा लगा आपसे मिलकर, बहुत प्यारी बच्ची है पल्लू" कह कर उसने अनुज की उंगली पकड़ी और तेजी से बाहर निकल गई। जब वो दोनों इकट्ठे काम करते थे तो गौतम बहुत ही शर्मीला और चुपचाप सा रहने वाला लड़का था। दोनों में आफिस संबधी कुछ कुछ बातचीत होती थी, लेकिन आंखों की भी अपनी एक अलग ही भाषा होती है और वो भाषा कुछ न कहकर भी सब कह जाती है। उन दिनों हालात ऐसे थे कि बात आगे बढ़ ही नहीं पाई। गौतम अपने कैरियर बनाने में लगा था और आशी की परिस्थिती अलग ही थी।

चाय पीते पीते शकुंतला ने गौतम को पार्क की सारी घटना सुना दी। उसके आगे गौतम क्या पूछता, चुपचाप अपने कमरे में चला गया। उसे लगा कि अनुज आशी का बेटा है और आशी ने सोचा कि पल्लू की ममी कहीं बाहर होगी। घर जाकर जब आस्था को पूरी बात का पता चला तो उसने सिर्फ इतना ही कहा, "बेचारी बिन मां की बच्ची"। दरअसल पास में ही तो घर था तो आस्था पल्लू के परिवार को जानती थी। बातों बातों में ही आशी को पता चल गया कि पल्लू की ममी अब इस दुनिया में नहीं है। उसको जन्म देते ही वो चल बसी। बहुत कॉम्पलीकेटिड केस था। मां या बच्चे में से किसी एक को ही बचाया जा सकता था। डाक्टरों की पूरी कोशिश के बाद भी पल्लू की ममी राधा बच न सकी। भगवान की मर्जी के आगे किसकी चलती है, यह कह कर आस्था तो उठ कर अपने कामों में लग गई। मगर आशी सोचने लगे। आठ दस साल तो हो गए होगें, जब गौतम और आशी इकट्ठे काम करते थे। अपनी मेहनत से वो कहां से कहां पहुंच गया और अपने बारे में सोचकर वो फिर से अपनी दुनिया में लौट आई।

आशी की छुट्टियां खत्म होने को थी, न जाने क्या सोचकर उसने दस दिन की छुट्टी और बढ़वा ली। शाम को अनुज के साथ पार्क में जाती , वहीं पल्लू भी मीना मेड के साथ आती और वो पल्लू से खूब बातें करती। बहुत

बातूनी बच्ची थी। चाहते हुए भी वो फिर पल्लू के घर न जा सकी। वो गौतम से मिलना चाहती थी, लेकिन कैसे। गौतम भी आशी से मिलना चाहता था लेकिन बात फिर वही। पुरानी बात भूलने में ही भलाई, वैसे भी गौतम की नजर में वो शादीशुदा और अनुज की मां थी। दरअसल जज होने के नाते गौतम को आसपास वहां सब जानते थे, लेकिन वो कम लोगों को ही जानता था। आस्था के पति अनुभव को वो पहचानता था, उस दिन बच्चों की बाल वाली घटना से उसे लगा कि आशी अनुभव की पत्नी है। इसे संयोग कहे कि भगवान की मर्जी अनुज का जन्मदिन था तो आस्था ने आसपास के सभी बच्चों को शाम को पार्टी में बुलाया। पल्लू भी आई, सब बच्चों ने खूब मस्ती की। रात हो गई थी तो मेड मीना घर जा चुकी थी। शंकुतला ने गौतम को पल्लू को अनुज के घर से लाने के लिए कहा। गौतम कभी वहां गया नहीं था। अनुज के हाथ से बना कार्ड वहां पड़ा था, जिस पर ऐड्रैस लिखा हुआ था। कुछ ही दूरी पर तो घर था। गौतम को वहां जाने के लिए बहुत झिझक लग रही थी मगर और कोई चारा भी तो नहीं था। गौतम जब वहां पहुंचा तो सब उसे देखकर बहुत खुश हुए। पद्रहं बीस बच्चों के इलावा चार पांच के पेरेंटस भी थे। आशी से भी आंखे मिली और अभिवादन की रस्म तो होनी ही थी। वो तो आशी को ही अनुज की मां समझ रहा था। हमउमर होने के साथ साथ आशी और आस्था की पोशाक भी सादा सी थी। वैसे तो आशी सूट वगैरह पहनती थी मगर आस्था के कहने पर आज उसने भी साड़ी डाल रखी थी। आस्था का मंगलसूत्र टूट गया था तो कई दिन से वो हल्की सी चेन ही पहन रही थी और सिदूंर वगैरह भी वो कम ही लगाती थी। आजकल जमाना मार्डन हो गया है।

खाना पीना खत्म होने पर सब जाने को हुए, पल्लू अभी भी उछलकूद कर रही थी। लगभग सब जा चुके थे। आस्था और आशी कामों में लगी हुई थी परन्तु बीच बीच में आशी की नजरें कई बार गौतम से मिली। आखिर गौतम ने पल्लू को घर चलने के लिए राजी कर लिया तो आस्था और अनुभव जज साहब को बाहर तक छोड़ने जाने लगे, तभी आस्था को जैसे कुछ याद आया उसने आशी को जज साहब से उसका परिचय करवाया और बताया कि वो उसकी सहेली है और कुछ दिनों के लिए आई है, एक दो बातें और भी बताई। मन में कुछ संशय लेते हुए गौतम पल्लू को लेकर वहां से चले गए। आशी के जाने में दो दिन ही बचे थे। आखिर कितनी छुट्टी और बढ़वाती। आस्था को आशी

की चिंता भी थी, दोनों में आशी के परिवार के रवैये की बातें हो चुकी थी। आस्था भी चाहती थी कि आशी की किसी अच्छी जगह शादी हो जाए, लेकिन ये सब इतना आसान नहीं था। आस्था को कुछ शक सा हुआ कि आशी के मन में कुछ है, वो कहना भी चाहती है और नहीं भी। अगले दिन जब दोनों बैठी तो आस्था ने गौतम की बात छेड़ दी, न जाने कैसे उसके मन में ये बात आई, भले ही वो पक्की सहेलियां थी परन्तु अपनी कुंवारी सहेली के लिए शादीशुदा और एक बच्ची के बाप का रिश्ता सुझाना, आस्था को कुछ अटपटा सा लगा। वैसे दूसरी तरफ देखा जाए तो वो गौतम के बारे में भी कितना जानती थी, लेकिन फिर भी उसे लगा कि अब सैंतीस साल से ऊपर उम्र हो जाने पर रिश्ता होना थोड़ा मुश्किल तो है। अब अगर बाकी सब ठीक है तो विचार तो किया जा सकता है। बात बने न बने ये किस्मत की बात है। आस्था की बातें सुनकर आशी चुप रही, जितना कुछ गौतम के बारे में वो जानती थी, सब बता दिया।

आस्था जब अपनी और से कहानी पूरी कर चुकी तो आशी के मुंह से सिरफ इतना ही निकला कि वो तो गौतम को पहले से ही जानती है, उसके साथ काम कर चुका है। "अरे, ये वही वकील तो नहीं, जिसकी कभी तूने बात की थी मजाक मजाक में बहुत पहले मेरे साथ। और हां, याद आया, ये भी कहा था कि मैं अपने कदम इस राह पर आगे नहीं बढ़ाती क्योंकि चलनी तो मां की ही है, और इसकी आर्थिक स्थिती को देखते हुए मां दूर से ही मना कर देगी और तूं मां की मरजी के खिलाफ जाना नहीं चाहता थी"। आशी मुंह से कुछ नहीं बोली सिर्फ हां में सिर हिलाया। अरे तुझे एतराज न हो तो मैं कोशिश करती हूं, दोनों का ही घर बस जाएगा और पल्लू को तो तुझसे बहुत लगाव हो गया है। लगता है भगवान की भी यही मर्जी है, तभी ये सारा खेल रचा। तूं कल की टिकट कैंसल कर और कुछ दिन छुट्टी और बढ़वा, भले ही तनख्वाह कट जाए। शाम को मैं अनुभव से भी सलाह करता हूं। आशी के लिए बहुत मुश्किल समय था। मन में एक विचार आता एक जाता। जब वो गौतम के साथ काम करती थी तो वो उसको अच्छा शालीन लड़का लगता था, वो उससे सीनीयर थी, उम्र में नहीं, औहदे में। उसकी आंखों में उसे प्यार, अपनापन दिखा लेकिन वो इग्नोर करती, बाकी मुंह से उसने भी कभी कुछ नहीं कहा। लगभग दो साल वो इकट्ठे रहे, फिर उसने जाब छोड़ दी थी। फिर वो अब जिंदगी के इस मोड़ पर मिले। गौतम के पास धन दौलत इज्जत की कमी नहीं थी मगर परिवार अधूरा

था, दूसरी और आभा के पास नौकरी औहदा पैसा सब था, लेकिन परिवार होते हुए भी नहीं था। एक भाई ने कभी खोज खबर नहीं ली, दूसरे के पास रह कर भी अपनापन नहीं मिला। भाभी ने तो यहां तक कह दिया कि ये उसका घर ही नहीं है। और हर समय अपनी चलाने वाली मां तो अब जैसे किसी और ही दुनिया में रहती है।

अगर ईंट, पत्थर के मकान को घर कहते है तो वो अपना अलग घर चाहे जब बना ले, लेकिन अपनापन, प्यार, परवाह, इंतजार वो कहां से लाए। अगले दिन जब आस्था ने गौतम के बारे में उसकी मर्जी जाननी चाही तो उसने सिर झुका लिया और चुप रही। "तो मैं तेरी चुप्पी को तेरी हां समझू", ठीक है, तो मैं सोचती हूं कि आगे क्या किया जाए। वैसे तुम दोनों का रिश्ता हो जाए तो बहुत बढ़िया, जहां पल्लू को मां का प्यार मिलेगा वहीं तुम दोनों के मूक प्यार को एक नाम, शायद यही कुदरत भी चाहती है। संयोग से अगले दिन इतवार था, जज साहब का फोन नं तो किसी के पास था नहीं, आस्था और अनुभव नाशते के बाद उनके घर चले गए। गौतम घर पर ही था। बहुत ही आदर भाव से दोनों का स्वागत हुआ। शंकुतला देवी भी वहीं थी। बिना कोई ज्यादा भूमिका बांधे आस्था ने आशी से रिश्ते की बात कही। शंकुतला को तो मानों मुंह मांगी मुराद मिल गई। जिस दिन वो उसके घर आई तो उसे भी अनुज और उसके रिश्ते का पता नहीं चला, वो तो मां ही समझ रही थी, लेकिन बाद में पल्लू की बातों से पता चला कि वो अनुज की मौसी है, लेकिन आज ये पता चला कि वो आस्था की बहन जैसी सहेली है।

वो तो कब से गौतम को फिर से विवाह के लिए कह रही थी, लेकिन गौतम को डर था कि विमाता पल्लू के साथ न जाने कैसे बर्ताव करे। शकुंतला ने आस्था के सामने ही गौतम की राय जाननी चाही तो उसने कुछ समय मांगा और ये भी कहा कि वो एक बार आशी से अकेले में मिलना चाहेगा। आशी के परिवार के बारे में थोड़ा बहुत बता कर दोनों लौट आए। बाद में गौतम ने मां को बताया कि वो आशी को बहुत पहले से जानता है। " ये तो और भी अच्छी बात है, अब मुझे लग रहा है कि ये वो ही लड़की है जो तेरे साथ गुड़गांव में काम करती थी"। क्योंकि आस्था ने जब आशी के परिवार का बताया था तो उसी से शंकुतला देवी ने अंदाजा लगा लिया था। गौतम और आशी को मिलने

का मौका दे दिया गया था, वैसे भी वो दोनों काफी मैच्योर थे। जहां एक और गौतम शादी में तामझाम नहीं चाहता था वहीं आशी तो घर वालों को बिना बताए ही कोर्ट मैरिज करना चाहती थी। दोनों ने और भी बहुत सी बातें क्लीयर कर ली थी ताकि बाद में कोई गलतफहमी न रहे। आशी को मां से डर था कि कहीं वो दोहाजू को या पल्लू को लेकर कोई बखेड़ा न खड़ा कर दे। अब वो किसी प्रकार की अड़चन नहीं चाहती थी, जिसको जो सोचना है सोचे। उसने अपने आफिस में पूना ट्रांसफर के लिए भी मेल डाल दी थी। एक तो उस कंपनी की पूना में भी ब्रांच थी दूसरा आशा का नौकरी का रिकार्ड अति उत्तम था। ट्रांसफर न भी हो तो भी आशा को नौकरियों की कमी नहीं थी।

आस्था और अनुभव के सहयोग से सब बढ़िया हो गया और दो दिल मिल गए। पल्लू तो दिन भर आशा के आगे पीछे घूमती परन्तु अनुज कई बार उदास हो जाता कि उसकी प्यारी मौसी पल्लू के घर चली गई। बच्चा क्या जाने दुनियादारी। जब आशी की ट्रांसफर के आर्डर आ गए तो आशी को चार्ज वगैरह देने के लिए गुड़गांव जाना ही था। आस्था, अनुभव, अनुज, पल्लू, और नव विवाहिता जोड़ी सब गुड़गांव आए तो आशी के घर में सब चकित रह गए। परन्तु ऐसे दामाद को पाकर सब खुश थे। मां ने बेटी से बहुत गिले शिकवे किए परन्तु भाई भाभी की तो बोलती बंद हो गई। पल्लू को जब बताया कि ये उसका ननिहाल है तो वो तो खुशी से यहां वहां उछलती रही। उसे अपने ननिहाल का तो पता ही नहीं था क्योंकि उन्होनें अपनी बेटी के मरने के बाद सारे रिश्ते तोड़ दिए थे।

आशी और गौतम जब अगले दिन आफिस गए तो सब हैरान भी और खुश भी और फिर आशी के जाने का गम भी। गौतम को तो जैसे सबने हाथों हाथ लिया, इस उम्र में इतनी बड़ी पदवी पर होना कोई मामूली बात नहीं थी। गौतम ने दो दिन बाद वहीं पर होटल में बहुत बड़ी पार्टी रखी जिसमें आफिस और कुछ घर के खास लोग शामिल हुए। बहन की इतने अच्छे घर में शादी होने पर डाक्टर भाई भाभी भी दौड़े चले आए जो पहले कई बरसों से नहीं मिले थे। आशी की मां बेटी की बिदाई पारंम्पिरिक रीति रिवाज से करना चाहती थी। आशी को दुल्हन की तरह सजाया गया। मां की इच्छाओं का मान रखते हुए आशी चुपचाप सब करती रही। आशी ने मां की सब बातें भुला दी थी, मन से

तो वो बेटी का भला ही चाहती थी। विदाई से पहले वीणा भाभी किसी काम से आशी के कमरे में आई, वहां मां के इलावा बड़ी भाभी डा. हरिता भी बैठी थी। आशी ने भरे हुए दिल से वीणा का हाथ पकड़ते हुए कहा, " संभालों अपना घर, मैं अपने घर जा रही हूं, वैसे तेरा मेरा घर नहीं होता, मां बाप का घर बेटे बेटियों दोनों का होता है, कानूनी तौर पर दोनों का हक बराबर है। अभी तक हमारे समाज में बेटियां हक से ज्यादा महत्व रिश्तों को देती है"। वीणा के साथ साथ हरिता की आंखे भी झुकी हुई थी। बोलने को कुछ नहीं बचा।

अपने हुए बेगाने

"मां, पिताजी नहीं दिख रहे, इतनी धूप में कहां गए, फिर बीमार पड़ जाऐगें", सागर ने मां से पूछा। दरअसल आज वो आफिस से जल्दी घर वापिस आ गया था। यह समय सागर के पिताजी का चाय पीने का था और साथ में टी वी पर न्यूज देखने का। पिताजी को घर में न देखकर सागर का यह पूछना स्वाभाविक ही था।

"आज कचहरी में तारीख थी तो इसी लिए" सावी ने आधी बात बीच में ही छोड़ दी, और ठंडा सांस लेते हुए चाय की ट्रै मेज पर रख दी। सावी की तबियत ज्यादा ठीक नहीं रहती थी, घर में फुल टाईम मेड शीला थी, पंरतु वो आज जल्दी चली गई थी और सागर की पत्नी सान्या अभी दफ्तर से नहीं लौटी थी।

औफ्हो, ये पिताजी भी ना, कब अपनी जिद छोड़ेगे, यह कह कर सागर ने बेमन से चाय पी और उदास सा अपने कमरे में चला गया। सागर, सान्या, सावी और रितेश के साथ साथ प्यारी सी आरजू का हंसता खेलता परिवार था। हर तरफ खुशहाली ही खुशहाली, बहन बाणी की शादी हो चुकी थी, वो भी अपने परिवार में व्यस्त थी, कभी कभी तीज त्यौहार पर ही आती।

किसी समय सागर का परिवार गांव में रहता था। वहां शुक्ला परिवार के नाम से दादा, दादी और ताया जी दिनेश का परिवार भी था उनके तीन बच्चे दो बेटियां और एक बेटा था। दिनेश, रितेश और सबसे बड़ी थी मोहनी बुआ। सागर को बहुत ज्यादा तो याद नहीं मगर कुछ कुछ याद था कि कैसे सारे बच्चे मिलजुल कर रहते, खूब धमाचौकड़ी करते। फिर उसके पिता रितेश की देहली में बैंक में नौकरी लग गई और वो सब वही शिफ्ट हो गए। प्रमोशन के बाद पिताजी की कई बार ट्रांसफर हुई परन्तु परिवार वहीं पर रहा। दूसरी और ताया जी ने भी गांव छोड़ दिया और दूसरे शहर जाकर प्रोपर्टी डीलर का काम शुरू कर दिया, परन्तु वो जगह गांव के पास ही थी तो उनका परिवार गांव में ही रहा।

दादाजी का काफी बड़ा दो मंजिला पुश्तैनी घर था और कुछ जमीन भी थी। अपने समय में उनका साहूकारी का काम भी था और जमीन से भी अच्छी आमदन थी। रितेश यानि कि सागर के पिताजी ने होस्टल में रह कर अच्छी पढ़ाई कर ली थी तो नौकरी में लग गए, लेकिन ताया जी ने गांव के स्कूल से ही बारहवीं पास करने के बाद वहीं पर अपना काम शुरू कर दिया था। गांव में प्रोपर्टी का काम कुछ खास नहीं चला तो वो वहां से पास के ही कस्बे और आस पास के एरिया में काम शुरू कर दिया। बाद में काम खूब चल निकला तो वहीं शिफ्ट हो गए। अपनी बहुत सुंदर बड़ी कोठी भी बना ली। मोहनी बुआ दोनों भाईयों से बड़ी थी, तो उसकी शादी तो पहले ही हो गई। दसवीं पास ही कर पाई, उन दिनों लड़कियां इतनी ही पढ़ाई कर पाती थी। बहुत अच्छा घर मिला था।

समय के साथ साथ सब बच्चे बड़े हो गए। सागर की बहन और ताया जी की बेटियों की शादी हो गई और फिर सागर की और ताया जी के बेटे परिमल का भी विवाह हो गया। परिमल भी ग्रेजुऐशन के बाद अपने पिता के साथ प्रौप्रटी का काम ही संभालने लगा, उसकी पत्नी रेनू पढ़ी लिखी थी लेकिन नौकरी नहीं करती थी। इधर सागर और सान्या दोनों एम.बी.ए. थे और मल्टीनैश्नल कंपनी में जाब करते थे। कुछ समय पहले दादा दादी चल बसे। वो ज्यादातर गांव में ही रहते थे। कभी कभी बीच में सागर के तायाजी के पास चले जाते। आए तो देहली भी कई बार लेकिन वहां उनका ज्यादा मन नहीं लगता था, हालांकि बहुत बड़ा चार पांच कमरों वाला अपार्टमैंट था रितेश का, मगर गांव की फिज़ा की बात ही कुछ और थी। दादाजी के निधन के पांच साल बाद भी दादी अकेली ही गांव में रही।

दोनों बेटों ने बहुत कहा मां को साथ चलने के लिए लेकिन वो नहीं गई और गांव में वो अकेली कहां थी। सागर के ताया जी का हफ्ते दो हफ्ते में काम के सिलसिले में चक्कर लग जाता था। और लोकल रिश्तेदार भी आते जाते रहते। रितेश वैसे तो कम ही आते परन्तु साल में एक बार परिवार सहित आते। पहले पहल तो सब दीवाली या होली पर जरूर इकट्ठा होते लेकिन फिर धीरे धीरे यह सिलसिला कम होता गया। कभी किसी को काम तो कभी किसी बच्चे का इम्तिहान, बस इसी प्रकार दूरियां बढ़ती गई। सबके बच्चे बड़े हो गए

थे, शादियां भी हो गई, जहां मोहनी बुआ के दो बेटे और एक बेटी, तो सागर के ताया की दो बेटियां और एक बेटा और सागर की एक बहन थी। सभी के सभी बचपन में गर्मियों की छुट्टियों में गांव आते और कितने मजे करते।

वो बड़ी मां के हाथ की बनी मक्की, बाजरे की रोटी और ताजा मक्खन, दही और खेतों की ताजा सब्जी। कभी खेतों पर जाना और झूले झूलना, छोटे बड़े एक हो जाते, लड़कियां अपनी अलग टोली बना लेती तो लड़के अपनी अलग महफिल जमा लेते। कुल आठ कजनस थे, सागर सबसे छोटा था तो उसे बहुत प्यार मिलता। दस साल पहले जब दादी जी का स्वर्गवास हो गया तो परिस्थितियां बदल गई। अंतिम बार सब वहां इकट्ठे हुए। वह उनका पुशतैनी गांव था। सागर के दादा तीन भाई थे, उनके परिवारों के कुछ सदस्य भी वहीं पर थे जबकि कुछ शहरों में भी चले गए। दो तीन परिवार तो विदेश में भी बस चुके थे, लेकिन बुजुर्ग कभी कभार मौका लगता तो मिल लेते। कोई भी गांव आता तो कोशिश रहती कि सबको मिला जाए।

सागर के दादा का साहूकारा काम तो बहुत पहले बंद हो चुका था क्योंकि सेहत काम नहीं करती थी। उनकी जमीन का काफी हिस्सा सरकार की किसी योजना के आधीन उसके अंदर आ गया था, जिसका उन्हें अच्छा मुआवजा भी मिला। सागर के दादाजी बहुत नेक दिल और दूरदर्शी भी थे। तीनों बच्चों की शादियों हो चुकी थी। बची हुई जमीन भी उन्होंने बेच दी थी और काफी रूपए उन्होंने दोनों बेटों को दे दिए। रितेश ने बड़ा फ्लैट खरीद लिया और बड़े बेटे दिनेश ने मकान तो पहले बना लिया था उन्होनें अपना बिजनैस बढ़ा लिया। इधर रितेश की अच्छी पैंशन थी और बेटा बहू नौकरी भी करते थे। कहने का भाव कि दोनों परिवार अत्यतं खुशहाल थे। मोहिनी बेटी को भी उन्होंने अपने जीते जी जो मन में आया या उन्हें ठीक लगा दे दिया था। वो जानते थे कि मोहनी भाईयों से कुछ नहीं मागेंगी। एक तो वो अपने घर से अच्छी थी दूसरी बात सरकार ने भले ही लड़कियों को हिस्सेदारी का पूरा हक दिया है, लेकिन आज भी मायके की जायदाद में हिस्सा लेने वाली बेटी को हमारा समाज अच्छी नजर से नहीं देखता, कोई बहुत जरूरतमंद हो तो अलग बात है। चलो ये अलग किस्सा है, अगर बात करें मोहिनी बुआ की तो वो तो सिरफ मायके की इज्जत और भाईयों की खुशी चाहती थी।

मसला खड़ा हुआ जब सागर की दादी की मृत्यु हो गई। तेरहवीं के बाद सब अपने अपने घरों को चले गए। लेकिन मोहनी अपने पति के साथ कुछ दिन और रही। वो दोनों बुजुर्ग हो चुके थे, कब तक रहते। एक बार तो घर को ताला लगा दिया। घर की पुरानी नौकरानी के पास बाहर की चाबी थी, वो हफ्ते में एक बार सफाई कर देती थी। उसको मोहिनी पैसे देती, आखिर बिना पैसों के कोई क्यों काम करेगा। रिवाज के मुताबिक पहली बरसी का समय आ गया तो मोहनी के कहने पर एक बार फिर सारा परिवार इकट्ठा हुआ। जब सब हो गया तो रात को सारा परिवार सोने की तैयारी में था। रितेश और दिनेश उपर से तो चुप लग रहे थे लेकिन मोहिनी उनका चेहरा पढ़ सकती थी। आखिर बड़ी बहन थी, दोनों भाईयों को बढ़ते देखा था। दिनेश उससे पांच साल और रितेश आठ साल छोटा था।

मोहनी ने दो दिन पहले आकर ही सारा इंतजाम कर दिया था। सावी की तबियत ज्यादा ठीक नहीं रहती थी और दिनेश की पत्नी रजनी तो ससुर की मौत के बाद बहुत कम गांव आई। एक तो सबके अपने अपने परिवार हो गए, दूसरा वो शुरू से ही बातचीत कम ही करती थी। कोई माने चाहे ना लेकिन बेटियों से मायके का मोह नहीं छूटता। उम्र में तो वो सबसे बड़ी थी, लेकिन भगवान की दया से उसकी सेहत काफी अच्छी थी और फिर उसने अपनी जिम्मेवारी समझी क्यूंकि भाई तो दोनों ही मस्त कह लो या व्यस्त कह लो। रात को जब सब बच्चे अपने अपने कमरों में चले गए तो मोहनी ने रितेश और दिनेश को अपने कमरे में बुलाया, उसके पति रमेश भी वहीं थे। भाईयों के मन की बात वो उन्हीं के मुंह से सुनना चाहती थी।

मोहनी ने सीधे सीधे ही पूछ लिया कि अब आगे क्या करना चाहिए क्योकिं माता पिता की और से कोई वसीयत नहीं थी। पिताजी की मौत के बाद दोनों भाई बामुश्किल दो तीन बार ही गांव आए, जबकि मोहिनी ने कई चक्कर लगा दिए थे। उसे मां का अकेलापन बहुत सालता था। सागर की मां सावी को गांव और घर की बहुत याद आती थी मगर रितेश कोई न कोई बहाना बना कर गांव आना टाल देते। पहले तो रजनी गांव में ही रहती थी, बाद में वो साथ वाले छोटे से शहर में शिफ्ट हो गए थे। उसे लगता था कि बड़ी बहू पर ही जैसे घर का सारा भार हो। मुंह से तो कम बोलती थी लेकिन उसे लगता कि सावी की

तो शहर में रहकर ऐश है। इधर रितेश को लगता कि पिताजी ने दिनेश भईया के बिजनैस में बहुत पैसा लगा दिया। मोहनी के बच्चों की शादियों में भी अच्छा खासा खर्च हुआ लेकिन सब सागर के दादा ने ही किया, ये सब भी रजनी को चुभता था जबकि सावी तो खुश थी। पोते पोतियों की शादी में भी सबको नेग मिले थे लेकिन अपनी अपनी सोच की बात है।

मोहिनी के पूछने पर दोनों भाई पहले तो चुप रहे लेकिन फिर दिनेश ने कहा कि मकान पर मेरा हक है क्योंकि मैनें ही अन्तिम दिनों में मां बाप की सेवा की है। यह सुनकर रितेश का मुंह लाल हो गया और उसने अपना आधा हिस्सा मांगा। मतलब कि मकान को बेच दिया जाए और दो बराबर हिस्से कर दिए जाएं। मोहनी जो शातिं से उनकी बातें सुन रही थी, आखिर उसे बोलना ही पड़ा, "हिस्से दो नहीं, तीन बनते है"। यह सुन दोनों भाईयों के मुंह फक हो गए।"दीदी, हमें आपसे ऐसी उम्मीद नहीं था", रितेश बोला। "क्या उम्मीद नहीं थी, पैसा आता किसे बुरा लगता है"। मोहिनी ने कहा। मां के गहने कहां हैं, अक्सर आप ही आती थी मां के पास, अब दिनेश के दिल की बात जुंबा पर आ गई। "मां के सब गहने शादियों में लग गए, जो तीन चार तोले पहना हुआ था, बस वही है" समय आने पर दे दूंगी, हैं मेरे पास, मोहिनी ने कहा।

कुछ देर रूक कर मोहिनी बोली, "देखो, जमीन वगैरह बेच कर तो सब बाबूजी ने अपने हाथों से सबको दिया, हम सबके बच्चों के प्रति भी सारे फर्ज निभाए, सिर्फ ये घर ही हमारे पुरखों की निशानी है, अगर इसे बेच दिया तो हमारा तो गांव आना जाना ही बंद हो जाएगा। हम तीनों को कोई कमी नहीं, इस घर की कीमत ज्यादा से ज्यादा पचास साठ लाख होगी। गांव में मुश्किल से ही इतना मिलेगा। बीस बीस लाख कोई बहुत बड़ी रकम नहीं हमारे लिए, लेकिन हमारा प्यार और गांव से नाता और फिर अपने और भी अपने रिश्तेदारों से मिलना। हम और हमारे बच्चे, कभी कभार यहां आकर अपने बचपन की यादें ताजा करेगें, मतलब फिर से बचपन जी सकते है। आजकल तो लोग पैसे खर्च करके गांव की खुली हवा में सांस लेने जाते हैं।

रितेश और दिनेश दोनों को ये मजूंर नहीं था। प्रोप्रटी डीलर दिनेश तो घर को तोड़ कर फ्लैटस बनाने की सोच रहा था क्यूकिं आजकल उन्हीं की डिमांड है और रितेश बैंक अधिकारी को कैश की चाहत थी, जबकि मोहिनी तो

अपने मां बाप, गांव, विरासत वहां रहने वाले दूर पास के रिश्तेदारों से जुड़ कर रहना चाहती थी। सब चले गए तो बाद में दिनेश ने मकान बेचना चाहा तो मोहिनी ने साईन नहीं किए। केस कोर्ट में चला गया और कोर्ट को फैसले कितनी जल्दी होते है, सर्वविदित है। पांच साल होने को आए, फैसला तो क्या होना, आपसी बोलचाल ही बंद हो गई। मजे की बात ये कि सब बच्चों की आपस में आज भी बनती है। सागर अक्सर सोचता कि पापा और ताया जी के पास सब कुछ है, कोई कमी नहीं, फिर भी थोड़े से पैसों के लिए कैसे बेगाने बने हुए है। पद्रहं बीस लाख दोनों के लिए कोई ज्यादा मायने नहीं रखते, थे। सागर ने कई बार पिताजी से बात करने की कोशिश की थी, परन्तु वो किसी की सुने तब ना। उधर परिमल का भी यही हाल था, उसे तो शर्म आ रही थी कि उसके पिताजी ने अपने ही परिवार पर केस किया था। इतने पैसे तो वो एक डील में कमा लेते थे। सब बहनों का भी आपस में बहुत प्यार था। चुपके से राखी पर सब मिलते थे और आपस में बातचीत भी करते लेकिन बड़ो को समझाना उनके बस से बाहर हो चुका था।

उम्र बढ़ने के साथ रितेश दिनेश समझ चुके थे कि आपस में ही फैसला कर लिया जाए सब बच्चों ने अपने अपने मां बाप को कई बार समझाने की कोशिश की, कि आखिर उनके पास क्या कमी है। कुछ समय बाद एक दूर के रिश्तेदार ने मोहिनी के कहने पर फैसला करवाया। अब फैसला ये हुआ कि पंचायत के आधीन मकान के नीचे के आधे हिस्से में छोटी सी लगभग फरी डिस्पेंसरी चलेगी, और आधा हिस्सा किराए पर ताकि उसके खर्च से घर का रख रखाव हो सके और उपर का हिस्सा सभी पारिवारिक जनों के लिए खुला, कोई जब चाहे वहां पर आकर रहे। मोहिनी के पास मां के कुछ गहने थे जो कि तुड़वा कर निशानी के तौर पर अगूंठियां और एक एक लाकट जिसमें मां बाबूजी की तस्वीर थी रितेश, दिनेश और मोहिनी के इलावा सब बच्चों में बांट दी गई। बाकी बचे गहनों और एक एफ. डी. से घर की अच्छे से मुरम्मत करवा दी गई, घर खुला था, बगीचा पहले भी था, मगर सूख चुका था। पेड़ तो अभी भी हरे भरे थे। सब ठीक करवा दिया गया। सालों से बंद पड़े घर में फिर से बहार आ गई, फूल खिल उठे। बाद में मोहिनी ने सबको वो कागज दिखाया जिसमें मां ने अपनी इच्छा मोहिनी के सामने रखी थी। वो रजिस्टर्ड विल नहीं थी,पर मां की चाहत थी, हालांकि कार्यवाही उससे भी की जा सकती है, पर मोहिनी इसके

हक में नहीं थी। इससे पहले कि वो अपने भाईयों से बात करती, कोर्ट केस हो गया।

गांव वाले न केवल दवाई लेने आते बल्कि बगीचे में भी बैठते और शुक्ला परिवार को याद करते। कभी कभी अपने बेगाने तो बन जाते है लेकिन अगर सूझबूझ से काम लिया जाए और एक दूसरे की बात मान ली जाए तो हर मुसीबत का हल निकल आता है।

बोझ अपना अपना-कहानी

नई नवेली दुल्हन सिया की मुंह दिखाई की रस्म भी हो गई। सुभद्रा और पवन बहुत खुश थे और रैना और सुवीर की खुशी भी सांतवे आसमान पर थी। भाई और भाभी जो ठहरे, कौतुकी और सावन ने भी इकलौते चाचू की शादी में बहुत मस्ती की। दो महीने से तैयारियां चल रही थी। कपड़े, गहने, मिठाईयां, दोस्तों, रिश्तेदारों को न्यौता भेजने के इलावा छोटे बड़े अनगिनत काम थे। उँटी जाने का हनीमून पैकेज भी ले रखा था। रैना की मां भी शादी में आई हुई थी। बेटी को खुश देखकर वो बहुत खुश थी, उसे नाज था अपनी परविरश पर फिर भी उसने बातों ही बातों में सिर्फ इतना जरूर कहा, ध्यान रखना रैना, ज्यादा भी सिर पर मत चढ़ा लेना उस नई नवेली को। सुवीर और पवन की उम्र में सात साल का अंतर था, लेकिन शादी होने में दस साल का हो गया। सुवीर ग्रेजुएशन के बाद पिता पवन के साथ फर्नीचर की दुकान पर बैठ गया। दादा परदादा के समय लकड़ी के सामान की छोटी सी दुकान थी जिसे पवन ने अपनी सूझ बूझ से बहुत बड़ी बना ली और सुवीर ने तो और भी बढ़िया कर दिखाया। अब उनका शहर में फर्नीचर का बहुत शानदार शोरूम था।

सिया को यमन ने किसी दोस्त की शादी में देखा था। पहली नजर में ही वो उसे भा गई। दोस्त की पत्नी की रिश्तेदार ही थी। बस बात बन गई और सिया यमन की जीवनसंगिनी बन कर इस घर में आ गई। संयोग की बात कि वो उसी शहर में रहती थी, खूब पढ़ी लिखी होने के साथ साथ नौकरी भी करती थी। हर तरह से यमन के लायक या यूं कह सकते है कि सिया हर पहलू से इक्कीस ही रही होगी। दोनों परिवार इस रिश्ते से खुश थे। हनीमून से लौटकर सब अपने अपने काम पर लग गए। हमेशा की तरह पवन और सुवीर दुकान पर जाते और यमन और सिया अपनी अपनी नौकरी पर। दोनों का आफिस एक दूसरे की विपरीत दिशा में था। सिया अपने साथ दहेज में कार भी लाई थी। शादी से साल भर पहले ही उसने कार खरीदी थी, घर में एक गाड़ी और भी थी तो मां बाप ने उसे ही वो कार दे दी। सिया का भाई अभी पढ़ रहा था, पिताजी की बहुत अच्छी सरकारी नौकरी थी तो बहुत सी सहूलतें उनके पास थी।

रैना के दोनों बच्चे भी स्कूल जाते थे तो एक तरह से सुबह सुबह घर में भागदौड़ ही मची रहती। किसी का टिफिन पैक हो रहा है तो किसी के कपड़े इस्तरी हो रहे है। एक बच्चे के मौजे नहीं मिल रहे तो दूसरे की कापी न जाने कहां है। रैना और सुभद्रा सुबह जल्दी उठकर ही सब तैयारी शुरू कर देती। नाश्ता भी तो दो तीन तरह का बनता। किसी को परौंठे खाने है तो किसी को सैंडविच और बच्चों की फरमाईशें अलग से। पवन और सुवीर के लिए तो दोपहर में गर्मागर्म लंच भेजा जाता, दुकान में काम करने वाला लड़का आकर ले जाता। यमन के आफिस में कैंटीन पर सब कुछ मिलता था परन्तु वो अक्सर घर से ही खाना ले जाता, कई बार वहां पर भी खा लेता। यमन की शादी के बाद एक टिफिन रैना के लिए भी तैयार होता। उसका अलग ही डाईट प्लान होता। नाश्ते में भी उसे अपनी पंसद से कभी पोहा तो कभी इडली या फिर स्पराऊडस या फिर कभी कभी कार्नफ्लैक्स से भी काम चल जाता।

यहां तक तो फिर भी ठीक था, मुश्किल तो ये थी कि वो सुबह जाने से थोड़ी देर पहले ही बताती थी कि उसे क्या खाना है। उठती भी देर से और काम में भी हाथ नहीं बंटाती थी। घर में पूरा समय एक नौकरानी थी, दिन में एक और भी आती थी सफाई वगैरह के लिए। घर में हर प्रकार की सुख सुविधा थी लेकिन मशीनों को चलाने के लिए भी तो हाथों की जरूरत होती है। कह जितना मर्जी लो लेकिन आज भी हमारे समाज में अक्सर घर का काम काज औरतें ही देखती है, खास तौर पर संयुक्त परिवार में। हां अगर एकल परिवार है तो पति कुछ हाथ बंटा देता है। बात करते है सिया की। एक तो बहुत अच्छे परिवार से आई थी, ऊपर से यहां बहुत लाड़ प्यार मिला। छोटे बड़े सब आगे पीछे घूमते। वो तो उन सब का प्यार था लेकिन सिया का भी तो कुछ फर्ज बनता था, मगर वो तो अपनी ही दुनिया में मस्त थी। सुबह उठ कर तैयार होना, नाश्ता करना , लंच बाक्स उठाना और आफिस निकल जाना। अक्सर तो लंच बाक्स भी यमन ही उसकी कार में रख देता। कई बार तो उसके लिए बने होते परांठे और उसे खाने होते सैंडविच। और भी कई कुछ, कई बार सुभद्रा ने सबको कहा भी कि सुबह जिसने जो खाना है, एक दिन पहले या रात को ही बता दे तो सुबह आसानी रहेगी, नहीं तो जो बना है, वही खाना होगा। बच्चों का और सुवीर का तो रैना को पता होता और पवन जी का सुभद्रा को, वैसे भी वो हल्का

खाना ही खाते थे। यमन को जो मिल जाए खा लेता, नखरे तो सिया के थे। सब को भेजकर जो नाशता बचता सास बहू वो ही खा लेती।

छः महीने निकल गए, रैना तो चुप थी मगर सुभद्रा को कई बार गुस्सा आ जाता। घर खर्च में भी यमन सिया कुछ खास योगदान नहीं देते थे। पवन जी का ये मानना था कि भले ही दुकान बहुत अच्छी चलती थी, मगर जब सब कमाते है तो खर्च करने का फर्ज भी तो सब का बनता है। इतने बड़े परिवार का खर्च भी कोई कम नहीं था। सिया अपने पर तो खूब खर्च करती लेकिन घर के लिए कुछ नहीं। शायद वो सोचती होगी कि ये सब काम यमन का है। इससे पहले कि सुभद्रा कुछ कहती घर में नन्हें मेहमान की खुशखबरी आ गई। अब तो सिया और भी फरमाईशे करती जो कि पूरी करनी ही थी। समय आने पर उसने बेटी को जन्म दिया और अगले साल ही बेटा हो गया। अब घर में चार बच्चे हो गए, खर्च के साथ साथ काम भी बढ़ गया। वैशाली और गौरव की देख रेख भी सुभद्रा और रैना करती। बच्चों के लिए एक आया अलग से रख ली गई, खर्च का भी कुछ हिसाब किताब हो गया लेकिन सिया का स्वभाव बिल्कुल नहीं बदला। उसका अपनी वही रूटीन। आफिस जाना और आकर अपने कमरे में आराम करना। बच्चों का सारा काम दादी ताई या फिर आया के जिम्मे।

सुबह तो जाना ही होता है, रात को तो रसोई में हाथ बंटाया ही जा सकता है, साथ में आदमी चार बातें भी कर लेता है। लगभग पांच साल होने को आए मगर आज तक सिया ने रैना और सुभद्रा से कभी ढ़गं से बात नहीं की। बड़ी मुश्किल से काम की बात होती। उन दोनों ने कहीं घूमने जाना है, सिया ने मायके जाना है या कुछ भी बात, सब बातें यमन ही बताता। इजाजत लेना तो बहुत दूर की बात थी। बच्चे भी मां से ज्यादा परिवार के और लोगों के साथ ज्यादा खुश रहते। वैशाली और गौरव भी अब स्कूल जाने लगे। दो दिन पहले न जाने कैसे सब्जी काटते वक्त सुभद्रा के हाथ में चाकू लग गया। काफी गहरा घाव हो गया था। काम तो कर ही नहीं सकती थी। और फिर कुछ दिन पहले रैना की मां की तबियत बहुत खराब हो गई तो उसे मायके जाना पड़ा। उसका मायका चार घंटे की दूरी पर था। इधर बच्चों के पैपर शुरू होने वाले थे। पहले वो जब भी मायके जाती बच्चों को साथ ले जाती मगर अब मजबूरी थी।

बाई भी कितना करती, दो दिन में ही सुभद्रा की बुरी हालत हो गई।अगले दो दिन पवन को अकेले ही दुकान पर जाना पड़ा, भले ही काम करने वाले रखे हुए थे लेकिन गल्ले पर तो मालिक का होना जरूरी है। बच्चों के लिए सुवीर घर पर रहा। यमन उन दिनों कंपनी की तरफ से दस दिन के लिए विदेश गया हुआ था। मजबूरी में सुभद्रा ने सिया को छुट्टी लेने के लिए कहा। वो मीटिंग का बहाना बना कर चली गई। घर के हालात ज्यादा बिगड़ते देख उसने एक दिन की छुट्टी ली और अगले दिन इतवार था।

उसे तो समझ ही नहीं आ रही थी कि कौनसा काम कहां से शुरू करे, बड़ी मुश्किल से जरूरी जरूरी काम निबट पाया, सबको ब्रैड ही खाने को मिली। लंच डिनर में मुश्किल से एक दाल सब्जी बन पाई। रायते की जगह दही से काम चलाया। मीठा बनने का तो सवाल ही नहीं था, आईसक्रीम मंगा ली गई। भले ही बच्चों को आईसक्रीम पंसद होती है मगर रैना उनके लिए कभी खीर, हलवा, कस्टर्ड, फ्रूट करीम के इलावा कई तरह की आईसक्रीम घर पर ही तैयार कर देती। बात भी ठीक है आजकल लोग बाहर के खाने पर बहुत निर्भर हो गए है, दिन रात जब जी चाहे आडर्र करो, थोड़ी देर में ही खाने का पैकेट आपके द्वार पर, लेकिन लोग ये परवाह नहीं करते कि खाना कैसे, कब और कैसी सामग्री से बना है, कौनसा घी तेल प्रयोग किया गया है। कुछ खाना बाहर से भी मंगा लिया गया।

अगले हफ्ते हालात कुछ ठीक हो गए। सुभद्रा का हाथ भी ठीक हो गया। रैना भी अपनी ममी के कुछ ठीक होते ही वापिस आ गई और यमन भी विदेश से आ गया था। पवन को पिछले दिनों कुछ अच्छा नहीं लगा। उसे महसूस हुआ कि अब कुछ निर्णय लेने का समय आ गया है। ऐसे हालात फिर न बने, आजकल वो इस सोच में रहते। सुभद्रा से सलाह मश्वरा किया और शनिवार की रात सब को डिनर के बाद कुछ देर वही बैठने को कहा। कौतुकी सब बच्चों से बड़ी थी तो उसे और बाकी तीनों बच्चों को दूसरे कमरे में उनकी मनपंसद मूवी लगाकर अलग से व्यस्त कर दिया गया। सब हैरान थे कि बहुत कम बात करने वाले बाबूजी को आज क्या हो गया। जब सब बैठ गए तो पवन ने बिना किसी भूमिका के अपनी बात रखते हुए कहा कि मुझे तुम दोनों से जरूरी बात करना है। दोनों सैटल हो चुके हो और तुम्हारा अपना अपना परिवार

भी पूरा हो गया है। समय आ गया है कि सब अपनी अपनी जिम्मेवारी का बोझ उठाओ। यमन तुम घर की उपर वाली मंजिल में शिफ्ट हो जाओ। एक कमरा बना हुआ है, बाकी तुम अपनी जरूरत मुताबिक बना लो। यह सुनते ही यमन और सिया के चेहरे का रंग उड। गया। "लेकिन बाबूजी, ऐसा क्यों, सब ठीक तो चल रहा है, और फिर इतना खर्चा" यमन की बात अभी पूरी नहीं हुई थी कि पवन ने कहा, क्या ठीक चल रहा है, पिछले दिनों के हालात तुम्हें पता नहीं क्योकिं तुम यहां पर नहीं थे। और रही बात खर्च की तो जब से तुम कमा रहे हो, सिया की भी बहुत अच्छी सैलरी है, याद करो आज तक तुमने कितने पैसे घर में दिए या कौनसा घर का सामान खरीदा। तुम्हारी शादी पर भी सब खर्चा दुकान की आमदन से ही हुआ। अपने ऊपर जो खर्च किया वो किया। अगर उपर घर नहीं बनाना तो तुम्हारे पास इतनी जमा पूंजी तो होगी कि घर खरीद सको या फिर किराए पर रहो, मरजी तुम्हारी है। जब तक इंतजाम नहीं हो जाता यहीं पर रह सकते हो लेकिन अपना अपना कर्तव्य समझो। जिस तरह शरीर का बोझ खुद उठाना होता है, उसी प्रकार अपनी जिम्मेदारी भी समझनी होती है। जरूरत पड़ने पर किसी का सहारा ले सकते है लेकिन सहारा देने की प्रवृति भी हो।

पवन कहना तो बहुत कुछ चाहते थे लेकिन आज के लिए इतना ही बहुत था। सीधे शब्दों में भले ही न कहा गया हो, मगर असली वजह सिया ही थी और यमन ने भी कभी ध्यान नहीं दिया। औरतों के लिए नौकरी करना या न करना अपनी जरूरत और मर्जी है, मगर अपने हिस्से का काम तो करना है चाहिए। अक्सर सयुंक्त परिवारों में ये खींचातानी होती है। घर खर्च भी बांट लिया जाए, नौकर भी हो मगर कुछ काम खुद करना या उनकी और ध्यान देना भी जरूरी होता है। नौकरीपेशा औरत अगर ये सोचे कि वो तो नौकरी करती है तो जो घर में रहते है काम वही करे। ये एक गल्तफहमी है, घर सभांलना ही पूरा काम है, अगर हम उसी काम के लिए नौकर रखते है तो वो कितना लेते है, सब जानते हैं। नौकरी करने वाले पर भी कम बोझ नहीं होता। यहां जरूरत आपसी तालमेल की है। सब कुछ जानते हुए भी सुभद्रा चुप रही क्यूकिं वो स्थिति बिगाड़ना नहीं चाहती थी। आखिरकार बात अपने ही बच्चों की थी।

पिछले दिनों जब रैना गई हुई थी तो सिया को भी समझ आ गया था। यमन ने पिताजी से कहा कि धीरे धीरे सब ठीक हो जाएगा , हम इकट्ठे ही रहते हैं।मगर पवन अब फैसला ले चुके थे, और उन्हें इसी में ही सब की भलाई दिखी। जिम्मेवारी का अहसास तो खुद से होना चाहिए। सुभद्रा की उम्र का तकाजा था , इस उम्र में कुछ न कुछ तकलीफ तो शरीर को रहती ही है। बेचारी रैना पर ही अधिक बोझ था। आगे आगे बच्चे भी बड़े हो रहे थे। स्कूल से लौटकर तो उनकी देखभाल करनी ही थी, मगर सिया तो बाद में भी ध्यान नहीं देती थी। कौतुकी और सावन के साथ साथ वैशाली और गौरव का होम वर्क भी रैना ही करवाती थी। कई बार तो पीटी ऐ की मीटिंग में भी काम का बहाना बना कर सिया रैना को जाने के लिए कह देती। वो तो रैना बहुत सुलझी हुई थी और बच्चे भी उसे 'बड़ी ममी' कह कर बुलाते थे। यमन ने मां से अलग से भी बात की मगर उसने भी पवन की इच्छा पर ही सहमति जताई।

सिया से सलाह मशवरा करके उपर दो कमरे और किचन वगैरह बनवाने का नक्शा तैयार हो गया। पैसे तो उनके पास थे। मन ही मन सिया को बहुत डर लग रहा था कि वो सब कैसे मैनेज करेगी। नौकरी, बच्चे, घर बाहर का काम। आज तक उसने कभी भी घर के कामों में दिलचस्पी ली ही नहीं थी। जब दिल किया पार्टियों में चली गई, पार्लर हो आई या जहां भी दिल चाहा। लेकिन अब समय आ गया था अपनी जिम्मेवारी समझने का। इधर मकान बनना शुरू हुआ तो उधर सिया ने भी रसोई की और रूख किया। सुभद्रा और रैना ने बड़े प्यार से उसे वो सब सिखाया जिसकी उसने इच्छा की। यमन को तो घर बनवाने का कुछ भी तजुर्बा नहीं था लेकिन पवन ने सुवीर के सहयोग से सारा काम बढ़िया तरीके से करवाया। अगले छः महीने में सब तैयार हो गया। उपर वाले घर के साथ साथ नीचे वाले पुराने घर की भी मुरम्मत करवा दी गई। जरूरत के मुताबिक बहुत से बदलाव कर दिए गए।

हाऊस वार्मिंग का जशन खूब धूमधाम से हुई। सब लोग पवन सुभद्रा की सूझबूझ की प्रशंसा कर रहे थे कि समय रहते उन्होंने बहुत अच्छा फैसला लिया। अब यमन का परिवार उपरी तल पर और सुवीर पहले की तरह नीचले हिस्से में रहता। कहने को तो पवन और सुभद्रा नीचे रहते लेकिन उनकी थाली में एक दो डिश ज्यादा ही मिलती। जो खास नीचे बनता वो पहले उपर जाता

और उपर का नीचे। बच्चों की तो और भी मौज लगी रहती। जहां दिल किया खेल लिया, खा लिया और शनिवार की रात को तो चारों एक ही कमरे में सोते ताकि रात को खूब बातें करे, मनपंसद कार्टून या कुछ भी देखे और सुबह आराम से उठे।

सब कुछ बढ़िया से सैट हो गया, घर वही, लोग वही सिरफ सब एक दूसरे के दु:ख सुख में पहले से ज्यादा साथ देते, और ये भी समझ आ गया था कि देर सवेर अपना बोझ खुद ही उठाना पड़ता है। यही समाज का नियम है और इसी में सब की भलाई है।

अतीत की यादें

नीति को इस सोसायटी में आए लगभग एक महीना होने को आया, परन्तु अभी तक किसी से भी ज्यादा जान पहचान नहीं हो पाई थी। बस यहां वहां आते जाते मुस्कराहट तक ही सीमित रहा। उसके बिल्कुल सामने वाले फ्लैट में कोई होता तो शायद बातचीत हो जाती, मगर उस पर तो ताला पड़ा था। नीति अभी तक इतना ही जान पाई कि वो विदेश गए है। ये भी पता नहीं चला कि घूमने फिरने गए है, कुछ समय के लिए बच्चों के पास गए हैं या फिर पक्के तौर पर वहीं रहते हैं और यहां कभी कभार आते हैं।

जैसा कि आजकल होता है, सोसायटी में पार्क, जिम, स्वीमिंग पूल, मार्किट हर प्रकार की सुख सुविधा थी। सोसायटी के बाहर भी पूरी बाजार ही थी। बेटी शादी के बाद अमेरिका चली गई और बेटे ने एम. बी. ए. करने के बाद बैंगलौर में नौकरी ज्वाईंन कर ली थी। मिस्टर रवि निगम यानि कि नीति के पति अक्सर आफिस के काम से टूअर पर ही रहते, अगले दो साल में रिटायरमैंट भी थी। काफी समय से किराये के घर में ही रह रहे थे। बहुत मेहनत से अपना आशियाना बना पाए। नीति कई बार घर पर अकेली ही होती तो उसका बिल्कुल भी मन न लगता। उसे याद आते वो दिन जब शादी करके वो निगम परिवार की बहू बनी। कितना भरा पूरा परिवार था। दो देवर, एक ननद, और रवि के माता पिता के इलावा उसके दादा दादी भी जिंदा थे। दादा दादी गांव में अक्सर रवि के चाचा के पास रहते थे। रवि के पिताजी नौकरी के सिलसिले में देहली आ गए थे तो यही के होकर रह गए।

रवि भाई बहनों में सबसे बड़ा था। समय के साथ पढ़ लिख कर सब सैटल हो गए। कभी दिन त्यौहारों पर ही मिलना होता। बुजुर्गों में अब आशीर्वाद देने के लिए रवि के पिताजी ही थे जो ज्यादातर रवि के सबसे छोटे भाई अनीश के साथ रहते थे। गांव में कुछ जमीन और एक काफी बड़ा घर रवि के पिता के हिस्से आया था, वहां अब रवि का भाई अनीश रहता था, जो जमीन की देखभाल भी करता और औरगेनिक खेती में भी उसकी काफी दिलचस्पी थी।नीति समय

बिताने के लिए पार्क चली जाती या फिर मार्किट का चक्कर लगा आती। हमेशा की तरह आज सुबह जब वो अपनी चाय और अखबार के साथ बाहर बाल्कनी में आकर बैठी तो उसे सुखद आश्चर्य हुआ। हमेशा बंद रहने वाला दरवाजा खुला था और एक खूबसूरत पर्दा भी नजर आ रहा था। नीति काफी समय तक उधर देखती रही, लेकिन कोई बाहर नहीं निकला न ही कोई अंदर गया।

"चलो आ गए हैं तो मिल भी लेगें", यह सोचते हुए नीति अंदर आ कर अपने काम में लग गई। उसकी आदत थी कि खाना खाकर वो थोड़ी देर सुस्ता लेती या कुछ पढ़ लेती और फिर शाम की चाय पीकर सोसायटी के अंदर या बाहर के बड़े पार्क में घूमने निकल जाती थी। आज भी उसने चाय रखी ही थी की दरवाजे की घंटी बजी। "कौन हो सकता है", मन ही मन यह सोचते हुए उसने पहले की- होल से देखा तो उसे एक अनजान मगर सुंदर सी औरत दिखी। आजकल बहुत सी अनचाही घटनाएं सुनने को मिलती है तो सतर्क रहना जरूरी है। उसने अंदर से सांकल लगाते हुए थोड़ा सा दरवाजा खोला तो सामने वाली ने उसे बिना कुछ पूछने का मौका देते हुए दोनों हाथ जोड़कर नमस्ते कही और कहा कि वो खुशी है और सामने वाले घर में रहती है। नीति को यह सुनकर अंदर से बहुत खुशी हुई, उसने पूरा दरवाजा खोल कर अंदर आने के लिए कहा। सकुचाते हुए खुशी अंदर आकर बैठ गई। "बस दो मिंट, मैं अभी आई, गैस आन है" यह कह कर नीती रसोई में गई और जल्दी ही दो कप चाय और कुछ खाने को साथ लेकर आ गई।

"अब बैठकर आराम से बातें करते है", यह कह कर नीति ने चाय का कप खुशी की और बढ़ा दिया। 'ओह, मैं तो अभी चाय पीकर ही आई हूं', पर फिर भी यह कहते हुए उसने कप पकड़ लिया। दरअसल पिछले छः महीने से खुशी और उसका पति आस्ट्रेलिया में अपने बेटे के पास गए हुए थे। कुछ महीने पहले ही खुशी पहली बार दादी बनी थी। वो नीति के पास कामवाली बाई के लिए बात करने आई थी और मिठाई भी लाई थी। थोड़ी देर में ही दोनों आपस में ऐसे घुलमिल गई जैसे बरसों से एक दूसरे को जानती हो। खुशी ने बताया कि उसके दो बेटे है, बड़े के पास तो वो गई हुई थी और छोटा पूना में जाब करता है। नीति यानि कि नीति महता ने भी अपने परिवार का बताया। खुशी से ये भी पता चला कि उसके पति आर्किटेक्ट हैं और आजकल आनलाईन काम

की सुविधा रहती है तो उनकी अनुपस्थिती में उनका स्टाफ काम संभाल लेता है। 'आर्किटेक्ट' शब्द से एक बार तो नीति को जैसे कुछ याद हो आया, लेकिन जल्दी से अपने आप को संभालकर वो मुस्करा दी। बातों बातों में नीति की शाम की सैर तो मिस हो गई मगर खुशी से मिलकर उसे सचमुच ही बहुत खुशी हुई।

दो दिन के बाद रवि भी आ गया तो नीति ने उसे खुशी के बारे में बताया। इसी बीच वो और खुशी दो तीन बार आते जाते ही मिली। नीति की मेड शांति ने खुशी के घर भी किसी को काम पर रखवा दिया था। इसी बीच खुशी का छोटा बेटा भी आया हुआ था। वो भी नजर आया मगर महता साहब नहीं दिखे। एक दिन नीति मार्किट से आ रही थी, उसके दोनों हाथों में सामान था। लिफ्ट के पास खड़ी थी, लिफ्ट के अंदर जाने को हुई तो एक थैला बाहर ही गिर गया और लिफ्ट का दरवाजा बंद होने लगा, तभी अंदर खड़े किसी आदमी ने लिफ्ट को रोक लिया और वो अंदर आ गई। उसकी सांस फूल रही थी, फिर भी जब उसने धन्यवाद करने के लिए चेहरा उपर उठाया तो देखती ही रह गई। वो भी उसे एकटक देखे जा रहा था। तभी लिफ्ट रूकी और वो दोनों एक ही फ्लौर पर बाहर आए। नीति की हैरानी और भी बढ़ गई जब वो खुशी के फ्लैट में चला गया। तो यह महता साहब है। अंदर जाकर वो बैठ गई और सोच में डूबती उतरती रही। तीस साल पुरानी बातें उसकी आंखों के सामने एक एक करके आ रही थी। ग्रेजुएशन करते ही उसके लिए रिश्ते की तलाश शुरू हो गई थी। उसे आज भी याद है उसकी प्रिय सखी सुधा की शादी में कितनी हंसी ठिठोली हुई थी। शायद ये लड़का (खुशी का पति) दूल्हे के मित्रों या दूर की रिश्तेदारी में था। रिबन कटाई हो या जूता चुराने की रस्म, सब में शामिल था मगर चुपचाप देखकर मुस्कराता रहता। स्वभाव से शर्मीला लग रहा थी परन्तु पूरे प्रोग्राम का आंनद उठा रहा था। जयमाला के समय अगर वो उसे न सभांलता तो पक्का वो नीचे धड़ाम से गिरती। हुआ यूं था, जैसा कि जयमाला के समय कभी लड़के के दोस्त या फिर लड़की की सहेलियाँ या भाई उसे मजाक मजाक में उपर उठा देते है और थोड़ी देर हंसी मजाक का माहौल चलता है, तभी वो स्टेज से गिरने को हुई थी और विवेक ने उसे सभांल लिया। कुछ सैकेंड के लिए उनकी आंखें चार हुई लेकिन फिर वो थैक्सं कहते हुए वहां से भाग ली। इसी बीच उसकी ड्रैस की एक सुंदर सी लटकन उसके कोट में उलझ गई जिसे सुलझाने में एक दो मिनट लग गए। मगर उसके बाद पूरी शादी

में वो उसके सामने आने से बचती रही। कुछ महीनों बाद ही उनकी और से रिश्ता आया। उन दिनों फोटो भेजने का रिवाज था।

नीति की मां ने जब उसे फोटो दिखाई तो सुधा की शादी वाला पूरा किस्सा उसके सामने आ गया परन्तु उसे वो पतला, सांवला सा लड़का पंसद नहीं आया और अभी वो आगे पढ़ना भी चाहती थी। बस बात आई गई हो गई। नीति को पक्का था कि खुशी का पति यही है, विवेक नाम है शायद इसका। अब कितनी शख्सियत निखर गई थी उसकी। भरा पूरा शरीर, थोड़े से कनपट्टियों से सफेद बाल और रौबीली चाल। हो भी क्यूं ना, प्रभु कृपा से सब कुछ था उसके पास जिसकी हर एक को सुखी गृहस्थ जीवन के लिए कामना रहती है। बात तो वैसे कुछ नहीं थी लेकिन फिर भी नीति को विवेक के सामने आने से झिझक महसूस होती। उसे थोड़ा सा ये भी डर था कि अतीत का पता चलने पर रवि उसका कुछ गल्त मतलब ही न निकाल ले, जबकि वो जानती थी कि रवि बहुत बिंदास तबियत का है। लेकिन मन तो मन ही होता है। उसने खुशी से भी दूरी बना ली थी। खुशी का सैर करने या मार्किट वगैरह जाने के लिए फोन आता तो वो कोई न कोई बहाना बना देती।

उस दिन उसकी हैरानी की सीमा न रही जब देर तक सोने वाला रवि सुबह तैयार होकर सैर करने निकल गया। तीन चार दिन और ये सब चलता रहा। नीति खुश भी थी और हैरान भी। दरअसल वो स्वयं सुबह की जगह शाम को सैर पर जाती थी, सुबह का समय उसका रसोई में निकल जाता था। कई बार रात को खाने के बाद वो दोनों टहलने निकल जाते। कुछ और लोगों से मेल मुलाकात भी हो जाती। आज भी जब वो रात को सोसायटी के पार्क में डिनर के बाद टहल रहे थे तो खुशी और विवेक भी मिल गए। विवेक और रवि तो यूं गले मिले जैसे पुराने मित्र हो। पांच छः लोग और भी मिले, दरअसल ये सभी सुबह की सैर की मंडली थी, मगर नीति चुप सी रही। खुशी की बातों का जवाब भी बस हूं हां में ही दिया। कुछ देर बाद सब अपने अपने घरों को चले गए। रवि ने रात को बताया कि सामने वाले फ्लैट में रहने वाले विवेक बहुत अच्छे इंसान है, दोनों में बहुत दोस्ती हो गई है और सुबह की सैर वो दोनों इकट्ठे करते है। रवि उसकी ही बातें करता रहा। "अच्छे पड़ोसी मिलना भी एक तरह से सौभाग्य है, नहीं तो जीना मुश्किल हो जाता है"। ऐसे ही बातें करते करते

रवि की आंख लग गई परन्तु नीति को बैचैनी सी होती रही। आखिर ये अतीत क्यूं उसके सामने आकर खड़ा हो गया और वो भी हमेशा के लिए।

कई बार उसे ये भी लगता कि वो बेवजह परेशान हो रही है। उसकी तो विवेक से जान पहचान भी नहीं थी, वो तो एक संयोग था। कुछ दिन और निकल गए। इतवार की एक सुबह काम से फरी होकर वो काफी का आंनद ले रही थी कि तभी खुशी आ गई। वो तो आजकल उससे दूरी बना कर रखने की कोशिश करती परन्तु जब कोई घर में ही आ जाए तो शिष्टाचार तो निभाना ही पड़ता है। रवि कहीं बाहर थे। मेड से कह कर उसके लिए भी काफी का आर्डर दे दिया। इधर उधर की बातें होने लगी। आजकल नीति को खुशी के साथ से असहजता सी महसूस होने लगती। जब से विवेक से मिली ये सब हो रहा था। अभी काफी बन रही थी, खुशी ने नीति का हाथ अपने हाथों में लेकर पूछा कि क्या उसकी तबियत ठीक नहीं।" नहीं, नहीं, मैं बिल्कुल ठीक हू, बस थोड़ी सी थकान महसूस हो रही है, शायद बीपी कुछ नीचे ऊपर हो जाता है कई बार" धीमे से स्वर में नीति ने कहा।

मुझे पता है तुम्हारे बीपी और थकान का कारण, खुशी ने बड़ी सरलता से कहा। अच्छा, मतलब तुम डाक्टर हो, नीति भी कुछ सहज हो चली। "मेरी प्यारी सखी, तुम्हारे दिल में जो ऊहापोह चल रही है ना कई दिन से , मैं जानती हूं"। मतलब, नीति ने कुछ कांपती सी आवाज में पूछा। "मुझे सब बता दिया विवेक ने कि तुम दोनों किसी शादी में मिले थे और रिश्ते की बात भी चली थी" खुशी ने आराम से पैर पसारते हुए कहा। नीति कुछ न बोली सिर्फ एक टक खुशी की और ताकती रही। "अरी फिर क्या हो गया, इसमें इतना सोचने वाली क्या बात है", कौनसा तुम्हारा अफेयर चल रहा था, रिश्ता आया, नहीं हुआ, कौनसी बड़ी बात है। अफेयर चलता तो भी क्या, जिंदगी में बड़े मुकाम आते है, कई बार मजिंल नहीं मिलती।

"और अच्छा हुआ ना, नहीं तो विवेक जैसे प्यारे पति मुझे कैसे मिलते"। खुशी की बात अभी पूरी ही नहीं हुई थी कि पीछे से रवि की आवाज आई" और मुझे नीति जैसी सुदंर और समर्पित पत्नी", वो दोनों न जाने कब से पीछे खड़े उनकी बातें सुन रहे थे। अतीत की यादें ठहाके में बदल कर चारों को गुदगदा गई और सब काफी की चुस्कियों का आंनद लेने लगे।

परी हूं मैं

"उफ्फ, कितनी गर्मी है आज तो, जान ही निकल गई, कार से उतर कर घर तक आते आते ही ये हाल हो गया"। मनन ने आते ही शर्ट उतारकर दूर फेंकते हुए कहा। बेटी नव्या भी मुंह बनाते हुए अपने कमरे में घुस गई। बिना कुछ बोले शीतल ने आकर सबसे पहले पंखे, ऐ.सी चलाया और फिर तीन गिलासों में फ्रिज से बोतल निकाल कर पानी डाला और मनन को और नव्या को उनके कमरों में देकर आई। पानी पिया और चेंज करने चली गई। दरअसल मनन के बॉस की बेटी की शादी थी। नव्या तो जाना भी नहीं चाहती थी, परन्तु शीतल उसे घर पर अकेला छोड़ना नहीं चाहती थी। मेड छुट्टी पर थी। बहुत बड़े होटल में सारा कार्यक्रम दिन में ही था। लिफ्ट खराब होने के कारण चार मजिंल तक सीढ़ीया चढ़ने के कारण सब की हालत बुरी हो गई थी, खास तौर पर शीतल की।

शीतल का मन चाय पीने को हो रहा था, पर किससे कहे, मेड आई नहीं और नव्या का तो रसोईघर से दूर दूर का भी नाता नहीं था। बीस साल की होने वाली है, शीतल ने कई बार घर का कुछ छोटा मोटा काम सिखाने की कोशिश की परन्तु वो किसी न किसी बहाने टाल जाती। मनन भी उसी की तरफदारी करते और वो तो अपने आप को पापा की परी समझती थी। शीतल कई बार चिढ़ भी जाती और समझाने की कोशिश भी करती कि कल को शादी होगी, तब क्या करेगी। मनन उसकी बात हंसी में उड़ा देते और कहते कि कोई बात नहीं, पढ़ाई पूरी कर ले, सब सीख जाएगी। मास्टर डिग्री होते ही वो नौकरी करने लगी। कुछ समय बाद ही करन से रिश्ता हो गया। घर बार सब बढ़िया था। जल्द ही शादी हो गई। करन और उसके घर वाले न तो लेन देन के और न ही शादी में बहुत ज्यादा ताम झाम के इच्छुक थे, परन्तु नव्या के घर वाले अपनी इकलौती बेटी की शादी अत्यंत धूमधाम से करना चाहते थे। भव्य आयोजन और कीमती तोहफों के साथ साथ मंहगी कार भी आई।

करन का एक भाई और एक बहन भी थे। सारे परिवार ने नव्या का खुले दिल से स्वागत किया। उनका परिवार नव्या जितना अमीर नहीं था, परन्तु अच्छे खाते पीते और इज्जत दार लोग थे। करन के ममी पापा शांतनु और राधिका की सरकारी नौकरी थी और करन भी किसी मल्टीनेशनल कंपनी में उच्च ओहदे पर था। अपना खुद का बहुत बड़ा घर था। दो तीन महीने तो घूमने फिरने में हंसी खुशी निकल गए। नव्या ने भी अपनी नौकारी पर जाना फिर से शुरू कर दिया था। करन के भाई सागर और बहन आला की पढ़ाई भी अगले दो सालों में खत्म होने वाली थी। वैसे तो पढ़ाई कभी खत्म नहीं होती मगर एक पड़ाव तो होता ही है। नव्या की असली तस्वीर धीरे धीरे अब सामने आने लगी थी। घर गृहस्थी में उसकी कोई दिलचस्पी वैसे ही नहीं थी। चलो वो भी चला गया। घर में कामकाज के लिए पूरा दिन भावना रहती थी। दिन में साफ सफाई के लिए भी हैल्पर थी।

नव्या को किसी से मिलना जुलना भी पंसद नहीं था। आला ने भाभी के साथ मिलकर क्या क्या सपने संजोए थे, और सागर भी भाभी के साथ मस्ती मजाक करना चाहता था, लेकिन सब की मन की मन में ही रह गई। नव्या के साथ साथ अब करन का चाय नाश्ता भी अपने रूम में ही होता। दोनों के लंच बाक्स अपनी अपनी गाड़ी में रखने की डयूटी भावना की लग चुकी थी। काम से आकर भी अपने अपने कमरों में चले जाते थे। घर बहुत बड़ा था तो नव्या ने करन के कमरे में अपना सामान न रख कर उसके साथ वाला कमरा यह कह कर ले लिया कि एक कमरे में दोनों का सामान रखने में मुश्किल होगी, और अपने हिसाब से रेनोवेशन भी करवा ली, बाहर की और तो दरवाजा था ही, बीच से भी रखवा लिया। रात के खाने का भी कोई समय नहीं। शांतनु और राधिका जरूर इकट्ठा खाते। आला और सागर तो पहले भी अपने हिसाब से खाते थे। आला अपनी डाईट के हिसाब से खाती और सागर कभी बाहर या कुछ मनपंसद आनलाईन। नव्या और करन का भी कुछ निशचित नहीं था। पहले पहल तो राधिका ने उनका इंतजार किया, नव्या की पंसद नापंसद जानने की कोशिश की परन्तु उसकी बेरूखी से आहत राधिका ने भी अपने मन को समझा लिया।

नव्या ने कभी किसी से कुछ पूछने या सलाह लेने की जरूरत नहीं समझी। जो मन में आया वही करती। शांतनु और राधिका का परिवार बहुत ही सस्कारों वाला था। रिश्तेदारों मित्रों के साथ उनके बहुत अच्छे संबध थे। यूं कह सकते है कि नए और पुराने रीति रिवाजों का मेल था। कोई किसी से उंची आवाज में बात तक नहीं करता था। हमेशा हंसने बोलने वाला करन भी जैसे घुटा घुटा सा रहता। कई बार राधिका ने करन से नव्या के व्यवहार के बारे में बात करनी चाही तो वो चुप्पी साध जाता। नव्या का मायका लोकल ही था और चार पांच किलोमीटर में ही आफिस घर सब था। जब जी करता मायके चली जाती, रातें भी वही रह लेती। सिर्फ करन को ही पता होता था। कभी कभी करन भी ससुराल में ही रूक जाता, लेकिन वो घर पर बता देता। कितने अरमान होते है जब नई बहू घर में आती है, लेकिन यहां तो घर का माहौल अजीब सा ही हो गया। कभी कभी अपना मूड ठीक होता तो डिनर पर आ जाती, घर में कोई आए जाए उसे कोई मतलब नहीं।

दो साल में सब नव्या के ऐसे व्यवहार के आदी हो चुके थे, लेकिन एक दिन कुछ ऐसा हुआ जैसे स्वच्छ पानी में कोई कंकर उछाल दे। आला के फोन पर नव्या का मैसेज आया, दो लाईनें पढ़ते ही उसने झट से उसे सेव कर लिया। मैसेज तुरंत डिलीट हो गया। आला समझ गई थी कि गल्ती से ये मैसेज उसके पास आ गया, शायद उसे किसी और को करना था। मैसेज शायद किसी सहेली को भेजा था नव्या ने। मैसेज कुछ इस प्रकार से था, "अरे तू फालतू में ही डरती है अपने पति और उसके घरवालों से, कुछ नहीं कर पाऐगें ये लोग। मैं तो जरा भी परवाह नहीं करती, इतना खर्चा किया है मां बाप ने हमारी शादी पर तो क्यों न अपने मन की करें। करन तो मेरे इशारों पर नाचता है। कुछ कह कर तो देखें, ऐसे ऐसे केस डालूगीं कि होश उड़ जाऐगें। ननद, देवर की शादी हो जाए, अपना हिस्सा लेकर अलग हो जाऐगें। मेरा तो मन अपने ममी पापा के पास रहने को ही करता है।"

ऐसा ही आगे काफी कुछ लिखा हुआ था। इससे आगे आला पढ़ न सकी। भाभी के ऐसे विचार जानकर जैसे वो सुन्न सी हो गई। बहुत विचार करने के बाद रात को उसने इसके बारे में ममी पापा को बताना ही उचित समझा। करन और सागर को कुछ नहीं पता था। राधिका को तो जैसे अटैक ही आ गया

हो। किसी तरह शांतनु और आला ने मिलकर उसे संभाला। उन्हें तो था कि बच्चे हो जाऐगें तो समय के साथ सब ठीक हो जाएगा, लेकिन जो गंदगी मन में भरी हो, उसका उपचार कैसे हो। समय चक्र तो चलता ही रहता है। सागर की शादी की बात चली तो उसने अपने साथ काम करने वाली मनु से शादी की इच्छा जाहिर की, दूसरी तरफ शांतनु के एक मित्र ने आला के लिए भी एक अच्छा रिश्ता सुझाया। कुछ सोचकर शांतनु ने सागर और आला के होने वाले सास ससुर से कहीं बाहर मिलने का प्रोगराम तय किया। सागर के साथ मनु और आला के साथ साथ हर्षित को भी बुला लिया गया। आला का रिश्ता करवाने वाला हरीश वहीं था। सागर की पंसद पर तो सवाल उठाने का मतलब ही नहीं था, आला का रिश्ता भी उन्हें ठीक लगा।

शांतनु ने कहा, मुझे दोनों की शादी पर कोई आपत्ति नहीं, लेकिन मेरी कुछ शर्ते है। सब उनकी और देखने लगे। वो बोले,दोनों शादियां एक ही दिन कोर्ट में होगी और एक सम्मिलित रिसेप्शन होगा जिसका खर्चा हम बांट लेगें। वैसे तो कोई लेन देन नहीं होगा, अगर फिर भी हम अपनी बेटी बहू को स्वेच्छा से कुछ उपहार देना चाहें तो उसकी पूरी लिस्ट मां बाप और कुछ रिश्तेदारों के हस्ताक्षरों सहित वकील द्वारा कोर्ट में जमा होगी ताकि कल को कोई किसी को झूठा केस बना कर प्रताड़ित न कर सके। मैं तो ये भी चाहूंगा कि सागर चाहे तो पहले से ही अपने रहने का अलग प्रबंध कर ले ताकि बाद में रिश्ते अच्छे बने रहें।

"बेटी आला, हमने तुम्हें हमेशा भरपूर लाड़ प्यार दिया, सच में बेटियां मां पापा की परियां होती है, मगर ससुराल में भी परी के साथ साथ लक्ष्मी और अन्नपूर्णा बन कर रहना। हमारे जमाने में आपसी ऐडजस्टमैंट हो जाती थी, मगर आज पढ़ाई लिखाई के साथ साथ अहंम् और नए जमाने की बहुत सी बातें है जो शायद पुरानी पीढ़ी न समझ पाए। आला सब समझ गई थी मगर सागर पापा की बातों को कुछ कुछ समझ गया, और सब शांतनु की इच्छानुसार ही हुआ।

स्वार्थ अपना अपना

पिछले तीन महीनों से मानवी न ढ़ग से खा रही है और न ही सो पा रही है। नींद में भी जैसे उसकी आंखे खुली ही रहती है। पांच साल की ईशा जब खाना मांगती है या तीन माह की दिशा जब दूध के लिए रोती है, तभी वह सचेत होती है। घर के काम यंत्रवत से निपटाती रहती है। दिशा के पैदा होने पर एक हफ्ता उसकी मां रह गई और अगला हफ्ता सासू मां रह गई। दो दो दिन बहनें और ननद भी उसका हाल चाल पूछने आई थी। उसी शहर में रहने वाली देवरानी भी दो तीन बार हो गई थी। दूसरी लड़की पैदा होने पर सभी ने पहले खुशी जताई परन्तु लगभग सभी ने ये भी कहा," बधाई हो, आजकल लड़की लड़के में कोई अंतर नहीं। लड़कियां कहां किसी से कम है। पर साथ में यह कहना भी नहीं भूली कि लड़का हो जाता तो और भी अच्छा होता, घर का चिराग तो लड़के ही होते है"।

मां ने उसे बहुत हौसला दिया, लड़कियों के गुणगान भी किए, साथ साथ एक चांस और भी लेने की सलाह दे डाली, परन्तु सास ने हमेशा की तरह ज्यादा बातचीत नहीं कि। एक हफ्ता रह कर जैसे अपना फर्ज सा निभा कर चली गई। उसी शहर में वो छोटे बेटे के पास रहती थी। मानवी के घर तो कभी कभार सुख दुख में ही आती थी। उसका पति असीम तीन भाई बहनों में सबसे बड़ा था और बहुत बढ़िया सरकारी नौकरी भी थी। देवर की किसी अच्छी प्राईवेट कंपनी में नौकरी थी। ननद दूसरे शहर में अपने घर सुखी जीवन व्यतीत कर रही थी। शादी के समय मानवी के ससुर को सरकारी आवास मिला हुआ था। पहले सब इकट्ठे रहे, परन्तु जब देवर की शादी हुई तो जगह कम पड़ने लगी, और देवरानी जेठानी में नोक झोंक भी रहने लगी तो असीम और मानवी ने अलग घर लेकर रहने में ही भलाई समझी।

बहन की शादी पहले ही हो चुकी थी। मानवी बहुत अच्छे घर की संस्कारों वाली लड़की परन्तु ज्यादा पढ़ नहीं पाई। ये वो जमाना था जब लड़कियों की शिक्षा की तरफ ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता था। देवरानी अच्छी पढ़ी लिखी थी और नौकरी भी करती थी। उसका दो साल का लड़का आर्यन था। ननद के भी एक बेटा

बेटी थे। ससुर की रिटायरमैंट पर नियमानुसार सरकारी घर खाली करना पड़ा, पंरतु कुछ समय मिलता है जब कुछ पैसे देकर रहा जा सकता है। असीम के पिताजी को रिटायरमैंट पर अच्छी एकमुश्त रकम मिली और कुछ बचत भी की हुई थी। उस जमाने में लोग कुछ न कुछ बचत जरूर करते थे ताकि आड़े वक्त काम आ सके। कुछ मंहगाई भी कम थी। ये भी कह सकते है कि ख्वाईशें भी कम थी और जरूरतें भी कम थी।

असीम के छोटे भाई हरीश और उसकी पत्नी ने भी पैसे जमा किए हुए थे, बैंक से लोन मिल गया और अच्छी सोसायटी में घर खरीद लिया गया। असीम के पिताजी ने उसे भी कई बार लोन लेकर घर खरीदने की सलाह दी, तब तो वो उसकी कुछ आर्थिक मदद को भी तैयार थे, परन्तु कुछ बात बनी नहीं। घर जायदाद भी तभी बनते है, जब किस्मत साथ दे। मानवी के पिताजी बहुत अच्छे इंसान थे और उनकी आर्थिक स्थिति भी बहुत अच्छी थी, पंरतु उस समय बेटियों की पढ़ाई की और ज्यादा ध्यान न देकर इस बात की और ज्यादा ध्यान दिया जाता था कि वो घर का काम, सिलाई, बुनाई, रसोई इत्यादि अच्छे से संभाल लें और अच्छे सस्कांर देने की भी पूरी कोशिश की जाती ताकि कल को ससुराल में यह न सुनना पड़े कि मां ने क्या यही सिखाया है या फिर और भी ऐसी कई बातें। पढ़ाई लिखाई इतनी ही जरूरी समझी जाती थी कि हिसाब किताब करना आ जाए। और अच्छा घर वर देखकर जितनी जल्दी हो सके शादी करके उसे अपने घर भेज दिया।

अब लड़कियों का अपना घर कौनसा होता है, यह कहना भी मुश्किल है और अगर कहा भी जाए तो वो बात सब पर लागू नहीं होती। मायके में लड़की को कभी तो ये कहते है कि काम सीख ले, कल को पराए घर जाना है, हमारी नाक न कटवा देना, और फिर ये भी सुनने को मिलेगा, लड़की का असली घर तो ससुराल ही होता है। शादी के बाद कहेगें, भेज दी अपने घर, अब वही घर है तेरा। दूसरी तरफ ससुराल में सुनने को मिलेगा, पराए घर से आई है। चलो ये तो सदियों से ही सुनने को मिल रहा है, या यूं कह लो कि जमाने की यही रीत है। मानवी के पिताजी ने तो उसे बारहवीं तक पढ़ाया और अपनी और से अच्छा घर वर देखकर और खूब सारा दान दहेज देकर उसकी शादी की। असीम की सरकारी बैंक की नौकरी थी, भले ही वो उस समय क्लर्क था, परन्तु अभी तेईस की उम्र थी और मानवी लगभग बीस की रही होगी। मानवी की छोटी बहन अमृता की शादी भी लगभग

इसी उम्र में हो गई। पढ़ाई में दिलचस्पी न होने के कारण दसवीं पास न कर पाई। ज्यादा कुछ फर्क नहीं पड़ता था उस जमाने में, उसकी शादी ठीक ठाक से बिजनैसमैन से हो गई। उसका अपना करियाना स्टोर था।

दोनों बेटियों की शादी से निबटकर जैसे मां बाप को सुख की सांस आती है, वही मानवी के घर भी हुआ। दो छोटे भाई थे। दोनों अच्छे पढ़े, क्योंकि उनकी पढ़ाई की और ध्यान दिया गया। औसत थे, मगर टयूशन वगैरह रख दी गई ताकि ग्रेजुऐट हो जाए। और वही हुआ, दोनों को सरकारी नौकरी मिल गई। उस जमाने में फिर भी नौकरी मिल जाती थी, आज जितनी मुकाबलेबाजी नहीं थी। शादियां तो हो ही जाती है। किस्मत की बात कि भाईयों को तो सरकारी नौकरी भी मिली और विरासत में अच्छा बड़ा घर भी और नकदी भी। जीते जी भी पापा की अच्छी पेंशन आती रही। बाद में दोनों ने वो पुराना घर बेचकर अलग अलग बढ़िया घर ले लिए क्योंकि वो घर पाश इलाके में था, तो अच्छी कीमत मिली। दोनों बहनों यानि की मानवी और अमृता की किस्मत में शायद सघर्षं लिखा था,या फिर कह सकते है कि किस्मत अपनी अपनी। अमृता का गुजारा ठीक ठाक होता रहा। उसके दो बेटे हुए। पति का स्वभाव इतना अच्छा नहीं था, लेकिन पेटभरने की और मारपीट की नौबत कभी नहीं आई।

सबसे बुरी किस्मत तो शायद मानवी की थी। जितनी सुंदर सुशील वो थी असीम भी उससे कम नहीं था। जितनी मरजी देखभाल कर शादी की जाए मगर कितना सुख मिलेगा, ये नहीं कहा जा सकता।शायद ये भी एक जुआ है। शादी के तीन चार साल तक तो सब ठीक रहा, असलियत तब सामने आई जब छोटे भाई की शादी के बाद उन्हें अलग घर लेना पड़ा। असीम को जुए की लत लगी तो बहुत पहले से ही हुई थी, मगर कुछ कम थी, और खर्चो भी कम थे। परन्तु जब सब खर्च खुद करना पड़ा तो धीरे धीरे सब सच सामने आने लगा। दिशा के पैदा होने से पहले ही उसे कुछ कुछ शक होने लगा था। कभी मकान मालिक किराए का तकाजा करने आ जाता तो कभी बिजली पानी का बिल न भरा जाता। कई बार तो गैस सिलैंडर ही न भरता।पहले पहल तो उसकी इस बुरी आदत का किसी को भी पता नहीं था, लेकिन कब तक छुपता।

मानवी अंदर ही अंदर घुटती रहती, किसी को न बताती मगर उनके हालात से सब दिखने लगा था। कई बार तो असीम आधी से ज्यादा तनख्वाह ही लाटरियों

वगैरह में लगा देता, उपर से सिगरेट शराब की लत। एक बुरी आदत कई बुरी आदतों को जन्म देती है। अब तो असीम मानवी पर हाथ भी उठा लेता था। पहले पहल तो उसके पापा ने बच्चियों पर तरस खाकर उनकी मदद की, भाई ने भी की। सबने समझाने की भी बहुत कोशिश की, लेकिन पानी सर से गुजर चुका था। सिरफ इतना ही नहीं, असीम पर तो न जाने कितना कर्ज चढ़ गया। कर्जदार घर तक आ पहुंचे। मानवी कपड़े वगैरह सिलकर मुश्किल से घर का खर्च चलाती। जब तक उसके पिता जीवित थे, वो कुछ मदद कर देते, मगर उनके जाने के बाद सब बंद हो गया। मां के पास कुछ नहीं था, वो तो खुद बेटों पर आश्रित थी। मुसीबत में तो अपना साया भी साथ छोड़ देता है, रिश्तेदारी की बात कौन करें।

मानवी के पिता ने अपनी वसीयत बहुत पहले ही बेटों के नाम कर रखी थी, वैसे भी हमारे समाज में बेटियां बहुत कम जायदाद में हिस्सा मांगती है, हालाकिं सरकार का नियम तो है। मानवी की बहन को बड़ी बहन और उसकी दोनों बेटियों की बहुत चिंता थी परन्तु वो कुछ कर नहीं सकती थी। हां चोरी छुपे या फिर राखी, टीका पर कुछ न कुछ जरूर देती, क्यूकिं उसकी अपनी बेटी तो थी नहीं।समय के साथ साथ ईशा और दिशा जवान हो चली। बहुत मुश्किल से ईशा बारहवीं तक सरकारी स्कूल में पढ़ पाई। पढ़ाई में ईशा अच्छी थी मगर कालिज की फीस भरना मुश्किल था। असीम की नौकरी भी जाती रही, उसकी अनुशासनहीनता और लापरवाही के कारण उसे सस्पैंड कर दिया गया।वहां उसने रूपए पैसे में भी गबन किया हुआ था, प्रूफ के अभाव में जेल नहीं हुई परन्तु उसे सरकार से कुछ नहीं मिला। पेंशन लगने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता था। ईशा बहुत समझदार थी, अपने बाप की हरकतों को वो बचपन से ही समझने लगी थी, परन्तु कुछ कर नहीं सकती थी। जबकि छोटी दिशा लापरवाह तबियत की थी।

बारहवीं पास करने के बाद ईशा ने कुछ कम्पयूटर वगैरह सीखा था तो कहीं नौकरी मिल गई। सुंदर तो थी ही, मासी ने अपनी रिश्तेदारी में रिश्ता तय करवा दिया। अपनी मां के हालात को देखते हुए वह तो शादी भी नहीं करना चाहती थी, मगर मासी ने समझाया कि अच्छा रिश्ता मिल रहा है, और सब मर्द उसके पापा जैसे नहीं होते। चट मंगनी, पट विवाह। सादे से समारोह में शादी हो गई, जितना खर्च हुआ वो लड़के वालों ने किया। लड़का उम्र में उससे आठ दस साल बड़ा था, परन्तु बढ़िया शख्सियत थी और पहले से ही विदेश में सैटल था। साल

बाद ईशा भी चली गई। दिशा तो और भी सुंदर थी, जहां से भी गुजरती एक बार तो सब देखते। बाप की आदतें भले ही अच्छी नहीं थी परन्तु प्रसनैलटी में कोई कमी नहीं थी और मां तो सुंदर थी ही, वो तो हालात ही ऐसे थे, परन्तु फिर भी कभी बाहर उसने कभी मुंह नहीं खोला। उसका मानना था कि कोई क्या कर सकता है। चलते फिरते ही दिशा की उसी शहर में, पास के ही गली में किसी अच्छे घर के लड़के से आंखे चार हो गई। न चाहते हुए भी दिशा को लड़के वालों को स्वीकार करना पड़ा। किसी भी तरह से दिशा लड़के के काबिल नहीं थी, न पढ़ाई में न अक्ल में और आर्थिक स्थिति की तो बात करनी ही बेमानी है। बात दहेज की नहीं इज्जत मान तो होना चाहिए। यहां तो वो भी नहीं, ऊपर से एक ही शहर। सबको इस रिश्ते पर हैरानी हुई, परन्तु कुछ समय बाद लोग तो भूल जाते है परन्तु घर वाले तो भुगतते है।

ईशा को बहुत अच्छा पति मिला, ससुराल की स्थिति मालूम थी, उसे अपनी सास से बहुत सहानुभूति हो आई। पैसों की कोई कमी नहीं थी, हर महीने मानवी के खाते में पैसे आने शुरू हो गए। ईशा के दो बच्चे भी हो गए। इसी बीच दो बार मानवी और असीम विदेश भी घूम आए। इधर दिशा को भी अच्छी ससुराल मिली, उसका पति भी बहुत अच्छे स्वभाव का, बहन शादीशुदा, कोई झंझट नहीं। सास ससुर शांत स्वभाव के, बेटे को कुछ कह नहीं पाते, मोह कह लो या लिहाज। दिशा अपनी मनमर्जी करती रहती। काम धाम कुछ करना नहीं, सजना संवरना या फिर पार्टियों में मजे करना।अब मां बाप को कोई कमी नहीं। दोनों बहनों ने मिलकर एक दो कमरे का फ्लैट लेकर भी मां के नाम कर दिया। बाप सुधरा नहीं लेकिन अब सेहत काम नहीं करती थी तो बाहर नहीं जाता था। शराब पीने के तो मजे लगे हुए थे। खाने पीने की भी कोई कमी नहीं। ईशा बाहर से पैसे भेज देती,दिशा पैसे भी देती साथ में हर छोटा बड़ा काम उसी के जिम्मे था। पति के पैसों से उसकी भी ऐश चल रही थी। अपनी अलग गाड़ी थी, मंदिर से लेकर दवाईयां खरीदने तक या फिर वैसे ही घूमने का मन, मां बेटी निकली रहती। मानवी हर छोटी बड़ी बात के लिए दिशा पर ही निर्भर हो गई। जो शौक जवानी में पति से नहीं पूरे हुए वो अब इस ढ़लती उम्र में बेटियों के पैसों से पूरे हो रहे थे।

जो रिश्तेदार कभी उनको देखकर रास्ता बदल लेते थे, अब वो ही सामने से आकर मिलते। असीम किसी से बहुत कम मिलता था, वैसे भी उसके दोस्त नहीं

थे, जो थे वो भी उसकी बुरी आदतों के कारण उससे दूर रहने में ही अपनी भलाई समझते। लेनदार भी अब जैसे भूल गए थे, कुछ को तो उसने पहले ही घर का सामान उठा कर दे दिया था। कोई दो चार बचे भी होगें तो उनकी हिम्मत नहीं होती थी मांगने की और वो कहीं आता जाता भी नहीं था। एक दो घर पर मांगने आए तो मानवी ने घर में ही नहीं घुसने दिया। क्यूकिं उस समय तो वो भी असीम के ही साथी थी और बुरे कामों में किसने क्या खर्च किया इसका हिसाब कौन रखता है। एक बार किसी लेनदार की पत्नी ने दिशा से गोलमोल बाते करके कुछ कहने की हिम्मत क्या कर ली, उसे जान छुड़ानी मुश्किल हो गई। दिशा शुरू से ही तेज तर्रार थी, दसवीं फेल होने के बावजूद भी उसने इतने पढ़े लिखे और अमीर घर के लड़के को अपने वश में कर लिया था तो बाकियों की तो बात ही क्या। दिशा ने उस औरत के पति को लेकर इतनी खरी खोटी सुनाई कि वो पतली गली से निकल गई। उस मामले में दिशा सही थी क्यूकिं उसके पिता समेत सब एक ही थैली के चट्टे बट्टे थे।

दिशा तो अपनी मां और सहेलियों के साथ खुश रहती। ईशा विदेश में थी, यहां पर उसका घर बंद पड़ा था। पहले उसका देवर और ननद उसके घर की देखभाल करते परन्तु अब चाबी दिशा के हाथ में थी। बहन के सारे काम भी वही करती। भले ही पढ़ नहीं पाई, परन्तु उसका दिमाग बहुत तेज था। घर के कामों में मन नहीं लगता था लेकिन बाहर के काम जितने मरजी करवा लो। कम्पयूटर की भी अच्छी खासी नालिज थी, चाहती तो पढ़ाई चालू रख लेती, लेकिन वो परीक्षा वगैरह देने की सिरदर्दी मोल नहीं लेना चाहती थी। नौकरी करना उसके बस में नहीं था। मजे से देर तक सोना, पार्लर जाना, रोज नई नेल पालिश लगाना; उसके प्रिय शगुल थे। बारह साल हो गए शादी को, बच्चा हुआ नहीं और उन्होनें कभी डाक्टर के पास जाने की भी जहमत नहीं उठाई।आजकल शायद ट्रैंड हो चला कि कौन बच्चों की जिम्मेवारी उठाए। अपने ही मजे करो, लेकिन वो ये नहीं जानते कि मौके पर अपना ही परिवार काम आता है।

सास ससुर की कोई चिंता नहीं। उसने उन्हें कभी पलटकर जवाब तो नहीं दिया, वो तो उससे कुछ कहते ही डरते थे, क्यूकिं बेटे को पत्नी की हर बात सही लगती थी। लड़का हो या लड़की दोनों को मां बाप की सेवा करनी चाहिए, लेकिन आजकल अक्सर लड़कियों का ध्यान मां बाप की और ज्यादा रहता है।और अपने

स्वार्थ के आगे मां बाप भी अपना ही देखते है। बिना पोते पोती का मुंह देखे देखे, एक आस लिए दिशा के ससुर दुनिया को अलविदा कह गए। सास मृदुला तो पहले भी कुछ नहीं कहती थी, अब और भी चुप रहने लगी। एक चीज़ अच्छी थी कि उसे पैसों की कमी नहीं थी, पति की अच्छी फैमिली पेंशन उसे मिलती थी और सेविंग भी थी।जब तक पति जिंदा थे, उसे दिशा की हरकतों से ज्यादा फर्क नहीं पड़ता था। परन्तु पति की मौत के बाद उसे बहुत अकेलापन लगता। घर में बच्चा होता तो भी दिल लगा रहता। बेटा सुबह ही आफिस चला जाता दिशा अपना आराम से उठती, रसोई में कभी उसे दिलचस्पी थी ही नहीं, चाय भी मेड से ही बनवाती।

काम की तो ज्यादा बात थी ही नहीं थी,मृदुला के पास बहुत समय से ही सारा काम करने के लिए दो मेड आती थी। छोटे मोटे काम वो खुद कर लेती। गली मुहल्ले में भी कोई कितना बैठे। वैसे भी उसे औरतों की यहां वहां की बातों में कभी दिलचस्पी नहीं थी। बहुत पुराने रह रहे थे तो आते जाते दुआ सलाम या फिर सुख दुख में ही आना जाना होता, वरना तो आज की भागदौड़ में टाईम ही किसके पास है। उसे कभी भी किसी की घरेलू बातों में या फिर बहुपुराण में कभी रूचि नहीं रही। मृदुला पढ़ी लिखी, उच्च और खुले विचारों वाली बहुत अच्छे परिवार से ताल्लुक रहती थी। परिवार तो दिशा का भी अत्यंत सम्पन्न था परन्तु उसके पापा की खराब रेपुटेशन के कारण वो सबसे कट चुके थे। पढ़े लिखे बैंक में कार्यकर्त आदमी की ऐसी हरकतें और उपर से नौकरी भी गई तो भला कौन उन्से नाता रखता। जिन करीबी रिश्तेदारों ने रखा भी, वो भी कुछ समय बाद मुहं मोड़ गए। दुनिया हवा के रूख के साथ ही चलती है। मृदुला को इससे कोई चिढ़ नहीं थी कि दिशा अपने मायको वालों का ध्यान रखती है या उन्हें पैसे देती है। उसका तो मानना था कि मां बाप अब जैसे भी हो आखिर तो उन्होनें जन्म दिया है। लेकिन बहू के कुछ तो फर्ज ससुराल के प्रति भी होते हैं।

दिशा के साथ तो कई कई दिन बात ही नहीं होती थी। बेटा भी कभी कभार सिर्फ डाक्टर के पास ही ले गया होगा। बहुत मजबूरी में मृदुला कभी उसके साथ गई होगी। कभी लड़ाई भी नहीं हुई, बस एक अजीब सी दीवार रहती। अब तो मृदुला अक्सर आटो से ही स्वंय अपने काम करने की कोशिश करती। वैसे तो बेटा बहू कहने पर कैब बुक कर देते परन्तु अब उसका कहने को भी मन नहीं करता था। घर की गाड़ी में बैठो या टैक्सी में, कुछ फर्क नहीं लेकिन अपनी गाड़ी में

बच्चों के साथ बैठने का भी अपना सुख है, बच्चे साथ हो तो सुरक्षा की भावना सी रहती है, परन्तु क्या किया जाए। अब तो उसका ज्यादा समय पढ़ने, टी वी देखने में या फिर सेहत ठीक हुई तो सुबह शाम साथ वाले पार्क में सैर कर आई। वहीं पास में मंदिर भी था। घंटा भर आरती कीर्तन में भी बैठ जाती। मन को जैसे सकून सा मिलता। अब तो उसकी कुछ हम उम्र सखिंया भी बन गई। हंसने बोलने से समय अच्छा बीत जाता। कभी कभी तो उसका मन करता कि जाकर किसी बढ़िया से वृद्ध आश्रम में रहना शुरू कर दे, मगर फिर मन न मानता।उसको बेटी रिया का कुछ सहारा था। नौकरी, बच्चों और पारिवारिक जिम्मेवारियों के चलते वो साल में मुश्किल से एक दो बार आ पाती, वो भी सिरफ दो तीन दिन के लिए, मृदुला अपनी परेशानियां बता कर बेटी को दुखी नहीं करना चाहती थी। वो सब समझती थी परन्तु मायके में दखल देकर वो बुरी नहीं बनना चाहती थी और न ही मृदुला उसे ऐसा करने देती।

दिशा के अभी तक बच्चा नहीं हुआ, लगभग पद्रहं साल होने को आए, शायद पहले पहल उसे जरूरत नहीं थी और अब इलाज की जरूरत थी। सास ने पहले तो कई बार समझाने की कोशिश की मगर पति की मौत के बाद तो उसने जैसे दीन दुनिया से मोह तोड़ लिया। दिशा की मां ने कभी बेटी को न अपना परिवार बनाने पर जोर दिया और न ही अपनी सास की देखरेख करने की शिक्षा दी। शायद उसकी अपनी चिंता और स्वार्थ है कि अगर उसके बच्चे हो गए तो उनकी देखभाल कौन करेगा और रही बात दिशा की सास की, जब अपना बेटा ही नहीं परवाह करता तो किसी को क्या दोष देना। स्वार्थ अपना अपना। कर्तव्य और सेवा भावना किसी के सिखाए नहीं आती वो तो मन का भाव है, मन से ही आता है। मृदुला चुपचाप सब सह रही थी, कई बार जब वो अपनी बहन और बच्चों के साथ विदेश वीडियो काल पर घंटों बाते करती तो उसके मन में एक हूक सी उठती कि काश कोई बच्चा गोद ही ले लेते, कम से कम घर तो भरा भरा रहता। लेकिन फिर वही बात समझाए कौन और समझे भी कौन, हर एक का स्वार्थ अपना अपना!

परख

"चलो न नीरा, कहीं घूम के आए", कपिल ने नीरा से मनुहार करते हुए कहा। आटे से सने हाथों से नीरा ने मुड़कर कपिल की और देखा, इससे पहले कि नीरा कुछ कहती, कपिल ख़ुद ही बोल पडा, रिटायरमैंट के बाद तो आराम कर लो, जब देखो, तुम रसोई में ही घुसी रहती हो। पहले की बात और थी, बहुत सी ज़िम्मेदारियाँ थी, संयुक्त परिवार में जब सब अपने अपने काम में लग गए तो रूद्र और मधुर के भविष्य को सँवारने में लग गए। पैसों की भी कमी थी, अब सब ठीक हो गया, हम दोनों की अच्छी खासी पेंशन आती है, और हमें क्या चाहिए। मैं तो दिन रात भगवान के बाद सरकार का धन्यवाद करता हूँ, और अपने माँ बाप का भी, भगवान को तो नहीं देखा, मगर धरती पर तो माँ बाप ही भगवान होते है। बड़े होकर हम कितनी ही डींगे हाँक ले अपनी पढ़ाई और ओहदे कि, मगर इन सब के पीछे असली मेहनत तो हमारे माँ बाप की ही होती है। रास्ता तो बच्चों को वो ही दिखाते है। यह ठीक है कि बाद में सफलता उन्हें अपनी मेहनत से ही मिलती है। बाद में भी वो कुछ कुछ कह रह थे, मगर नीरा तब तक तैयार होने चली गई थी।

जब नीरा तैयार होकर आई तो कपिल उसे अपलक निहारने लगे। ' मुझसे कहे जा रहें हैं, और ख़ुद अभी तक तैयार नहीं हुए, कुर्ते पाजामें में ही चलना है क्या' नीरा इठलाते हुए बोली। अरे हाँ, बस पाँच मिंट, मुझे कौन सा मेकअप करना है, और सचमुच ही पाँच सात मिंट में कपिल तैयार हो गए। नीरा की आँखों में भी कपिल के लिए सम्मान और प्यार साफ दिख रहा था। दोनों की जोड़ी सचमुच ही एकदूजे के लिए थी। चालीस साल से उपर हो गए दोनों की शादी को, जीवन बहुत सघंर्षपूर्ण रहा, कुछ भी थाली में परोसा हुआ नहीं मिला। पिताजी की मौत के बाद दो भाईयों और दो बहनों की ज़िम्मेदारी उन पर ही आन पड़ी, परन्तु आपसी सहयोग और प्यार से सब ठीक से निबट गया। सभी अपने अपने घरों में खुश और ख़ुशहाल थे। आजकल के व्यस्त जीवन में भले ही ज्यादा आना जाना न हो, परन्तु दिन, त्यौहार, खुशी, गमी में मिलना ही

बहुत है। दूसरी बात ये भी है कि अगर अपने खुश रहें तो मन को सकून सा तो रहता ही है।

कपिल और रीना का तो यही मानना था। दोनों बेटे रूद्र और मधुर अपने अपने परिवारों में खुश थे। रूद्र पूना था तो मधुर हैदराबाद। कपिल तो शुरू से ही कानपुर में थे। बच्चें कभी कभार छुट्टियों में या होली दीवाली आ जाते तो घर में रौनक़ हो जाती, नहीं तो दोनों की ही दिनचर्या बहुत बढ़िया थी। कपिल के पास कोई बहुत ज्यादा संम्पति नहीं थी। रहने को अच्छा घर था और कुछ सेविग्सं। एक आम मध्यमी नौकरी पेशा के पास इतना हो जाए, बहुत है। वैसे भी इमानदारी की कमाई से तो इतना ही होता है। किसी को विरासत में मिला हो या फिर उपरी कमाई हो, या बहुत बढ़िया बिजनैस हो। आने वाले समय में तो सरकारी नौकरी में पैंशन स्कीमें भी लगभग बंद ही हो रही है। परन्तु कपिल और रीना को मिल रही थी।

दोनों की जिंदगी हँसी खुशी निकल रही थी। दोनों बच्चों के दूसरे शहरों में किराए के घर थे। इच्छा तो थी कि डाऊन पेमंट देकर अपार्टमैंट ख़रीद लिए जाए, लेकिन ऐसा कुछ हो नहीं पाया था। दोनों के दो दो बच्चों के पढ़ाई के ख़र्चों के इलावा ख़ुद के भी बहुत खर्चे थे। आजकल बचत करने का रिवाज बहुत कम हो गया है। आनलाइन पेमेंट, क्रेडिट कार्ड, न जाने क्या क्या। दूर के ढ़ोल ही सुहावने होते है, वाली कहावत आजकल पूरी चरितार्थ होती है। कपिल और नीरा साल में दो चार दिन के बच्चों के पास जाते तो खुशी मिलती। घर की बनी मठरियाँ, बर्फ़ी, आचार और भी न जाने क्या क्या सामान वो ले जाती। जब भी वो आते तो भी बना कर रखती और सबकी पंसद के पकवान बनते। परन्तु समय के साथ साथ शरीर ढालने लगता है तो ताकत भी नहीं रहती। सब फरमाईश ही करते, कभी किसी बहू ने ये नहीं सोचा कि माँ को भी अपने हाथों से कुछ बना कर खिलाए। नीरा ने कभी इस और ध्यान ही नहीं दिया था। हैल्पर के होने पर भी नीरा रसोई का पूरा ध्यान रखती। माँ जी, आपके हाथ में तो जादू है, प्लीज़ आज मूँग दाल का हलवा बनाएँ, और गोलगप्पे तो आपके जैसे हल्दीराम पर भी नहीं मिलते, और भी न जाने कैसी कैसी फरमाईशें।

नीरा भी फूली न समाती, लेकिन अब उसका शरीर साथ नहीं दे रहा था, परन्तु फिर भी कामवाली की मदद से वो बच्चों की प्यार भरी फरमाईशें पूरी

करने की कोशिश करती। इस बार जब दीवाली पर सब इकट्ठा हुए तो बातों ही बातों में दोनों भाईयों ने बड़े प्यार से कहा कि ममी पापा अब हमारे साथ ही चल कर रहो, ये मकान बेच कर वहीं ले लेते हैं, सब मिल जुल कर वहीं रहेगें। दोनों घर ही आपके होगें जहाँ मन करे रह लेना। कुछ पैसे ये होगें बाकी हम बैंक से लोन ले लेगें। कपिल ने कहा कि देखते हैं। कुछ समय बाद कपिल और नीरा ने प्रोगराम बनाया कि दो महीने रूद्र और फिर मधुर के पास रहते है। उन्होनें रूद्र को अपना प्रोग्राम बताया और हवाई टिकट बुक करने के लिए कह दिया। रूद्र ने मधुर से बात की और कहा कि ममी पापा को वो पहले अपने पास बुला लें क्योकि, उसके बच्चों के एग्ज़ाम है उन दिनों, मधुर के बच्चें तो अभी छोटे हैं। मधुर के साले की शादी थी अगले महीने। वो भी टालमटोल करने लगा। चलो दोनों तक ही बात रही और कपिल और नीरा हैदराबाद आ गए। बहुत बढ़िया फ़्लैट, चार कमरे और अन्य सब सुख सुविधाएँ। एक रूम में मेड भी रहती थी। कुछ दिन तो सब ठीक रहा।

लेकिन धीरे धीरे बहु का असली रूप सामने आने लगा। ये गिलास यहाँ न रखो, कामवाली से ज्यादा बात नहीं करनी। कहने का मतलब कि छोटी छोटी बातों पर टोका टोकी, और बातें भी बे सिर पैर की। अब बुज़ुर्गों के, नौजवानों के और बच्चों के रहन सहन में तो फ़र्क़ होता ही है। नीरा की आखों की रोशनी कुछ कम हो गई थी, कई बार हाथों से कुछ गिर भी जाता, आख़िर उम्र का तक़ाज़ा, तभी बहू का मुँह बन जाता। कुछ न कुछ कहने का जैसे बहाना ही ढूढती रहती। अपने दोस्तों मित्रों से तो खूब हंस हंस कर बात करते और माँ बाप के लिए समय का रोना। कपिल ने आते ही बेटे के खाते में बीस हज़ार डाल दिए थे, सैर से आते वक्त फल सब्ज़ियाँ भी ले आते, वो तो सिर्फ यहाँ अपना अकेलापन दूर करने और बच्चों के साथ कुछ समय बिताना चाहते थे। एक हफ़्ते में ही उन्हें ऐसा महसूस होने लगा कि वो यहाँ बेतलब रह रहे हैं। नीरा के हाथों का खाना तो सबको पंसद था, लेकिन अब उनमें पहले जैसी ताकत नहीं थी।

भले ही वो सारा काम नहीं करती थी, और अपने घर का काम करने में कोई बुराई भी नहीं थी, बेटे का घर भी तो अपना ही घर है, लेकिन ये उनका भ्रम था। जब बड़ों के पास समय नहीं तो बच्चों को तो क्या कहना। उनके साथ

दो चार दिन तो रहा जा सकता है, मगर हमेशा के लिए रहना मतलब अपनी आजादी खोना। दोनों ने कुछ सलाह मशवरा किया और सोसायटी में बने पार्क वगैरह में जाना शुरू कर दिया। स्वभाव अच्छा हो तो दोस्त ख़ुद ही बन जाते है। हफ़्ते में एक बार आठ दस लोग किसी घर में चाय वगैरह के लिए भी इकट्ठेहो जाते, तीन चार कप्लस की भी दोस्ती हो गई थी। दो तीन बार नए बने मित्रों के घर जाने के बाद नीरा ने सोचा कि उन्हें भी किसी दिन अपने घर पर बुलाकर पकौड़ा पार्टी करते है। बच्चों को बता दिया। बेटा तो खुश हो गया कि चलो ममी पापा का अपना सर्किल बन रहा है, पंरतु बहू चुप रही। एक बार तो सब अच्छे से निबट गया, मगर बहू ने अगले दिन मधुर से कहा कि बाहर वाले लोग ज्यादा घर आए तो प्राईवेसी नहीं रहती।

उस समय नीरा तो नहा रही थी मगर कपिल ने सुन लिया। उसे बहुत बुरा लगा, मगर उसने बात अपने तक ही सीमित रखी। जब उनके ख़ुद के दोस्त आकर देर रात तक बैठे रहते, सिरफ इतना ही नहीं, शराब, सिगरेट, हुक्का सब चलता था, प्राईवेसी तो एक तरफ, बच्चों पर क्या असर होगा, ये सोचा किसी ने। कुछ दिनों बाद छुट्टी वाले दिन सब घूमने गए तो एक बच्चे को कपिल ने अपनी गोदी में बिठा लिया तो उसने बुरा सा मुँह बनाया। दोनों को थोड़ा तंग जो होकर बैठना पड़ रहा था। कानपुर आकर सब कितनी धमाचौकड़ी मचाते, दादा जी ये, दादी जी वो। एक बार तो रात को ग्यारह बजे वो उनकी पंसद की किसी ख़ास दुकान से क़ुल्फ़ियाँ लेने चले गए थे। एक महीना बीत गया। नीरा शुरू से ही टिपटाप रहती थी, उसने बहू से किसी अच्छे पार्लर की जानकारी चाही तो वो बोली, अरे माँ जी छोड़ो यहाँ पार्लर बहुत मंहगे है, ये कानपुर नहीं। नीरा के मन में आया कि उसे कहे, कौनसा तुम्हें पैसे देने हैं, पर वो चुप रही। ऐसी और भी बहुत सी असहनीय और फ़िज़ूल सी बातें हुई। कपिल और नीरा चुप ही रहते, वो बेटे को कुछ बताकर उनके रिश्तों में दराड़ नहीं डालना चाहते थे। बच्चे तो अपने ही है। माँ बाप का मोह ही ऐसा होता है।

नीरा ने भी बिना किसी की परवाह किए अपने लिए पार्लर ढूढ लिया और अपनी ज़रूरत का सामान वगैरह ख़रीद लिया। रहना तो तब और मुश्किल हो गया जब बहू ने उनके साथ बात करना ही लगभग बंद कर दिया। वो रसोई के सामान , खाने वगैरह के बारे में बात करती तो उल्टा ही जवाब मिलता।

जिसका दिल करता आर्डर करते और जो खाना होते मँगा लेते। पहले पहल तो उनसे पूछते, वो कभी कुछ खा भी लेते, कई बार मना भी कर देते। परन्तु अब तो कोई उन्हें पूछता ही नहीं था। नीरा को एक रात दाँत में बहुत दर्द हुआ, किसी तरह रात तो गोली खाकर निकाली, मगर सुबह दंतविशेषज्ञ के पास जाना जरूरी था। बेटा बहू दोनों के पास ही जाने का समय नहीं। बेटे ने कैब बुलाकर उन्हें रवाना कर दिया। किसी तरह नीरा ठीक तो हो गई, तीन चक्कर लगे, मगर एक बार भी कोई साथ नहीं गया।

देखा जाए तो बात है भी और नहीं भी। कल को कभी ज्यादा मुसीबत आ जाए तो क्या होगा। अगर दोनों ने इस तरह की जिंदगी ही जीनी है तो अपना शहर ही ठीक है। हर चीज का पता है, अपने कुछ रिश्तेदार और दोस्त मित्र तो हैं। अभी पद्रहं दिन पड़े थे वापिस जाने को, टिकट करवाई हुई थी। नीरा का मन तो बहुत उचट गया था, मगर धीर गंभीर स्वभाव के कपिल अभी कुछ और भी परखना चाहते थे। किसी तरह समय पूरा हुआ और दोनों घर वापिस आए। नीरा ने चैन की साँस ली। कपिल ने बेटे के खाते में कुछ और पैसे भी डाल दिए थे। उनका मानना था कि जब पैसे है तो किसी पर बोझ क्यूँ बना जाए। वैसे भी आगे पीछे सब बच्चों का ही है। पर हैदराबाद वाले अनुभव से उनका दिल बहुत टूट गया था।

दो महीने बाद रूद्र के कहने पर पूना जाने के प्रोग्राम बना। नीरा का मन बिल्कुल भी जाने का नहीं था, मगर कपिल के आग्रह पर चली गई। स्थिति वहाँ पर भी कमोबेश वैसी ही थी। उसके बच्चों के पैपर हो चुके थे, वो आगे कम्पीटिशन की तैयारी में व्यस्त थे। उनका घर तीन कमरों का था। कपिल के आ जाने से भाई बहन को एक ही कमरा शेयर करना पड़ रहा था। कई बार रूद्र बाहर हाल में सो जाता और बेटी मां के पास। कई बार बहन भाई में झगड़ा भी हो जाता। मोबाईल ने तो जैसे आपस में ही दूरियाँ पैदा कर दी है। दूर वालों से हम बातें करते है, और जो पास बैठे है, उनकी शक्ल भी नहीं देखते। एक महीने बाद ही वो वापिस आ गए, किसी ने उन्हें रूकने के लिए भी नहीं कहा। कपिल दोनों बेटों को परख चुके थे। कुछ माडर्न लाईफस्टाईल और कुछ मजबूरियाँ। अगर कपिल नीरा अपना ये घर बेचकर वहाँ कुछ बड़ा घर भी ले ले, तो भी कुछ नहीं होगा। घर से पहले दिल में जगह होनी चाहिए।

जिन बच्चों के सानिध्य को माँ बाप तरसते है, उनके पास पूरे दिन में दस मिंट भी नहीं है, और वो लड़किया जिन्हें पापा की परियाँ और माँ की दुलारी कहते है, आँगन की रौनक़ कहते है, सास ससुर को अपना क्यों नहीं समझती। भले ही ये बात सब पर लागू न हो, पंरतु ये आज की बहुत बड़ी समस्या है। बच्चे दीवाली पर इस बार भी आए और दो दिन रूक कर ही चले गए, जबकि पहले आठ दस दिन रहते थे, और गरमियों की छुट्टियाँ घर पर ही रहे, हां बीच में चार दिन शायद गोवा या कहीं आस पास घूम आए। कपिल और नीरा मन से बहुत आहत थे, परन्तु कुछ नहीं हो सकता। जल्दी ही परख हो गई थी। बच्चे जहाँ भी रहें खुश रहे, हर माँ बाप यही चाहता है। नीरा और कपिल की भी यही इच्छा थी। बच्चों से सबको प्यार होता है, मगर स्वाभिमान और आजादी भी जरूरी है।

कभी कभार बच्चों से किसी काम के लिए ही बात होती, एक अनकही सी दीवार खिंच आई थी। एक रात जब दोनों खा पीकर लेटे हुए थे, तो नीरा न जाने क्यों उदास सी छत को घूरे जा रही थी। कपिल ने उसका माथा सहलाते हुए पूछा तो दो आँसू कोरों से टपक पड़े। बिना कहे ही कपिल सब समझ गए। 'उदास मत हो नीरा, पक्षियों को देखो, कैसे अपने बच्चों को उड़ना सिखाते है, और फिर वो कभी मुड़कर नहीं आते। बदलते हुए परिवेश के साथ बदलने में ही भलाई है। पर हम पक्षी नहीं इंसान है। हमने अपने फ़र्ज़ पूरे किए, किसी पर कोई एहसान नहीं किया, हर बच्चें पर माँ बाप का क़र्ज़ होता है, जिसे वो अपने बच्चों का पालन पोषण करके उतारता है। अब बच्चों की इच्छा है कि उन्हें सिरफ अधिकार ही चाहिए या कुछ कर्तव्य भी है'।

हमारे पास सब कुछ है, मज़े से रहेगें और बहुत सी मित्र मंडली है। वो शौक़ जो जवानी में समय के अभाव में पूरे नहीं कर सके,वो अब करेंगे। और हां आजकल वो जो 'टाईम बैंक' का नया सिस्टम शुरू हुआ है, उसमें हम दोनों दो घंटे लगाऐगें ताकि ज़रूरत पड़ने पर हमारी भी देखभाल हो सके। कल को मैं न रहूँ या तुम ना रहो, तो भी हार नहीं माननी और जीते जी अपनी संपत्ति अपने नाम पर ही होनी चाहिए। अपनी पेंशन का कुछ हिस्सा हम पहले की तरह परोपकार में लगाते ही रहेगें, ताकि दूसरों की मदद भी हो सके। आज हमारे

पास तो सब कुछ है, सोचो कितने ऐसे बुजर्ग और ज़रूरतमंद होगे, जिनके पास कुछ नहीं होगा। चलो उनके लिए कुछ करें।

"चलो, अब सो जाओ", कल सुबह सैर को भी जाना है। दिन में बैठकर पूरे हफ़्ते का प्रोग्राम सैट कर लेना। खूब मज़े करेगें और दो बार बाहर खाने का प्रोगराम जरूर रखना, कपिल ने हल्की सी आँख दबाकर कहा। 'तुम भी ना, चटोरे कहीं के!

सुंदरियां - हास्य व्यंग

सुंदर होना किसे नहीं पंसद। इस दुनिया में हर कोई सुंदरता पर फिदा रहता है। अगर कोयला भी बोल सकता तो वो भी यही कहता कि वो बहुत सुदंर है, शायद ये गाना भी गाता कि" हम काले हैं तो क्या हुआ, दिल वाले हैं"। बात हो सुंदरता की तो सब से पहला नंबर हम औरतों का ही है। पता नहीं किसने ये मेकअप का अविष्कार किया, वरना तो परमात्मा ने सारी सृष्टि को ही सुदंर बनाया है। फूल कैसा भी हो, फल, सब्जी, सब का रूप निराला ही है। अगर एक तरफ लेडी फिंगर यानि कि भिंडी अपने रूप पर इतराती हुई सब्जी मंडी की शोभा बढ़ाती है तो दूसरी तरफ छोटा, बड़ा, मुटल्ला मिट्टी सना आलू भी बड़ी शान दिखाता और 'बेबी पटेटो' की तो बात ही निराली है।

अगर औरतों की जिंदगी का आधा समय सजने संवरने में निकलता है, तो ये कोई बुरी बात नहीं। देश का बहुत सा व्यापार सौंदर्य प्रसाधनों और ब्यूटी पार्लर से ही चल रहा है। फिल्म इडंस्ट्री का तो आधार ही यही है। आजकल शादी ब्याह के खर्चों में काफी सारा खर्च तो सिर्फ दुल्हन की साजो सज्जा का ही होता है। अमीरों की तो हम क्या बात करें, औसत दर्जे के परिवार की लड़की की शादी में भी हल्दी, मैंहदी, बेचलर पार्टी और भी न जाने कौन कौन से फंक्शन और फिर जयमाला के समय की तो बात ही क्या की जाए। पार्लर वाले शादी से कई कई दिन पहले ही दुल्हन की सीटिंग शुरू कर देते है। एक हमारा जमाना था कि कोई आई ब्रो तराशने की कला के बारे में भी नहीं जानता था। दहेज के सामान के साथ घर के बड़े बुजुर्ग एक लाल रंग की लिपस्टिक, पाऊडर का डिब्बा, क्रीम, नेल पालिश, बिंदियों का पत्ता, काजल और एक दो चीजें और ले आते। सर्दिया हुई तो लाल सैंडल और लाल जुराबें भी जरूर आती।

समय बदलने के साथ घूंघट प्रथा तो नहीं रही, और कहीं कहीं जयमाला का रिवाज शुरू हो चुका था। रिश्ते की बहनें भाभियां ही दुल्हन को तैयार कर देती। एक चीज उन दिनों बहुत कामन थी, दुल्हन के माथे पर बड़ी सारी लाल बिंदी और फिर आसपास पूरे माथे पर दोनों और छोटी छोटी लाल

सफेद बिंदिया। थोड़े से मेकअप में ही दुल्हन आसमान से उतरी परी सी लगती, क्यूकिं सुदंरता तो देखने वाले की आंखो में होती है। पुरानी फिल्मों में भी हिरोईनों के माथे पर ऐसा ही मेकअप दिखता (चाहे किया ज्यादा होता) और आज सिर्फ औरते ही नहीं पुरूषों के मेकअप की भी सीमा नहीं, तभी तो फिल्मों के साठ साल के हीरो भी तीस के दिखते है। असली शक्ल दिख जाए तो हीरोईनें भाग खड़ी होगीं।

सुदंरता के दीवानों की तो बात करें तो हर वर्ग के लोग इसमें शामिल है। एक बुजुर्ग ग्रामीण शहर गया तो बस की इंतजार में वो जहां बैठा था, इतफाक से वहां सामने एक लेडीज पार्लर था, जाहिर है कि औरतें आ जा रही थी। काफी देर तक बस नहीं आई, बुजुर्ग की निगाहें सामने वाले पार्लर पर टिकी रही, उसे बहुत हैरानी हुई यह देखकर कि जो औरतें अंदर जाती वो तो ठीक ठाक सी लगती और जो बाहर निकलती वो खूबसूरत लगती। अपनी बस भूलकर वो शाम तक वहीं बैठा रहा, शायद उन दिनों शादियों का सीजन चल रहा होगा तो सुदंरियों की तादाद कुछ ज्यादा ही रही होगी। उसके गांव जाने की जब आखरी बस आ गई तो मजबूरन उसे चढ़ना पड़ा और उसे ये भी मलाल रहा कि अगर वो विश्ने की अम्मा यानि कि अपनी पत्नी को साथ ले आता तो वो भी यहां से खूबसूरत हो कर निकलती। मगर फिर उसने सोचा कि अगली बार लेकर आऊंगा। फिर ये भी विचार आया कि अगर वो जवान हो गई तो वो उसके सामने कैसा लगेगा, छोड़ो रहने देता हूं।

चांस की बात कि अगली बार अपने किसी काम के सिलसिले में वो फिर शहर गया और एक बहुमंजिला इमारत के बाहर बैठ कर किसी का इंतजार करने लगा। ग्रामीण जहां बैठा था, इतिफाकन वहां सामने लिफ्ट थी। ग्रामीण वहां घंटा भर बैठा रहा, उसे ये लगा कि उस डब्बे में घुसते तो उम्र दराज है लेकिन बाहर निकलते जवान है। उसका मन किया कि वो भी एक बार उस डिब्बे में घुस जाए तो क्या पता जवान होकर बाहर आए, लेकिन फिर ध्यान आया कि अगर वो जवान हो गया तो विश्ने की मां का क्या होगा, बेचारा मन मसोस कर रह गया। दरअसल उपर कुछ दुकाने और दो तीन कोचिंग सैंटर थे। इतिफाक की बात उस समय गए तो दुकानदार और वापिस आए कोचिंग वाले।

चलो ये सब तो मजाक है, लेकिन इसमें कोई दोराय नहीं कि सुंदरता का दीवाना तो हर कोई है। एक जमाना था कि सास बहू, मां बेटी, बड़ी छोटी बहन दूर से दिख जाती थी मगर अब जमाना बदल गया। पता ही नहीं चलता कि कौन क्या है। सास बहू भी एक सी और मां बेटी भी एक सी नजर आती है, अगर मेकअप किया हो तो। हां बिना मेकअप के असलियत सामने आएगी। एक लड़की (बदसूरत नहीं कहूंगी, क्यूकिं भगवान की बनाई हर चीज सुंदर है और रूप रंग तो कुदरत की देन है) अपनी मां को इठला कर कहती है, (अब पता नहीं, वो शिकायत कर रही है या अपने आप पर नाज़ कर रही है) मां, मैं जब भी बाहर निकलती हूं, मुहल्ले के लड़के मेरे पीछे हो लेते है। मां ने बहुत इत्मीनान से कहा, कल बिना मेकअप के बाहर जाना, फिर बताना कितने आए तेरे पीछे। अब लड़की का मुंह देखने वाला था।

जैसा कि आजकल अक्सर छोटे बड़े हर शहर में सोसायटी चलन हो गया है और एक सोसायटी में लगभग सौ, दो सौ या ज्यादा भी घर होते है तो एक छोटा गांव या मुहल्ला सा बन जाता है। सब सुख सुविधाएं अंदर ही होती है। हमारी सोसायटी भी ऐसी ही है परन्तु ज्यादा बड़ी नहीं, मुहल्ला और सोसायटी का मिला जुला रूप है। चौकीदार वगैरह हैं मगर आने जाने वालों को छूट है। कबाड़ लेने वाले भी आते है और फेरी लगाने वाले भी आते रहते है। नौकरी वाली महिलाओं के पास तो फुर्सत नहीं होती लेकिन होम मेकर या फिर बुजुर्ग महिलाओं को तो समय मिल ही जाता है। यहां वहां बतियाना, जाड़े में धूप सेंकना, आने जाने वालों पर नजर रखना। कहने को हम कितना भी कह लें कि "हमें किसी से क्या" लेकिन इस वाक्य का प्रयोग यहां वहां की पूरी खबरे रखने के बाद ही होता है।

हर तीज त्यौहार मनाने का चलन तो है ही इसके इलावा किटी पार्टीयां भी तो होती है। हम औरते तो ऐसे मौकों की तलाश में रहती है। मजाल है सजने संवरने का एक भी मौका हाथ से जाने दें। उम्र को ताक पर रख कर हर मौके पर सुंदर दिखना तो जैसे औरतों का जन्मसिद्ध अधिकार है। कहीं जाना हो तो रात को कई घंटे तो इसी सोच में निकल जाते है कि सुबह कौन से कपड़े पहनने, ज्वैलरी का चुनाव, मेकअप के लिए अलग से सोचना।

वो वाला सूट, नहीं वो तो पिछले प्रोग्राम में पहना, तो वो पर्पल साड़ी, नहीं उसके पल्लू में दो तीन मोती गिर गए है (अब किसको फुर्सत है मोती गिनने की, मगर खुद को तो है) नहीं वो यैलो ठीक रहेगी, नहीं नहीं वो भी नहीं, वैसी मिलती जुलती मिसिज सक्सेना के पास भी है, कहीं वो भी पहन कर आ गई तो। वो किसी फैमिली फक्शंन में ठीक रहेगी। और फिर जूतों की मैचिंग, हेयर एसररीज, इसी सोच विचार में न जाने कब नींद आ जाती है। औरों का तो पता नहीं, मेरे मिस्टर तो कहीं जाने के लिए पांच मिनट में तैयार होकर आ जाते है। नहाना धोना, थोड़ा पूजा-पाठ तो सुबह किया ही होता है, ज्यादा हुआ तो कमीज बदलकर चल देगें, सिर पर बाल ना के बराबर है, दिलीप कुमार स्टाईल में हाथ फेरकर तैयार, और हम औरतों को पता नहीं क्यों इतने ताम झाम करने पड़ते है।

आज के नए जमाने की लड़कियां छः गज की साड़ी भले ही न लपेटे परन्तु पार्लर में घंटो बिताती है, शायद उनके मेकअप को न्यूड मेकअप कहते है, जो दिखता कम है, परन्तु सब दाग धब्बे छुपा देता है। पिछली किट्टी पार्टी में मिसिज भाटिया पंजाबी सलवार सूट पहन कर आई, अक्सर वो साड़ी के साथ स्लीवलैस, बैकलैस और भी न जाने कौन कौन से लैस डिजाईनर कपड़े पहन कर आती है। सलवार सूट पहनना तो ठीक लेकिन साथ में छोटा सा मांग टीका भी। अब साठ साल की उमर में शादी ब्याह में तो चलो फिर भी ठीक , लेकिन किटी पार्टी में, बात कुछ हज़म नहीं हुई, भेद तो तब खुला जब पार्टी की समाप्ति पर ठुमकते समय उसका मांग टीका साईड में अटक गया और माथे के बीचों बीच एक फुंसी दिखाई दी। तो ये सारा तामझाम उसी को छुपाने के लिए किया गया। चलो हमें क्या, सबको अधिकार है सुंदर दिखने का।

अब कोई कितना भी तैयार होकर बाहर निकले, सुबह सुबह घर में या किसी काम से न चाहते हुए भी कई बार बाहर निकलना पड़ता है। दूध ,सब्जी लेने या फिर बच्चों को स्कूल बस तक छोड़ना या ऐसे ही कई काम होते है। एक सब्जी बेचने वाला रोज ही हमारे वहां आता है। वैसे तो हर चीज़ आनलाईन मिलती है, कटी हुई सब्जी के पैकेट भी घर पर आ जाते है, मगर हम जैसे लोग जब तक अच्छे से मोल भाव न करें, खड़े खड़े चार पांच मटर छील कर ना खा लें, हरी मिर्च और धनिया का मुफ्त जुगाड़ न कर लें सब्जी खरीदने का मजा नहीं आता। तो हरिया भाई हर रोज नौ दस बजे के बीच हर तरह की ताजी

सब्जी और कुछ कुछ फल लेकर आता है। तब तक बच्चे और नौकरी पेशा लगभग जा चुके होते हैं। सब्जी लेने और दो चार बातें करने अक्सर औरतें ठेले के इर्दगिर्द इकट्ठी हो जाती है।

भले ही अब जमाना गूगल पे का है परन्तु हरिया भाई हाथ जोड़कर नकद पैसे लेने में ही विश्वास करता है। कारण, एक तो वो बहुत कम पढ़ा लिखा है, बैंक कार्यवाही से दूर भागता है, दूसरा जहां से वो सब्जी लेता है, वहां भी नकद लेन देन चलता है। बहुत ही मृदभाषी, मिलनसार और तोल भी बहुत अच्छा। वरना तो कई तो तोल में ही गड़बड़ कर देते है। कई बार छुट्टी वाले दिन उसका बारह तेरह साल का बेटा भी साथ में आ जाता है। उसको भी कहेगा, अम्मा को प्रणाम करो, बड़ी माताजी के पैर छुओ, बहन जी को नमस्ते करो। कहने का भाव कि जबान पर जैसी चाशनी रखी हो। एक और बात, खुले पैसों की या उधार की भी चिक चिक नहीं, बस अपनी एक छोटी सी डायरी में कुछ कुछ लिख लेता है, जब सब चले जाते है। कई तो दूसरी तीसरी मंजिल से टोकरी लटकाकर सब्जी ले लेगीं और साथ में पैसों का लेनदेन भी उसी प्रकार। और नीचे आने या बाहर निकलने की फुरसत न हो तो उपर से या खिड़की से या फिर फोन से भी वो डिलीवरी कर देता है।

हैरानगी की बात ये थी कि न कभी उसने किसी का नाम पूछा, न फ्लैट नं, लेकिन मजाल है कि कभी उसका हिसाब गलत हो। बस जेब में छोटी सी डायरी और दस रूपए वाला पुराना सा पैन ही उसका बैंक था। मैं भी उसी की पक्की ग्राहक थी। कुछ दिन पहले बाथरूम में पैर फिसल गया, ज्यादा चोट तो नहीं आई परन्तु पैर में मोच सी आ गई। सुबह जब उसकी आवाज आई, "भिंडी, तोरी लो, बैंगन लो, शिमला मिर्च, शकरकंदी लो" तो मेरा नीचे उतरने का साहस न हुआ तो मैनें बड़ी मुश्किल से खिड़की से झांककर उसे उपर ही सब्जियां देने के लिए कहा। सिरफ इतना ही नहीं मैनें तीन चार दिन के लिए इकट्ठी ही सब्जियां लाने को बोल दिया ताकि पैर ठीक होने तक काम चलता रहे। प्याज़ तो पांच किलो ही मंगवा लिए। वो उपर आया, सब्जियां रखकर और पैसे लेकर चला गया और मेरा हाल चाल पूछना भी नहीं भूला।

कुछ देर बाद कामवाली बाई ने जब धोने के लिए सब्जियां निकाली तो उसमें से एक छोटी सी फटी पुरानी तुड़ी मुड़ी सी डायरी मिली जो कि हरिया

की शायद गलती से सब्जियों में गिर गई थी। उसने लाकर मुझे पकड़ा दी। पहले तो मैनें एक तरफ रख दी, फिर न जाने क्या सूझी कि खोल कर पढ़ने लगी अपनी टूटी फूटी हिंदी में अपने लेन- देन का हिसाब कुछ इस तरह लिखा हुआ था जिसे पढ़कर मेरे कड़ाके की ठंड में भी पसीने छूट गए और आज तक दिन में कई कई बार अपने आप को दर्पण में निहारती हूं। हिसाब कुछ यूं लिखा था, पता नहीं चला कि रूपए उसने लेने है या वापिस करने है-

नकचिपटी- 50 , बिलईया-90, चितकबरी- 120,
मोटकी- 60, संवरकी- 80; पतरकी- 65
भैसिंया- 88, कुकुर वाली- 30,बन्दरमुंही- 70
बकबकी- 40,दंतुलि- 103, दंतटूटी- 85
मुंहटेढ़ी- 45, बहिरी- 20,भुअर्की- 120
अप्सरा- 85, कनढ़ेरी- 75, सुंदरीया- 55, असवरया- 55

फटाफट मैनें फोन से फोट खींच ली।

दो तीन घंटे बाद ही हरिया हांफता हुआ मेरे घर आया और डायरी मिलने पर मेरे पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने कर कहने लगा," मैडम जी, किसी को न बताना, इसमें क्या लिखा, मेरी तो लुटिया डूब जाएगी, रोजगार बर्बाद हो जाएगा, हम आपके पांव पड़ते है, मेरे छोटे छोटे तीन बच्चे है, परिवार है"

मैनें लापरवाही दिखाते हुए कहा, ऐसा क्या लिखा है इस डायरी में, जो इतना घबरा रहे हो, मैनें तो पढ़ी नहीं, वो पड़ी, जाओ ले जाओ और ध्यान से रखो। मैनें कह तो दिया, और किसी को कुछ नहीं बताया लेकिन कई बार सोचती हूं कि इसमें मेरा नाम कौनसा है। हरिया सब्जी बेचने आज भी आता है, लेकिन मेरी और उपर मुंह उठा कर देखने की हिम्मत नहीं जुटा पाता। सब नाम पढ़ पढ़ कर अकेले में कई बार हंसी आती है और जब हम सब औरतें इकट्ठी होती है तो अनुमान लगाने का प्रयास भी करती हूं कि कौनसा नाम किसे सूट करता है, उसमें मैं भी शामिल हूं।

दीप जलते रहे

पिछले एक महीने से "जश्न" में सफाई, रंगाई, पुताई का काम जोरों से चल रहा था। हमारे देश में दीवाली के आने से पहले यह सब होना एक आम बात भी है और जरूरी भी समझा जाता है। एक तो दीपावली का त्यौहार सब से बड़ा माना जाता है, कहते है कि रात को लक्ष्मी जी का आगमन होता है, इसके इलावा और भी बहुत से प्रसंग इस त्यौहार के साथ जुड़े हैं। आजकल तो यह बात शायद कम हो गई है, शहरों में तो लगभग खत्म ही हो चुकी है, जैसे कि उत्तर भारत में दीपावली से सर्दियों का आगमन हो जाता है, पुराने जमाने में लोग बाहर खुले में नीले आकाश तले चारपाई बिछा कर सोते थे, लेकिन सर्दियों में तो कमरों के अंदर ही सोना होता था तो सफाई की दृष्टि से भी इसे जरूरी माना गया। इसी बहाने रंग रोगन हो गया तो मच्छर मक्खियां भी भाग जाते और गर्म कपड़ों को भी धूप, हवा दिखा दी जाती।

जिस "जश्न" की बात हो रही थी, वैसे तो वह एक वृद्धाश्रम है, लेकिन उसे तीन या पांच सितारा आश्रम कहना ज्यादा बेहतर होगा। समय बदल रहा है तो लोग भी बदल रहे हैं। हर कोई अपने बच्चों को बड़े चाव से, लाड़ प्यार से पालता, पढ़ाता है, कारोबार या नौकरी जो भी हो उसके काबिल बनाता है, शादी ब्याह भी होता है। लेकिन समय के साथ साथ बच्चे अपने काम अपने परिवार में मस्त हो जाते है। कुछ मजबूरियां भी हो जाती हैं।

अब सयुंक्त परिवार तो लगभग खत्म हो चुके है। सही या गल्त की बात न करते हुए बस इतना ही कहा जा सकता है कि समय बदल रहा है और हवा का रूख जब बदलने लगे तो अपने आप को भी कुछ हद तक बदलने में भलाई हैं।

"जशन" ऐसा वृद्ध आश्रम है जो काफी मंहगा है, लेकिन पैसे वाले लोगों की भी कमी नहीं। कुछ के बच्चे विदेश सैटल हैं या फिर दूर रहते है और यह कहने में भी कोई बुराई नहीं कि आपस में अक्सर बनती भी नहीं। दोष किसी का भी हो लेकिन एक ही जिंदगी मिली है तो क्यूं न प्रेम, प्यार और हँसी खुशी

से गुजारी जाए। "जश्न" एक ऐसी इमारत है जहां पचास के करीब हर सुख सुविधा वाले वन रूम अपार्टमैंट बने हुए है, जहां आप अपना खाना भी बना सकते हैं और बाहर भी घर जैसा खाना खा सकते है। छोटा सा बाजार, अति मनोरम पार्क, पार्लर, मैडीकल सुविधाएं कहने का भाव कि हर सुख सुविधा अंदर ही मिल जाएगी। कीमत देनी पड़ती है।

प्रतिमा और सुधाकर को यहां आए तीन महीने हो गए हैं। पहले तो उदासी लगी लेकिन अब दिल लग गया है। कुछ दिन पहले पार्क में कई कपल बैठे थे, कुछ टहल रहे थे, बतिया रहे थे। विधुर और विधवाएं भी वहां रहते थे। जरूरी नहीं कि सब परिवार से दु:खी होकर यहां आए, अच्छे हम उम्र दोस्त भी मिल जाएं तो जीना आसान हो जाता है। प्रतिमा और सुधाकर के दो बेटे और एक बेटी है। बेटी तो अपने घर में सुखी है, एक बेटा विदेश और एक किसी और शहर में अलग रहता है।

पांच साल पहले सुधाकर और प्रतिमा लगभग आगे पीछे ही रिटायर हुए। जाहिर है कि अच्छी सरकारी नौकरी थी तो पैंशन भी अच्छी मिलती है। सेविंगस भी थी, घर का मकान और हर सुख सुविधा, लेकिन अकेलापन। बड़े बेटे अविधेश ने उनहें अपने पास विदेश आने के लिए कहा और सारा इंतजाम भी करवा दिया। दोनों खुशी खुशी वहां गए। अविधेश के एक बेटा और बेटी स्कूल पढ़ने की उम्र में थे। कुछ दिन तो सब ठीक रहा, फिर वो उदास हो गए। कारण वही कि समय किसी के पास नहीं। सब अपने काम में व्यस्त और छुट्टी वाले दिन तो और भी ज्यादा काम। वहां पर हमारे देश की तरह नौकर नहीं मिलते, बहुत मंहगा पड़ता है, सब काम स्वयं ही करने होते हैं। मशीनों से बहुत मदद मिलती है, लोकिन उन्हें चलाने के लिए भी तो जानकारी और समय लगता है।

और फिर बात करें खाने की तो हमारे स्वाद अलग ही है। सुधाकर तो फिर भी खा लेते लेकिन प्रतिमा तो बिल्कुल ही नहीं खा पाती थी। वहां पर ज्यादातर कच्चा पक्का सा डिब्बा बंद खाना फ्रिज में रखा रहता, गर्म करो और खाओ। सामान वगैरह सब मिल जाता लेकिन तीनों समय खाना खुद बनाने में ही आदमी थक जाए, क्योंकि एक तो उम्र का तकाजा और इतनी काम की आदत भी न हो तो मुश्किल ही है, और फिर अकेलापन। इससे अच्छा तो अपना

देश ही है, जान पहचान तो रहती है। समय कब निकल जाता पता ही नहीं चलता।

किसी तरह छः महीने बिता कर वापिस आए तो चैन की सांस ली। अब जब गए तो पीछे से घर बंद रहा, बरसातों में एक दो छतों से पानी टपका तो काफी सामान खराब हो गया। काम वाली बीच बीच में कभी कभार बाहर सफाई कर जाती थी लेकिन इतना कौन कर सकता है। बेटा पहले ही कम आता था, बेटी कभी कभार आती थी, लेकिन बंद घर में आने की आफत कौन मोल लेता है।आने के एक महीना के बाद तक भी घर में काम चलता रहा। कोई नल खराब हो गया तो कहीं बिजली के स्विच। कुछ दरवाजे भी बारिश से खराब हो गए।

इतना सब ठीक करवाने में ही बेचारे थक गए। मुश्किल से जीवन वापिस पटरी पर आया।

एक दो दिन के लिए बीच में बच्चे होकर चले गए। अब कोई कितने दिन रह सकता है। छोटे बेटे हेमंत ने भी उनहें कहा कि वो उसके पास आकर रहें। उसके एक बेटी थी और पत्नी नौकरी करती। हेंमत की नौकरी अच्छी थी लोकिन बड़े शहरों के बड़े खर्चे। उसका अपना अच्छा फ्लैट था जो कुछ साल पहले खरीदा था। तब सुधाकर ने भी काफी मदद की थी, लेकिन बैंक के लोन की किश्तें भी कहा आसानी से खत्म होती है। वहां जाकर भी महीने में वापिस आ गए।

लगभग यहां भी वही कहानी थी जो विदेश में थी, फर्क इतना था कि यहां कामवाली बाई आती थी और पार्क में बातचीत करने के लिए कुछ हम उम्र लोग मिल जाते। लेकिन यहां भी इनका रूटीन सैट नहीं बैठा। एक कमरा बेटे बहू का, एक पोती का और एक गैस्ट रूम, जो अब इनके पास था। वहां एक कोने में घर का कुछ फालतू सामान भी पड़ा रहता, कह सकते है कि स्टोर कम गैस्ट रूम था। अब किचन में जल्दी उठकर चाय बनाने में या टी वी वगैरह चलाओ तो आवाज तो आएगी। आज के जमाने में 'प्राईवेसी' 'स्पेस' जैसी बातों को पचाना बुजुर्गों के लिए भी आसान नहीं है। कोई आन लाईन काम कर रहा हो या मीटिंग चल रही हो तो मानों घर में कर्फ्यू सा लग जाता है।

हर कोई अपने में व्यस्त, कोई बातचीत नहीं, अपनापन तो जैसे खत्म ही हो रहा है। बाहर से आते ही अपने अपने कमरे में बंद। बेटा बहू लंच वहीं आफिस में करते, नाशते में ब्रैड, कार्नफ्लैक्स या कुछ स्पैशल डाईट है, अब प्रतिमा को तो कुछ समझ ही न आए। उन्हें नाश्ते में हल्के तेल के परौठें, फल, दलिया, खिचड़ी वगैरह की और दिन में दाल, रोटी, सब्जी, सलाद वगैरह की आदत थी। सुधाकर जी खुद बाहर जाकर मनपंसद सामान ले आते। सामान तो बेटा आनलाईन आर्डर कर देता लेकिन वो फल सब्जियां अक्सर बासी सी लगती।

पोती निष्ठा तो लगभग जमैटो वगैरह से ही आर्डर कर देती, घर पर बना खाना तो नाक भौं सिकोड़कर ही खाते। वैसे भी बहू को रसोई का काम करना पंसद नहीं था, सब काम वाली के हवाले ही था। निष्ठा कभी सामने पड़ गई तो हाय दादू, दादी कैसे हो, बस इसके ऊपर कोई बात नहीं। ऐसा माहौल हो तो बातें वैसे ही खत्म हो जाती है। दो बार छुट्टी वाले दिन बेटा घुमाने ले गया तो न बहू साथ गई न पोती, कुछ बहाना बना दिया।

प्रतिमा जी को एक बार खांसी, बुखार, जुकाम हो आया तो बेटा तीन दिन के टूअर पर था। कैब बुलाकर बहू ने डाक्टर के पास भेज दिया। अनजान शहर, टैस्ट वगैरह हुए, तीन बार जाना पड़ा। सुधाकर को बहुत परेशानी हुई, अपने शहर में कितनी जानकारी रहती है। सबसे बुरा प्रतिमा को तब लगा जब बीच में बहू के माता पिता आए। उनको साथ ही अपनी कार में घुमाती और शापिंग कराती रही। बहू के पिताजी ने कानों का चैकअप करवाना था तो बेटा बहू दोनों साथ गए।अब आदमी को महसूस तो होगा ही। ऐसे माहौल में कोई कितने दिन रह सकता है। सुधाकर और प्रतिमा ने दोनों बेटों के पास रह कर बहाने से पैसे भी दिए, जितना उनका खर्चा हुआ होगा उससे कहीं ज्यादा दिए क्योंकि दोनों की अच्छा पैंशन थी, लेकिन लगता है मां बाप के पैसों पर तो बच्चे अपना हक समझते है।

जल्दी ही वो वापिस आ गए। शायद सुधाकर ने दोनों घरों के व्यवहार को दिल पर ले लिया। मुंह से किसी को कुछ नहीं कहा। वो क्या, कोई भी मां बाप अपने बच्चों की गृहस्थी उजाड़ना नहीं चाहते। इसी तरह लगभग चार साल निकल गए। कभी कभार किसी का फोन आ जाता वो भी किसी काम से या

फिर मैसेज होते।पहले पहले ये भी फोन करते लेकिन बच्चों के पास समय ही न होता। "पापा थोड़ी देर में आपसे बात करता हूं, अभी बिजी हूं"। बाद में किसने करना। चलो दोनों मिंया बीवी ने दिल को समझा लिया कि अपने बच्चे है, सुख से खुशी से रहें, यही बहुत है।

एक रात अचानक सुधाकर की तबियत खराब हो गई, बेहोशी सी छाने लगी। प्रतिमा घबरा गई, वो तो पानी पीने उठी थी, पहले तो उसे लगा कि सुधाकर जी आराम से सो रहे है, लेकिन फिर उसे कुछ ठीक नहीं लगा। पड़ोसियों को फोन किया तो मौके पर हास्पिटल पहुंच गए। उनका शूगर लेवल बहुत कम हो गया था। अगले दिन बेटा आया और रात को ही चला गया शायद कोई जरूरी मीटिंग थी।

सुधाकर जी का एक खास दोस्त नवीन था, जिससे वो दिल की बात कर लिया करते थे, हर किसी को तो परिवार की बातें बताई भी नहीं जाती। किस्मत से उसकी बेटा बहू से बहुत बनती थी, उसकी पत्नी का दो साल पहले परलोक गमन हो चुका था। उसी ने "जश्न" के बारे में बताया। पहले तो सुधाकर हिचकिचाए लेकिन नवीन ने समझाया कि जब उनके पास इतने पैसे हैं तो क्यूं नहीं जिंदगी आराम से गुजारते। दरअसल नवीन का एक जानकार वहां रह रहा था। पत्नी की मौत के बाद बेटे बहू से उसकी नहीं बनी। रोज की किच किच से वो तंग आ चुका था। नैट पर ही उसे "जशन" के बारे में पता चला। अब वो वहां बहुत खुश है। वहां कोई पांबदी नहीं, कोई भी मिलने आ सकता है, लेकिन वहां रात में बाहर के किसी व्यक्ति को नहीं ठहरने दिया जाता और मिलने के लिए भी अलग से बहुत अच्छी व्यवस्था है यानि कि सब कुछ अच्छे से मैनेज है वहां पर।

किसी तरह प्रतिमा को मनाया सुधाकर ने, क्यूंकि हम लोगों को समाज का डर बहुत रहता है। बच्चे भले ही मां बाप को न पूछे, लेकिन मां बाप तो फिर मां बाप है। जायदाद भी उनहें ही देनी है और उनकी इज्जत भी रखनी है। सबसे बड़ी बात' लोग क्या कहेगें'। सुधाकर की बीमारी के बाद प्रतिमा बहुत डर गई थी और दूसरी तरफ सुधाकर को प्रतिमा की चिंता कि अगर वो पहले चल बसे तो प्रतिमा का क्या होगा। विदेशों में तो इस तरह रहना आम है लेकिन हमारे देश में नहीं। दूसरी और यहां सरकारी या फिर चैरिटेबल वृद्धाश्रमों की

व्यवस्था भी कुछ अच्छी नहीं। लेकिन अब "जशन" जैसी प्राईवेट सस्थांए (एक तरह से बढ़िया होटल) बननी शुरू हो गई हैं।

जब अपना पैसा है तो दुःखी क्यूं रहा जाए। जिनके लिए छोड़ना है अगर उनको आपकी परवाह नहीं। सुधाकर और प्रतिमा ने सोचा कि एक महीने के लिए रह कर देखते है, लेकिन वहां सब बढ़िया, हर सुविधा। अब अपने घर का कुछ हिस्सा रख कर किराए पर दे दिया ताकि देखभाल भी होती रहे और पैसे भी आते रहे। जब बच्चों को पता चला तो कुछ विरोध तो होना ही था लेकिन वो दोनों अपने फैसलें पर अडिग भी थे और खुश भी।

दीवाली आने से चार दिन पहले ही "जशन" दुल्हन की तरह जगमगा उठा। बहुतों के बच्चें, रिश्तेदार मिलने आ रहे थे, सुधाकर के बच्चे भी आए। थोड़ा अजीब तो लग रहा था लेकिन शायद आज के समय की यही मांग है। वो कहते है न कि "शायद अगले मोड़ पर सकून हो, घबराना नहीं, चल जिंदगी थोड़ा और चलते है, थोड़ा और चलते है"। सभी ने मिलकर हँसी खुशी दीपावली मनाई, समय के साथ बदलने में ही भलाई है, सुधाकर और प्रतिमा के साथ साथ शायद सबके दिलों में भी यही बात थी। रात को जलाए दीवाली के दिए हंसी खुशी के माहौल में देर रात तक जलते रहे।

हारी हुई बाजी

सोहन बाबू और कई मित्र पार्क में सुबह की सैर के साथ साथ कुछ योगा, कुछ बातें, और हंसी ठिठोली भी करते रहते। जब वो सैर से वापिस आए, तो जोरों की भूख लगी हुई थी। बहू अमिता, बेटा रोहित और दोनों बच्चे कृष और निशा सब जा चुके थे। उन्होंने अपनी चाबी से ताला खोला और अंदर आ गए। हाथ पैर धोकर जब रसोई में नाश्ता लेने गए तो तीन सूखी सी रोटियां और थोड़ी सी सूखी आलू की सब्जी पड़ी थी।

कितनी बार बहू से कहा है कि सूखी रोटियां उनसे चबाई नहीं जाती , थोड़ा घी लगाकर बना दिया करे। सोहन जी तले परौंठे नहीं खाते थे, लेकिन बिना तले नमक, मिर्च, अजवायन, प्याज वगैरह और थोड़ा देसी घी लगा परौंठा कम फुल्का उन्हें पंसद था। पत्नी सीमा उनकी हर पंसद, नापंसद का कितना ध्यान रखती थी। कुल तीन रोटियां नाश्ता भी और लंच भी। लगभग दो साल हो गए सीमा को उपर गए। जब वो जिंदा थी तो बहू भी उसके जैसा ही खाना तैयार करती थी, लेकिन उसके जाते ही न जाने बहू को क्या हो गया है।

सोहन जी ने सोचा चलो दही में डुबो कर आचार के साथ रोटी खाने का प्रयास करता हूं। फ्रिज खोलकर देखा तो थोड़ी सी दही पड़ी थी। वो तो बच्चों के लिए रखी रहती है। फिर कुछ सोचते हुए कटोरे में थोड़ा सा दूध डाला और एक रोटी के टुकड़े करके उसमें डाल दिए। बाद में जैसे तैसे सब निगला और जा कर अपने कमरे में लेट गए।

आज फिर उन्हें रह रह कर सीमा की याद आ रही थी। वैसे तो याद उसे किया जाता है, जो कभी भूला हो, सीमा तो उनकी हर सांस में बसी थी। कितने खुशहाली भरे दिन थे, जब सीमा उनके जीवन में गृह लक्ष्मी बन कर आई थी। देखने में साधारण रंग रूप लेकिन दिल सोने का था।

गांव में अपने पिताजी के साथ खेतों में जाया करता था सोहन, लेकिन उसने पढ़ाई भी जारी रखी थी। नौकरी के लिए अप्लाई करता रहता, आखिर उसे शहर में में सरकारी नौकरी मिली, और कुछ समय बाद सरकारी क्वार्टर

भी मिल गया। क्लर्क से शुरू होकर काफी उँचे पद तक पहुँचा। कुछ समय अकेला रहा, फिर सीमा को भी साथ ले गया। बेटी रवीना का जन्म गांव में ही हो गया था, शहर में पहले मंजु और फिर रोहित का जन्म हुआ।

तीनों बच्चों ने शहर में अच्छी तालीम हासिल की। गांव भी आना जाना लगा रहता। उसके पिता और दो चाचा के घर साथ साथ ही थे। सोहन के दादा के देहांत के बाद तीनों बेटों के नाम अच्छी जमीन हिस्से में आई थी। पिताजी तो खेती पर ही निर्भर रहे। दोनों बेटियों की गांव के स्कूल तक पढ़ाई हुई और सोहन पास वाले शहर के कालिज में जाता। उसकी पढ़ाई में दिलचस्पी थी। सोहन की पढ़ाई, सबकी शादियां बहुत अच्छे से हुई। सोहन के मां ,बाप और बहनें आते जाते रहते थे। चाचा के परिवारों से भी बहुत प्यार था। और भी रिश्तेदारी में आना जाना लगा रहता।

ये वो जमाना था जब रिश्तेदार तो क्या कई बार तो गांव से शहर किसी काम से आए लोग भी घर में रह जाते थे। सोहन के बच्चे वही शहर में जवान हुए, बेटियां अपने घर गई, रोहित की शादी अभी नहीं हुई थी। सोहन की रिटायरमैंट भी होने वाली ही थी तो सोचा कि शहर में घर खरीद लिया जाए। गांव का घर भी था परन्तु वहां कीमतें कम ही थी।वैसे बंद पड़ा था,लेकिन चाबी छोटे चाचा के पास रहती थी, उसका घर साथ वाला ही था। बड़े चाचा भी शहर में जाकर रहने लगे थे। मां बाप भी भगवान को प्यारे हो गए थे, लेकिन छोटे चाचा चाची बहुत स्नेह करते थे, उनका एक बेटा था रितेश उसका वहीं पर अच्छा आढ़त का कारोबार था। अपनी जमीन के साथ साथ वो औरों की जमीन भी ठेके पर लेता था।

सोहन की जमीन भी उसी के पास बंटाई पर दी हुई थी। शहर में जब मकान खरीदने की योजना बनी तो काफी पैसे चाहिए थे, रोहित वैसे तो अच्छी नौकरी पर लग गया था, लेकिन एकमुश्त देने के लिए पैसे काफी नहीं थे। रोहित का कहना था कि कम से कम चार पांच बैडरूम का घर तो होना ही चाहिए ताकि पूरा परिवार आराम से रह सके, उसकी भी शादी होनी थी। तो रिटायरमैंट की लगभग सारी पूंजी, जमा पूंजी और रोहित ने बैंक से काफी लोन लिया, कुछ सोना बेचा तब जाकर अच्छी सोसायटी में घर मिला।

समय के साथ रोहित की शादी अमिता से हुई, दो बच्चे हुए, सोहन और सीमा भी वहीं रहते, कभी कभी गांव जा आते। सोहन की पेंशन भी थी और बंटाई के पैसे भी आते तो वो रोहित की की काफी आर्थिक मदद कर देते। अमिता भी नौकरी करती थी, सब अच्छे से चल रहा था, लेकिन सास के देहांत के बाद अमिता ने ससुर की और ध्यान देना बंद कर दिया।

रोहित ने कभी इस और ध्यान नहीं दिया। पहले नौकरानी कमला भी बाबूजी का ध्यान रखती, उन्हें दूध, फल, दवाईयां सब समय पर देती। पर अब वो भी बहाने बनाती, अमिता ने मना किया होगा और जब बहू ही न पूछे तो कमला को क्या पड़ी, वैसे भी उसे और घरों में भी तो काम रहता। आखिर सोहन भी कब तक सहते। उनकी तबियत भी खराब रहने लगी। कमरे की सफाई भी ढ़ग से नहीं होती थी। बैड की चादर को बदले तो महीना ही हो जाता जबकि सीमा हफ्ते में दो बार चादर बदलती थी। परदे भी मैले हो चुके थे। ऐसे कमरे में रहने से तो आदमी में वैसे ही नकारात्मकता छाई रहेगी।

बेटे को बता कर वो घर में क्लेश नहीं डालना चाहते थे। ध्यान रखने का फर्ज तो बेटे का भी बनता है, जब सीमा जिंदा थी तो कई बार सब इकट्ठे घूमने भी गए, लेकिन उसके बाद तो सारा माहौल ही बदल गया। पता ही न चलता कि त्यौहार कब आए और कब निकल गए। पैसों की कमी नहीं थी सोहन जी के पास लेकिन उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि वो सब कैसे मैनेज करें।

बच्चे कभी कभार दादाजी के पास बैठ जाते लेकिन शायद अमिता को ये भी न सुहाता, वो उनहें बुलाकर होम वर्क करने या फिर खेलने भेज देती। सोहन के घुटनों में दर्द रहने लगा। डाक्टर ने आप्रेशन के लिए सुझाया। उन्होनें बेटे से कई बार बात करने की कोशिश की लेकिन कभी वो फोन पर तो कभी लेपटाप पर या फिर किसी और काम में व्यस्त ही रहता।

सारी उम्र इतनी मेहनत, इतनी अच्छी नौकरी करने वाले सोहन अपने आप को एकदम असहाय पाते और जी में आता कि इस तरह जीने से तो अच्छा है, अपने आप को खत्म ही कर लें।दो दिन पहले उनका चचेरा भाई रितेश गांव से आया था, शहर काम से आया तो उनसे मिलने चला आया।वो सोहन से उम्र में काफी छोटा था।

उसे अपना भाई बहुत कमजोर और निराश सा लगा, और ठीक से चल भी नहीं पा रहा था, उसे घर में कुछ ठीक नहीं लगा।उसने पूछा तो सोहन ने कुछ नहीं कहा, लेकिन न चाहते हुए भी आंखे नम हो गई। जिद करके रितेश उनहें अपने साथ गांव ले आया। गांव का माहौल तो अब भी खुशनुमा था। चाचा चाची भी भले ही बुजुर्ग हो गए थे, लेकिन फिर भी ठीक थे। बहू मीना भी बहुत अच्छे स्वभाव की थी। गांव में मिलने जुलने भी दूर पास के रिश्तेदार आते रहते।

रितेश स्वंय अपने भाई को पहले गांव की डिस्पैंसरी में ले गया। चैकअप वगैरह करवाया। घुटनों का आप्रेश़न करवाने की सलाह यहां भी डाक्टर ने दी। जल्दी ही बड़े शहर में ले जाकर उनका आप्रेशन करवाया। दस दिन बाद वो गांव वापिस आ गए। दो महीने तक उनके लिए अटैडेंट और फिजियोथरैपिस्ट भी आता रहा। सोहन ने कहा कि अब वो अपने घर में रहेगा।

घरवालों ने उनहें जाने नहीं दिया, कहा कि कुछ दिन अभी और रहो। इसी बीच रोहित का फोन आता, वो भी पैसों के लिए, मकान की किश्त जो भरनी थी। सोहन ने तीन महीने भेज दिए पैसे।सोहन का आप्रेशन तो हैल्थ बीमा से ही काफी हद तक हो गया था। कुछ दिनों बाद जब हिसाब किया तो रितेश ने सोहन को बंटाई के पैसे देने चाहे तो उन्होंने लेने से मना कर दिया और कहा कि अब वो गांव में ही रहेगें, उनका प्रबंध उनके अपने घर में करवा दो।

भाई साहब, ये घर भी तो आपका ही है, आप यहीं रहो, रितेश ने अपनत्व से कहा, मीना ने भी हां में हां मिलाई और उसके दोनों बेटे भी सोहन की बहुत इज्जत करते थे। चाचा, चाची ने भी यही कहा।

वो बिना जाने ही सब समझ गए थे। रितेश ने शहर का हाल बताया था घर पर। सोहन का भी मन नहीं था जाने को। अगले महीने जब रोहित का फोन आया पैसों के लिए तो उसने मना कर दिया। उसके बाद रोहित दो तीन बार गांव आया लोकिन अपना सा मुँह लेकर वापिस चला गया। सोहन का मन पोते पोती के लिए तड़पता था, लेकिन बेटे बहू का व्यवहार याद आते ही भावनाओं पर काबू पा लेते।

रितेश से उन्होनें बंटाई के पैसे कभी नहीं लिए, उनकी पेंशन काफी अच्छी थी, अपनी पैंशन से वो अपना खर्च निकालते और घर पर भी बहाने से

खर्च करते रहते। इसी बीच चाचा चाची भी चल बसे। चार पांच साल बाद दो दिन की बीमारी के बाद ही सोहन ने भी दुनिया को अलविदा कह दिया। दिखावे के लिए बेटा बहू सपरिवार आए, और मन में जमीन की लालसा भी तो थी।

सोहन ने वसीयत कर रखी थी जिसके बारे सिर्फ वकील को पता था। जब उनकी अल्मारी खोली तो वसीयत मिली। वसीयत पढ़ते ही रोहित के होश उड़ गए। आधी जमीन रितेश और आधी पोते कृष के नाम थी। बैंक में जमा पैसा उन्होनें बेटियों, और पोती को बराबर बांटने और कुछ गांव की डिस्पैंसरी में देने का लिखा था। अपना मकान उन्होंने रितेश के दोनों बेटों के नाम कर दिया और एक पत्र भी लिखा हुआ मिला, जिसमें उन्होंने रितेश के बेटों से गुजारिश की थी कि मां बाप का जरूर ध्यान रखे।

जिस घर के बुजुर्ग खुश रहते हैं, दुनिया भर की सारी खुशियां वहीं रहती है। रोहित और अमिता को मन ही मन पछतावा हो रहा था, लेकिन अब वो बाजी हार चुके थे।

गल्तफ़हमी

सुबह का सारा काम निबटा कर सोनाली चाय के कप के साथ अखबार लेकर बैठी ही थी कि डोर बैल बजी। 'उफ्फ', मजाल है कोई दो मिंट बैठकर चाय भी पी ले, बुड़बुड़ाती हुई वो उठी तो देखा कोरियर वाला था, किसी की शादी का कार्ड था। देखा तो उसकी भुआ के पोते की शादी का निमंत्रण था। फिर से वो कार्ड एक तरफ रख रख कर चाय पीने बैठ गई।

तन तो चाय पीने पर था पर मन चाय से उठती हुई भाप में खोकर बरसों पुराने अतीत में कहीं खो गया। उसे आज भी याद है जब वो अपनी इसी बुआ के छोटे बेटे अंगद की शादी में गई थी। उसकी इकलौती भुआ माया के दो बेटे और एक बेटी है। तीन भाईयों की इकलौती बहन है उसकी बुआ माया, तीनों भाईयों और सबकी चहेती माया। स्वभाव की बहुत ही अच्छी और मिलनसार स्वभाव।

सभी भाईयों और परिवार से उसका बहुत मोह। जब भी तीज त्यौहार पर आती घर में रौनक आ जाती। सोनाली के पापा सबसे छोटे थे, पहले दो ताऊ, फिर माया बुआ और फिर सोनाली के पापा रितेश थे। सोनाली का एक छोटा भाई भी था। यूं तो सबके अपने अलग अलग घर थे मगर बहुत आना जाना रहता।

भुआ के तीनों बच्चे और सोनाली के परिवार के सब बच्चे आपस में बहुत घुले मिले हुए थे। ये वो जमाना था जब बच्चे छुट्टियों में अक्सर नानके दादके जरूर जाया करते थे। भुआ के बड़े बेटे विदोष जिसके बेटे की शादी का कार्ड आया था वो सोनाली से करीब दस साल बड़े थे, उसके बाद अंगद जो पांच साल बड़े और फिर ईशा जो कि लगभग सोनाली की हमउम्र थी।

बात तब की है, जब सोनाली अंगद भैया की शादी में गई थी। भाईयों की शादी का सबसे ज्यादा शौक बहनों को ही होता है और कुवांरी बहनों को तो और भी ज्यादा। भाभी के आने की खुशी और फिर विभिन्न रस्मों में तैयार होना और शादी ब्याह के मौके पर एक दूसरे की खिंचाई करना। ईशा और

सोनाली की दोस्ती बहुत गहरी थी तो सोनाली शादी से एक हफ्ता पहले ही आ गई। चांस की बात है कि तब उसके ग्रेजुएशन के फाईनल पैपर खत्म हो चुके थे, तो वो दिमाग से भी फरी थी।

शादी ब्याह में अनगिनत काम रहते है, शापिंग का काम तो आखरी दिन तक चलता ही रहता है। अभी तक सोनाली के इलावा कोई मेहमान नहीं आया था। यहां तक कि ईशा के बड़े भाई ने भी शादी से दो दिन पहले ही आना था, क्योंकि छुट्टियों की समस्या तो नौकरी वालों को रहती है, लेकिन वो शादी के हफ्ता बाद तक रूकने वाले थे ताकि घर को संभालने में मदद हो जाए।

बाजार के काम से लगभग रोज ही ईशा का चक्कर लगता, अब सोनाली के आने से उसे कुछ राहत मिली। दर्जी के पास जाने को तैयार बाहर निकली ही थी कि सामने एक गाड़ी आकर रूकी। ईशा ने देखा तो उसके ताऊ का लड़का एकांश था। "चलो, मैं छोड़ दूं, कहां जा रही है सवारी" एकांश ने हंसते हुए कहा। ओह भैया आप, ईशा ने कहा। हां, मैं किसी काम से जा रहा हूं, एकांश ने बड़ी गहरी नजरों से सोनाली की और देखते हुए कहा। चलो ये तो बढ़िया, मैं तो आटो ढूढ़ रही थी। सोनाली की और एंकाश को सवालिया नजरों से देखते हुए देखकर ईशा ने दोनों का परिचय कराते हुए कहा कि ये सोनाली है, उसके छोटे मामा की बेटी और सोनाली, ये मेरे ताऊ का बेटा एकांश है। दोनों ने एक दूसरे को मुस्करा कर हैलो की और गाड़ी चल पड़ी।

उन दोनों को छोड़कर एकांश आगे बढ़ गया। अपना काम निपटा कर वो दोनों घर वापिस आ गई। सोनाली को एंकाश बहुत ही अच्छा लगा। लंबा चौड़ा, सुंदर नवयुवक, उसमें हर वो खूबी थी जो किसी भी लड़की को अपनी और आकर्षित कर सके। उधर एकांश को भी सोनाली पहली नजर में ही भा गई। पूरी शादी में एंकाश की नजरे सोनाली का पीछा करती रही और सोनाली एंकाश का ईंतजार, मेहंदी, हल्दी, संगीत या जितने भी फंक्शन हुए बस दोनों एक दूसरे को ही देखते रहे।

ईशा ने भी नोटिस तो किया लेकिन वो व्यस्त ही इतनी रही कि ज्यादा ध्यान नहीं दे पाई। ईशा के पिताजी और एकांश के पापा चाचा ताऊ के बेटे थे। दोनों के घर भी आसपास ही थे लेकिन आजकल किसी के पास समय नहीं रहता तो आना जाना कम ही रहता था। वैसे संबध अच्छे थे। बहुत ही कम आने

वाला एकांश पूरी शादी में वहीं रहा। सुबह को आकर रात को ही जाता। उसके पिताजी की राशन की अच्छी बड़ी दुकान थी जिस पर पिताजी के इलावा एकांश का बड़ा भाई भी बैठता था। बड़ा भाई पढ़ाई में होशियार था, फिलहाल तो वो दुकान पर पिताजी की मदद कर रहा था लेकिन उसका सपना नौकरी करने का था, वो पैपर वगैरह दे रहा था, मगर एकांश का पढ़ाई में मन कम ही लगता था, मुश्किल से बारहंवी पास की थी। वो दुकान पर कम जाता और आवारागर्दी ज्यादा करता था।सब घर के समझाते पर वो अपनी मर्जी ही करता। इसी बीच उसके बड़े भाई की बैंक में नौकरी लग गई और वो दूसरे शहर चला गया।

शादी का सारा काम अच्छे से निपट गया। सब मेहमान चले गए। सोनाली के परिवार वाले भी जाने को तैयार थे तो सोनाली को भी वापिस जाना था, उसका मन तो कर रहा था कि वो दो चार दिन और रूके और एकांश से अकेले में मिले, लेकिन ऐसा अवसर नहीं मिला।

दोनों में सिर्फ इशारे ही हुए, कुछ बातें हुई लेकिन प्यार, मुहब्बत जैसी कोई बात नहीं हुई, शादी ब्याह के माहौल में हँसी मजाक तो चलता ही रहता है। दोनों ने एक दूसरे का मोबाईल नंबर जरूर ले लिया था। एकांश ने भी अपनी और से कोई ऐसी पहल नहीं की थी, जिससे सोनाली को उसके दिल की बात पता चलती। सोनाली वापिस तो आ गई परन्तु कुछ तो वहीं छूट गया। कुछ दिनों बाद ईशा का फोन आया तो सोनाली के मन में तो आया कि एकांश के बारे में पूछे लेकिन हिम्मत नहीं हुई। इसी बीच ये पता चल गया कि एकांश के बड़े भाई की शादी हो गई। अब तो रास्ता साफ था।

सोनाली की बुआ इसी बीच मायके आई तो ईशा भी साथ थी। शादी की उर्म अब ईशा की भी थी और सोनाली की भी। सोनाली की बातों से ईशा समझ गई कि वो एकांश को चाहने लगी है। सोनाली की मां ने ननद से कहा भी कि वो सोनाली के लिए कोई लड़का देखे और ईशा के लिए भी वर की तलाश जारी थी। घर जाकर ईशा ने अपनी मां से सोनाली के लिए एकांश का रिश्ता सुझाया तो उसकी मां पहले तो चुप रही, फिर कुछ सोचते हुए बोली कि वो सोनाली से बहुत कम पढ़ा लिखा है। लेकिन मां, पैसे की तो कोई कमी नहीं, ईशा ने कहा। चलो पता करूगीं, माया ने कहा।

ईशा ने यह सब बातें सोनाली को बताई तो सोनाली ने ईशा से कहा कि उसे उसके कम पढ़े होने से कोई फर्क नहीं पड़ता। फिर पता नहीं बड़ों में क्या बाते हुई कि एकांश से रिश्ते की बात वही ठप्प हो गई।सोनाली भी कुछ न कर सकी क्यूंकि एकांश ने कोई पहल नहीं की। कुछ महीनों बाद ही सोनाली का रिश्ता एक अच्छे घर में आर्यन जो कि इंजिनियर था और सरकारी नौकरी करता था, उससे हो गया और जल्दी ही शादी भी हो गई। सोनाली कुछ न कर सकी लेकिन अपनी शादी में उसने माया बुआ से और ईशा से बिल्कुल ढ़ग से बात नहीं की। ईशा ने तो उसे पहले फोन पर भी कहा था कि उसने बहुत कोशिश की परन्तु उसके ममी पापा ने बात नहीं चलाई। लेकिन सोनाली के मन मे ये रहा कि उसकी बुआ ने ही ये रिश्ता नहीं होने दिया।

सोनाली को बहुत अच्छा पति और परिवार मिला, दो प्यारे बच्चे भी हो गए लेकिन न जाने क्यों मन के एक कोने में एकांश की यादें अभी भी थी और माया बुआ से तो जैसे उसने नाता ही तोड़ लिया था। कभी मजबूरी में आमना सामना हुआ भी तो बस औपचारिकता निभाई। और तो और वो तो ईशा की शादी में भी नहीं गई, कुछ बहाना बना दिया था। सोनाली ने अपने भाई की शादी में भी बुआ से दूरी बनाए रखी। किसी कारणवश ईशा नहीं आ पाई थी।

सोनाली यादों में ऐसी डूबी कि चाय पीना ही भूल गई, वो तो काम वाली ने घंटी बजाई तो उसकी तद्रां टूटी। चुपचाप उठ कर घर के कामों में लग गई। शादी का कार्ड उठाकर सरसरी नजर डाली और एक और रख दिया। शाम को आर्यन की आते ही नजर कार्ड पर पड़ी, पढ़कर बड़े खुश हुए, लेकिन सोनाली के चेहरे पर कोई खुशी के भाव न देखकर वो हैरान हुआ और जब उसने जाने से ही मना कर दिया तो वो चौंक उठा।" अरे भई, लड़कियां तो मायके जाने के बहाने ढूढ़ती है, और एक तुम हो कि शादी में जाने से मना कर रही हो, सजने संवरने का मौका तो औरतें कभी मिस नहीं करती"।

छोड़ो क्या करेगें, बुआ के पोते की शादी है, इतनी दूर तक रिश्ते निभाने अब मुश्किल है, सोनाली ठंडे स्वर में बोली। अच्छा तो ये रिश्ता दूर का हो गया, एक ही तो बुआ है तुम्हारी, अरे वो तुम्हें कितना मानती है। याद है एक एक बार जब मैं आफिस के काम से भोपाल गया था तो जैसे ही उनहें मेरे आने का पता लगा, होटल में रूकने ही नहीं दिया, तुम्हारे भाई अंगद ने मेरी एक नहीं

सुनी, चार दिन अपने घर पर ही रखा। और मेरी वो खातिरदारी की कि मैं आज तक नहीं भूला। अरे भाई विदोष के बेटे विहान की शादी है, तुम भी तो उसकी भुआ लगी और मैं फूफा, यह कह कर आर्यन हंसने लगा।

उसकी असली बुआ ईशा है, मैं नहीं। पता नहीं तुम्हें कभी कभी क्या हो जाता है पद्रंह साल हो गए हमारी शादी को, बुआ माया जब भी मिलती है कितना प्यार जताती है, और तुम्हारा गुस्सा नाक पर रहता है। तुम अपने दोनों ताऊ के घर तो बड़े चाव से जाती हो, और हां याद आया दो साल पहले तुम्हारी मासी की भी तो हम पोती की शादी पर गए थे, तब तो तुम्हें रिश्ता दूर नहीं लगा, आर्यन ने कहा।

छोड़ो भी, आओ चाय पीओ, दफ्तर से थके मांदे आए हो, और दोनों चाय पीने लगे। आर्यन ने भी एक बार तो बात बंद कर दी। उसे कुछ काम भी था।शादी को अभी एक हफ्ता था। बुआ का फोन आया तो उसने एक दो बातें करके बात खत्म कर दी। उसे गुस्सा तो सिर्फ बुआ से ही था, लेकिन बाकी परिवार से भी उसने कुछ खास मेलजोल नहीं रखा।

कई बार तो उसे खुद समझ नहीं आता था कि वो क्यों नाराज है। उसे शादी के बाद सब कुछ मिला, फिर भी न जाने वो क्यों एकांश को भूल नहीं पाई। अंगद की शादी के बाद वो कभी उससे नहीं मिली, आखिर ये कैसा आकर्षण था। आर्यन देखने में भी किसी भी तरह से एकांश से उन्नीस नहीं बल्कि इक्कीस ही रहा होगा। उसकी मां का फोन भी आया कि वो शादी में जरूर आए, इसी बहाने सारा परिवार मिल लेगा। इधर आर्यन और बच्चे भी शादी में जाना चाहते थे तो मजबूरन सोनाली को जाना पड़ा, लोकिन वो शादी वाले दिन ही गई।

अगले दिन की वापसी थी लेकिन बच्चों ने भोपाल घूमने की जिद की तो उन्हें रूकना पड़ा। सोनाली के मन में भी एकांश को देखने और उसके बारे में जानने की इच्छा थी लेकिन वो पूछे भी तो किससे। सब मेहमानों को गौर से देखा लेकिन उसे एंकाश नहीं दिखा। सुबह ही वो घूमने निकल पड़े। कुछ भूख लग आई तो वो एक छोटी सी ढ़ेलेनुमा दुकान पर रूक गए। कई तरह के गर्मागर्म पकौड़े बन रहे थे। सादी सी साड़ी पहने अत्यंत सलीके से एक औरत सर्व कर रही थी। सोनाली को उसकी शक्ल कुछ जानी पहचानी लगी। पकौड़े

खाते खाते वो सोचने लगी कि इसे कहां देखा है। ओह, फिर उसे ध्यान आया कि ये तो कल शादी में आई हुई थी।

सोनाली ने पूछ ही लिया तो उसने मुस्कराते हुए कहा कि हां, वो कल शादी में गई थी। उनकी रिश्तेदारी है। सोनाली को न जाने क्या सूझी कि वो उससे बातें करने लगी। बच्चे पकौड़े खाने में व्यस्त थे और आर्यन को कोई जरूरी फोन आ गया था। सोनाली ने भी अपना रिश्ता बता दिया था। वो औरत जिसका नाम रमोला था वो एंकाश की पत्नी थी। लेकिन एंकाश की तो बहुत अच्छी दुकान थी, सोनाली ने अपनेपन से कहा, दरअसल मन के किसी कोने में अब भी वो एंकाश के बारे में जानने की चाह रखती थी।

बस सब किस्मत की बात है, यह कह कर वो उठ गई क्यूंकिं उसे दुकान पर काम करना था। बहुत से सवाल मन में लिए वो शाम को घर आ गए। अगले दिन निकलना था। ईशा से उसकी दोस्ती तो बहुत पहले ही खत्म हो चुकी थी, बस हाय, हैलो ही होती। सब मेहमान लगभग जा चुके थे। सोनाली अपने कमरे में पैकिंग कर रही थी, तभी ईशा वहां आई और बिना किसी भूमिका के बोली, मिल लिया एकांश भैया की पत्नी से, खा लिए पकौड़े, पूछा नहीं एकांश के बारे में। दरअसल ईशा भी किसी काम से बाजार गई थी तो इतफाक से उसने सोनाली को वहां देख लिया था।

इससे पहले कि सोनाली कुछ कहती, ईशा ने कहा, सोनाली मेरी बहन तूं हम सबसे कितने सालों से नाराज है, मैनें कई बार तेरे से बात करने की कोशिश की, लोकिन तूने मौका ही नहीं दिया। मैं भी नहीं जानती थी, जब एकांश से तेरी शादी की बात चलाई तो मां ने साफ मना कर दिया। दरअसल एकांश को नशे की आदत पड़ चुकी थी। शराब और जुए की लत भी। बड़ा भाई तो नौकरी करने दूसरे शहर चला गया। ताया जी की उम्र भी हो गई थी और बेटे की हरकतों ने बीमार कर दिया। दुकान एंकाश के हवाले।

उसकी बुरी आदतों ने सब खत्म कर दिया। बेचारी रमोला भाभी फंस गई इसकी पत्नी बन कर । दो बच्चे हो गए। ताऊ जी इसी गम में चल बसे। किसी के समझाने का कोई असर नहीं। शायद तूने शादी में एक बूड्ढे से दिखने वाले आदमी को देखा नहीं, जो एक कोने में बैठा था शादी में, वो ही एकांश

भाई है।नशा, धन, सेहत सब खा गया। ईशा ने फोन निकालकर शादी की तीन चार फोटो दिखाई जिसमें एंकाश भी दिखाया।

ओह माई गाड, ये एकांश है, सोनाली को एकदम झटका लगा, अगर ईशा न संभालती तो शायद वो गिर ही पड़ती। धम्म से वो कुर्सी पर बैठ गई।

ईशा ने उसे पानी पिलाया और कहा, अब तो समझ गई ना कि क्यों मां ने तेरा रिश्ता नहीं होने दिया। सहानुभूति तो हमें रमोला भाभी से भी बहुत है, लोकिन क्या करते, कैसे मना करते।उन्हें जानते ही नहीं थे। ताई जी भी बीमार रहती है, वो बड़े भैया के पास है। बच्चों को पालने और घर चलाने के लिए रमोला भाभी ही काम कर रही है। कुछ मदद बड़े भैया और कुछ उसके मायके वाले कर देते है।

सोनाली की नजरे जमीन में गड़ी जा रही थी। उसमें ईशा के साथ नजरें मिलाने की भी हिम्मत नहीं थी। तभी किसी ने उसके सिर पर प्यार से हाथ रखा, देखा तो माया भुआ खड़ी अपनी आंखे पोंछ रही थी। पता नहीं वो कब से वहां खड़ी थी। भावुक होकर वो बुआ के गले लग गई। मुझे माफ कर दो बुआ, मैं कितनी बड़ी गल्तफहमी में जी रही थी। "बेटी, मुझे भी नहीं पता था कि तूं इतना दिल से लगा लेगी, मुझे लगा, उम्र का आकर्षण है, खत्म हो जाएगा" ओह बुआ, बचा लिया आपने मुझे , और मैनें कितना गल्त समझा आपको और तीनों गले लग गई। सारी गलतफहमियां दूर हो चुकी थी।

नई शुरूआत

मालती को आस्था कालोनी में आए लगभग तीन साल होने को आए, लेकिन अभी भी वो अपने आप को पूरी तरह एडजस्ट नहीं कर पाई। चूकिं मंयक बहुत बड़े सरकारी पद पर थे तो उसका परिवार बहुत अच्छे सरकारी बंगले में रह रहा था, लेकिन पति की रिटायरमैंट के बाद तो उसे खाली करना ही था। काफी पहले उन्होनें इस नवनिर्मित कालोनी में प्लाट ख़रीदकर मकान बना लिया था। उसे चार पाँच सालों से किराए पर ही दे रखा था, मगर पिछले साल खाली करवाकर रंगरोगन कुछ मुरम्मत वगैरह करवाकर बिल्कुल नए जैसा कर लिया। प्लाट तो काफी बड़ा था, लेकिन मालती और उसके पति मंयक ने ज़रूरत मुताबिक बनवा कर काफी ग्रीन एरिया छोड़ दिया था जिसमें कि तरह तरह के पेड़ पौधे, फल फूल लगे थे। पति- पत्नी दोनों को ही बाग़वानी का बहुत शौक़ था। सरकारी बंगले में भी उनका यही शौक़ रहा। जब वो बंगला खाली करके आए तो एक बार तो दोनों का मन ही बहुत उदास था। बहुत सी यादें जुड़ी थी।

बच्चों की शरारतें, उनका बचपन सब वहीं पर बीता। मनु और आभा दोनों का जन्म भी तो उसी बंगले में ही हुआ। बीच में मंयक की दो बार ट्रासंफर भी हुई, मगर कुछ जुगाड़ लगा कर उसने बंगला खाली नहीं किया और अकेला ही दूसरे शहर में किराए का घर लेकर रहा ताकि बच्चों की पढ़ाई में कोई व्यवधान न आए। दिन तो जैसे पंख लगा कर उड़ गए। पढ़ लिख कर दोनों बच्चों की शादियाँ भी हो गई। मनुज तो न्यूज़ीलैंड में ही बस गया और आभा की शादी दिल्ली में हुई। दोनों अपनी गृहस्थी में मग्न हो गए। कभी कभार छुट्टियों में कुछ दिनों के लिए आते तो रौनक़ सी लग जाती, वरना तो दोनों अकेले ही होते। बच्चे को सुखी देखकर हर माँ बाप की तरह ये दोनों भी खुश थे। बल्कि अगर ये कहा जाए कि अब फरी होकर दोनों जीवन के इस दौर का भी भरपूर आंनद उठा रहे थे तो अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा। मंयक अपनी दोस्तमंडली और बाहर के कामों में व्यसत रहते तो मालती घर गृहस्थी में। काफी पढ़ी लिखी होने के बावजूद भी मालती ने नौकरी नहीं की थी।

उसे लिखने पढ़ने का बचपन से ही शौक था। सिलाई, बुनाई, कढ़ाई में भी उसकी विशेष रूचि थी। कुकिंग तो जैसे उसका मनपंसद विषय था। जब बच्चे साथ थे तो रसोई हर समय विभिन्न पकवानों की महक से महकती, मगर अब वो सब बहुत कम हो गया। मसालेदार , तली भूनी चीजों से परहेज़ और उम्र का भी तक़ाज़ा। वैसे तो मंयक की सेहत ठीक थी मगर शूगर की नामुराद बीमारी उन्हें काफी पहले से लग गई थी, तो परहेज़ आवश्यक हो गया। आभा तो जब भी आती , माँ के हाथ से बने आचार, मठरियाँ , बेसन की बर्फ़ी के इलावा और भी खूबसारा सामान लेकर जाती, जबकि मनु बेचारा तो मन मसोस कर रह जाता। वीडियो काल पर खाने का सामन दिखा दिखा कर अब भी वो मनु को चिढ़ाती , और जा कर रहो परदेस, बड़ा चाव था ना विदेश जाने का। और फिर दोनों की आखों में आँसू भर आते। मालती में एक और ख़ासियत थी, वो कभी अकेलेपन से बोर नहीं होती थी। मायके ससुराल में इस उम्र में हर कोई बिजी था। कभी कभार ही कोई मेहमान आता। अपने इस खाली समय का उपयोग वो लिखने, पढ़ने और बाग़वानी में करती। मालती की कई कहानियाँ , कविताएँ प्रकाशित हो चुकी थी। सुबह के समय वे दोनों अक्सर सैर के लिए निकल जाते। घर का कामकाज अब इतना था नहीं, वैसे भी काम के लिए फ़ुल टाईम मेड सीमा थी, जो कि सारा काम बखूबी संभालती।

सीमा काम में कुशल होने के साथ साथ बहुत बातूनी भी थी। काम तो सिरफ वो इन्हीं का करती थी लेकिन उसके पास ख़बरें मुहल्ले भर की रहती। मालती को किसी की घर गृहस्थी में झाँकने का शुरू से ही कोई शौक़ नहीं था, लेकिन न चाहते हुए भी उसे कई बार सीमा की बाते सुननी पड़ती, जिनमें सच्चाई तो पता नहीं कितनी थी, मगर हाँ, नमक मिर्च खूब लगा होता। कई बार तो उसकी बातों पर मालती को हँसी आती और कई बार जी भर के ग़ुस्सा। कई बार टोका भी, मगर सीमा थी कि ढ़ाक के वही तीन पात। वो मालती का मूड देख कर चुप भी हो जाती। कहते है कि जैसे जैसे उम्र बढ़ती है, आदमी की आदतों में भी बदलाव आता रहता है। कभी न बोर होने वाली मालती जैसे अब कई बार बोर सी हो जाती। शारीरिक क्षमता कम होने से वो अपने शौक़ वाले काम भी नहीं कर पाती थी। मुहल्लें में वैसे तो सब लोग उन्हें जानते थे, लेकिन सिर्फ दुआ सलाम तक ही। पहले तो वो जब भी बाहर निकलती तो मंयक साथ ही होते, लेकिन अब उसने शाम के समय पास वाले पार्क में जाने का निर्णय लिया, और

अक्सर ही वो शाम को एक डेढ़ घंटा पार्क में बिताती। धीरे धीरे उसकी जानकारी कई लोगों से होने लगी। सच पूछो तो अब उसे भी लोगों से मिलने जुलने में आनंद आने लगा। आख़िर तो मनुष्य एक सामाजिक प्राणी ही है।

पार्क में सैर भी हो जाती, कुछ प्राणायाम भी कर लेती। वहाँ पर मुहल्ले की औरतें भी मिलती, कुछ छोटे बच्चों को घुमाने आती तो कुछ गप्प शप, हँसी मज़ाक, निंदा चुगली सब कर लेती। कुछ तो जैसे फ़ोन पर बातें ही करने आती। मालती ने नोटिस किया कि वो मोबाईल पर बातें ही करती रहती। कभी कभी राह चलती किसी की आवाज़ कानों में में भी पड़ी तो ऐसा लगा कि वो अपनी बहन , बेटी या सहेली को परिवार के विरूद्ध भड़का रही हो। और कुछ नौजवान लोग तो हैडफ़ोन लगाए अपनी ही आभासी दुनिया में मग्न है। 'कितने अकेले हो गए है हम' मालती सोचती। फिर उसे ख़ुद पर भी हँसी आई कि वो भी कहाँ किसी से मिक्स हो पाई है, अब तक। माना कि अब वो सब्ज़ी की कटोरियाँ बदलने या छोटी मोटी चीजे मुहल्ले से लेने का रिवाज नहीं रहा, लेकिन कुछ बातचीत और दुख सुख में शामिल तो हुआ ही जा सकता है।

जहाँ वो पहले सरकारी आवास में रहते थे, वहाँ तो मिलना जुलना होता था, और लगभग सभी का रहन सहन भी एक सा था, लेकिन यहाँ पर बात कुछ और थी। यहाँ कोई बिजनैस मैन था तो किसी का कुछ और काम। कम ज्यादा पढ़े लिखे लोग भी थे। किरायेदार भी थे। मसलन की हर तरह के लोग थे। कुछ औरते चाहते हुए भी मालती से खुल नहीं पाई थी। मालती सब समझती थी। उसने सोचा कि वो अब ख़ुद ही पहल करेगी। मालती भले ही नौकरी नहीं करती थी, मगर उसे आस पास देश विदेश की हर ख़बरों में रूचि थी और जानकारी भी थी। सामाजिक, पारिवारिक विशेषतौर पर औरतों के अधिकारों के बारे में ज़्यादा लिखती थी। इसके इलावा और भी बहुत सी सामाजिक, घरेलू विसंगतियां उसके मन को झकझोरती थी। एक वो जमाना था, जब परिवार संयुक्त थे, नौकरी पेशा लोग कम थे, औरते भी बहुत कम बाहर काम पर जाती थी, लेकिन आज का सामाजिक ढ़ाचां तो बिलकुल बदल चुका है। पुरानी बातें तो अब इतिहास बन चुकी है। लेकिन इन्सान और उसकी फ़ितरत तो वही है, भला वो कैसे बदल सकती है। उँची उँची दीवारों, मंहगे कपड़ों और शानदार

सोसायटीयों में रहने वाले अक्सर लोग असलियत में कम दिखावे में ज्यादा विश्वास करते है।

जब तक कोई मुहँ न खोले या किसी से वास्ता न पड़े तब तक सब अच्छा ही अच्छा है। अभी कुछ दिन पहले की ही बात है, गली की नुक्कड़ पर दो कारे टकराते टकराते बची। दोनों की ही ग़लती थी, पर अपनी ग़लती मानने की बजाए दोनों में खूब गाली गलौच हुई। शराफ़त का सारा आवरण पल भर में उतर गया। लगता है आजकल बहुत सी लड़ाईयां तो गाड़ियों के कारण ही होती है, फिर चाहे वो पार्किंग के लिए हो या साईड देने के लिए। इसके साथ तो और भी बहुत से कारण जुड़े हुए है।और भी बेवजह की बहुत सी घटनाएँ रोज ही देखने को मिलती है। मॉल में हज़ारों रूपए खर्च करने वाले कामवाली को पैसे देते समय, सब्जियों के मोलभाव करते समय, और तो और डिलीवरी मैन को थोड़ी सी देर हो जाए तो डाँटते हुए देख कर नेक दिल इन्सान तो भावुक हो ही जाते है। यही सब बाते मालती को कचोटती थी, वो जानती थी कि ऐसी छोटी छोटी बातें ही समाज को खराब करती है। घरों से ही बच्चे को अच्छे संस्कार मिले, फिर स्कूल, समाज आता है। अब ये किसी एक के बस की बात तो है नहीं, परन्तु जितना हो सके उतनी ही करो। जो ख़ुद से बन सके, उतना ही सही।

उसका मन देश और समाज के लिए , और नहीं तो अपने आस पास के लिए ही कुछ अच्छा करने को करता, लेकिन कैसे, वो समझ न पाती। ऐसे ही एक शाम वो पार्क में बैठी यहाँ से वहाँ भागती गिलहरियों को निहार रही थी, तो उसके पास से मुहल्ले की दो औरते गुज़री। दोनों ने उसे अभिवादन किया, तो वो भी प्रत्युत्तर में मुस्करा दी। न जाने कैसे उसके मुँह से निकला, "कैसी हो"। 'बहुत बढ़िया दीदी', कह कर वो चलने को हुई तो मालती भी उनके साथ ही उठ खड़ी हुई। काफी देर तक वो उनके साथ ही घूमती रही। कुछ बातें हुई। मालती को बहुत अच्छा लगा। अब तो लगभग ये रोज ही होने लगा। मालती किसी न किसी औरत के साथ ही टहलती। जब वो इकट्ठा बैठी होती तो उनके बीच वो भी बैठ जाती। सर्दियों की गुनगुनी धूप में एक रोज सब बैठी थी तो मालती भी आ पहुँची। वहां किट्टी पार्टी पर चर्चा चल रही थी। विभी जो शायद उन सबकी लीडर थी, कह रही थी कि नीति के जाने से उनका एक मैंबर कम

हो गया। नीति के पति की ट्रांसफर हो गई थी तो सबको जाना ही था। वो तो बनती दो किश्ते भी एडवांस में ही दे गई थी। चलो, न सही बारह, ग्यारह मैंबर ही ठीक है' राधिका ने कहा। तभी उसने एकदम से मालती की और देखते हुए कहा, दीदी, आप क्यों नहीं जुआईन करती हमारा गरूप? पहले मालती से दूर दूर रहने वाली सब अब उससे काफी हद तक खुल चुकी थी। मैं और किट्टी पार्टी, न भई न, मैनें जिंदगी में कभी कोई किट्टी नहीं डाली।' चलो, फिर शुरूआत हमारे गरूप से ही करो, अशुंल मुस्करा कर धीमे से आखं दबा कर बोली। मालती भी असंमज में पड़ गई। विभी ने जल्दी से उसे बता दिया कि हर मैंबर पाँच हज़ार महीना देता है, जिसकी पर्ची निकलती है, उसे सारे पैसे यानि कि अगर बारह मैंबर हुए (जो कि हर बार होते है) साठ हज़ार दे दिए जाते है, हर महीने की दस तारीख को उसके घर पर सब इकट्ठा होकर खाना पीना मौज मस्ती होती है। एक मुश्त रकम भी मिल जाती है, और मिलना जुलना भी होता रहता है। विभी ने कुछ और नियम भी बताए। 'ठीक है, कल बताऊँगी , कह कर मालती ने विदा ली।

रात को काफी देर तक वो सोचती रही, मंयक से पूछा तो उसने कहा, जैसे तुम्हें ठीक लगता है, करो। मालती को लगता था कि वहाँ गहनों कपड़ो की नुमाइश होगी, सास बहू के क़िस्से चटखारे ले कर ब्यां किए जाऐगें। किसके घर लड़ाई हुई, किसका अफ़ेयर कहाँ चल रहा है, कौन रिश्वत लेता है, किसने नई गाड़ी ली, वगैरह वगैरह,या फिर उसकी क़मीज़ मेरी क़मीज़ से सफेद कैसे। पैसों की कमी उसे नहीं थी तो ये विषय तो उसके लिए गौन था। सुबह तक उसने निर्णय ले लिया कि एक बार वो शामिल हो ही जाती हैं। क्यूँ सोचे कि बुरा ही होगा, और नहीं तो कुछ तजुर्बा ही होगा", ये सोचकर अगले दिन जब उसने हाँ बोली, तो सभी ने खुशी से तालियाँ बजाई। विभी पर्चियाँ बना कर साथ ही लाई हुई थी। फटाफट एक बची हुई पर्ची पर मालती का नाम लिखा, और मिक्स करते हुए सब गिरा दी। पास से निकलते हुए एक छोटे से बच्चे से एक उठाने के लिए कहा। खोली तो 'शामली' लिखा हुआ था। 'हिप हिप हुर्रे , सब चिल्लाई। मालती की आँखो के सामने कालिज का सीन घूम गया। इस तरह से खुल कर मुस्कुराइए तो जैसे जमाना ही हो गया। कैसे बड़े होकर हम एक लबादा सा ओढ़ लेते है, मालती सोच रही थी। दस तारीख को शामली के घर मिलना अब तय था। सुधा का घर मालती के सबसे नज़दीक था। क्योकि मालती

पहली बार जा रही थी तो सुधा ने कहा कि वो दोनों इकट्ठा चलेगी। वैसे तो सब कालोनी में आस पास ही थे, मगर यहाँ किसी के घर मालती को पहली बार जाना था, इसलिए उसे थोड़ी झिझक भी लग रही थी।

दस तारीख भी आ गई। सलीक़े से तैयार होकर वो सुधा के साथ शामली के घर पहुँच गई। पाँच सात मिंट में सभी पहुँच गई। पंगचुऐलिटी से शुरूआत हुई। तंबोला, गाना, हँसी मज़ाक, खाना पीना सब हुआ, अढाई घंटे कैसे बीत गए, पता ही नहीं चला। उससे भी कुछ सुनाने का आग्रह हुआ, लेकिन उसने अगली बार के लिए कह कर टाल दिया। मालती को ये नया अनुभव अच्छा लगा। कुछ भी ऐसा नहीं हुआ, जो उसे अच्छा न लगे। दूसरों की बुराई, दिखावा, फालतू की शोशेबाजी जैसा कुछ भी नहीं था। बल्कि कुछ देर के लिए एक बात की चर्चा जरूर हुई। पिछले मुहल्लें में रहने वाले मिस्टर सूद की अटैक आने से मौत हो गई थी, जिसका पता कईयों को बहुत बाद में लगा। ये भी पता चला कि वो काफी समय से बीमार चल रहे थे, जिस समय डैथ हुई, घर पर कोई नहीं था। उनके बच्चे दो दिनों के लिए कहीं बाहर गए हुए थे। एक दिन तक किसी को पता नहीं चला। आगे भी इसी विषय में बात हुई, मगर मालती ने ज्यादा कुछ नहीं सुना, वो न जाने किस सोच में डूबी हुई थी। पार्टी खत्म हो गई। सब घर आ कर अपनी अपनी दिनचर्या में व्यसत हो गए। अगली किट्टी मिसेज़ नरूला के घर पर थी।

वहाँ पर भी सब बढ़िया रहा, खाना पीना, तंबोला, थोड़ा नाच गाना भी हुआ। मुहल्ले भर की ख़बरों की चर्चा भी न्यूज़ बुलेटिन की तरह होती रही। कईयों को कुछ बातों का पता होता था, तो कुछ को तो सारी ख़बरों की ही जानकारी होती थी। अच्छा बुरा कुछ नहीं, बस चर्चा होती थी। इस बार की चर्चा एक ससुर और बहू पर केंद्रित थी, बहू का बुजुर्ग ससुर के साथ व्यवहार अच्छा नहीं था। दो साल पहले ही उसकी सास की मृत्यु हो गई थी। बेचारा बुजुर्ग अब बेटा बहू पर ही आश्रित था। थोड़ी इधर उधर की बातों के बाद पुराना रूटीन चल पड़ा। मालती का दिल भी अब वहाँ रमने लगा, लेकिन उसे कुछ कमी सी लगती। किट्टी का मतलब सिरफ खाना पीना, मौज मस्ती ही हो या कुछ और भी। इसी प्रकार सात महीने बीत गए। अभी तक मालती के घर किट्टी नहीं हुई थी। उसके नाम की पर्ची नहीं निकली थी। लेकिन अब मालती को अपनी पूरी

कालोनी के बारे में पता चल गया था। वहाँ पर दस पंद्रह मिंट महीने भर की हर खबर की चर्चा होती थी। कुछ बातें तो सैर करते वक्त भी होती, लेकिन किट्टी में तो सब बाते होती। किसके घर लड़ाई हुई, किसके घर पुलिस आई, किसका पति बेटा शराब पीकर हंगामा करता है, किस सास बहू की नहीं बनती, किसकी लड़की रात को देर से घर पर आती है। दो पड़ौसियों का कूड़ा फेंकने को लेकर झगड़े की बात इतनी बढ़ गई कि नौबत मारपीट तक आ गई। इसी प्रकार पार्किंग के लिए तूं तूं मैं मैं तो रोज की कहानी थी। पार्क में और उसके साथ सड़क पर आम और जामुन के पेड़ों पर खूब फल लगे हुए थे। पत्थर मार मार कर बच्चे तो क्या बड़े भी फल तोड़ते। दो तीन बार तो इसके लिए भी लड़ाई हो चुकी। गंदगी इतनी फैली हुई थी कि पास से निकलना मुश्किल। लेकिन सब लोग जैसे इन बातों के आदी थे। किसी को कुछ भी नया न लगता। कुछ देर की चर्चा के बाद सब सामान्य ।

लोग पार्कों में ही खाकर बचा खुचा सब वहीं फेंक देते। कुत्तों के लिए लड़ाई भी अकसर ही देखने को मिलती। आवारा कुत्तों से परेशानी के इलावा पालतू कुत्तों की गंदगी भी कम नहीं थी। सुबह सुबह मालिक बड़ी शान से उन्हें घुमाने ले जाते, लेकिन ये नहीं देखा कि गंदगी कहाँ फैली। अक्सर लोगों के घरों के आगे ही वो फ्रेश होते। पार्क के एक कोने में थोड़ा छुपकर अक्सर मुहल्ले के निठल्ले लोग ताश की बाज़ियों में रमे होते। जब पैसे खत्म हो जाते या हार जाते तो गाली गलौच की भी सीमा न रहती। जब थोड़ा सा अंधेरा हो जाता नौजवान युवक युवतियाँ वही आसपास ही आपत्तिजनक स्थिति में अक्सर बैठे दिख जाते। एक बाईक पर चार चार लड़के हूटर बजाते हुए फ़ुल स्पीड पर यू गेड़ियां लगाते कि कानों के परदे ही फट जाएँ। एक दिन मालती टहलती टहलती थोड़ा दूर निकल गई, क्या देखा कि एक लड़के ने सड़क किनारे गाड़ी रोकी और आराम से अंदर से खाली बोतलें, रैपर, यहाँ तक कि शराब की भी खाली बोतलें निकालकर वहीं साईड में फेंक दी।

मालती का मन वितृष्णा से भर गया। ये सब देखने से तो अच्छा था कि वो अपने घर में ही रहती। दरअसल उसने ये सब देखा ही नहीं थी। आफिसर लोगों की दुनिया ही अलग होती है। घर की चारदीवारी में भले जो हो, लेकिन ऐसी छोटी छोटी बातों की और कभी किसी ने ध्यान ही नहीं दिया। यह ठीक है

कि हर बात के लिए सरकार को कोसने का कोई लाभ नहीं, ये छोटी छोटी बातें तो कामन सेंस की है, अगर बच्चों में शूरू से ही अच्छी आदतें डाली जाए और उनके सामने उनका ख़ुद भी पालन किया जाए, तभी वो उनकी आदत बनेगी। कुछ दिन पहले की बात है, वो पार्क में अकेली बैठी थी, पास के बैंच पर में ही दो लड़के बैठ कर मूँगफली खा रहे थे। दोनों विदेश की बातें कर रहे थे कि कैसे दुबई में सफाई रहती है, अमेरिका में ये, आस्ट्रेलिया में वो, और फिर अपने देश की अनेकों कमियों पर चर्चा हुई। लेकिन जब वो उठ कर गए तो सारे छिलके वहीं बैंच पर और आसपास बिखरे पड़े थे। काश कि हर बात पर सरकार को कोसने से अच्छा है कि हम अपने व्यवहार पर भी एक नजर डाले। और अक्सर बड़े लोग भी एयर कंडीशनर कमरों में न बैठकर बाहर गरीबों और आम जनता की और ध्यान दे तो ही कुछ परिवर्तन संभव है।

अब मालती का मन अलग तरह की दुविधा में फँसा रहता। वो समाज के लिए कुछ करना चाहती थी, लेकिन समझ नहीं पा रही थी कि आख़िर क्या करे और कैसे शुरू करे। उसे अपना बचपन याद हो आया, जब वो गाँव में रहती थी। उसे ज़्यादा कुछ तो नहीं याद था, क्योकिं वो वहाँ कम ही रही। पिताजी की पोस्टिगं शहरों में ही थी, लेकिन इतना जरूर याद था कि वहां आपसी मेल जोल, प्यार मुहब्बत काफी था। आपस में आना जाना, मिलना, इकट्ठे खाना पीना चलता रहता था। आपसी छोटे मोटे झगड़े मिल बैठ कर सुलझा लिए जाते थे। बड़े बुजुर्गों का बहुत सम्मान किया जाता था। हर कोई एक दूसरे को जानता था, और आज ये आलम है कि पड़ौसी का या नीचे ऊपर की मंजिल पर रहने वालों का भी पता नहीं। उसे कुछ दिन पहले की घटना स्मरण हो आई। एक थोड़ी बड़ी उम्र का आदमी एक्टिवा पर अपने किसी दोस्त से मिलने आया। आजकल जैसे की अक्सर होता है, सब कुछ मोबाईल में ही रहता है। वो बेचारा आदमी गलती से अपना फ़ोन घर भूल आया। उसे सिर्फ एरिया और दोस्त का नाम ही पता था, फ़ोन नंबर और एड्रैस तो फ़ोन में ही था। उसने कई जगह रूक कर दोस्त का नाम लेकर पूछा। और वो था भी कहीं आस पास, पर किसी को नहीं पता ।

उसने कितने ही चक्कर काटे, आख़िर वो वापिस चला गया। अगले दिन वो फिर आया और अपने दोस्त से मिला, जबकि काफी लोग उनहें जानते

थे, लेकिन नाम वगैरह का पता नहीं था। मालती काफी ऊहापोह में थी कि आख़िर क्या करे कि उसके मन को सकून मिले, उसके अंदर का ख़ालीपन भरे। एक तो उसके मन में आया कि किट्टी में सबसे साथ बात करे और समाज सेवा का एक गरूप बनाया जाए। फिर उसने सोचा कि न जाने कोई कितना साथ दे। किसी के पास फ़ुरसत है भी या नहीं, किसी को इन सब में दिलचस्पी हो, ये जरूरी नहीं। आख़िर उसने' चैरिटी बिगनस एट होम' वाला नियम ख़ुद पर लागू करने की सोची। क्यों न पहली शुरूआत वो ख़ुद से करे,पर कैसे, सवाल फिर वही ? कुछ सोच कर वो शाम को घर से निकली, और पार्क में जाने की बजाए वहीं आसपास ही टहलने लगी। थोड़ी देर में एक औरत गोदी में रोता हुआ बच्चा लिए घर से बाहर आई, तो वही उसके पास रूक कर अपने तरीके से बच्चे को चुप कराने लगी। और सच में बच्चा चुप हो गया। वो बच्चा जो थोड़ी देर पहले चिल्ला रहा था, अब मुस्करा रहा था। कुछ देर वो उसके साथ खेलती रही। उसे निदा फाजली का ये शेयर याद हो आया," घर से मस्जिद है बहुत दूर चलो यूँ कर लें, किसी रोते हुए बच्चे को हँसाया जाए"। फिर थोड़ी देर उसकी मां से भी बातें की। काफी अच्छा महसूस हुआ उसे।

अगले दिन वो एक बुजुर्ग औरत से मिली, जो घर के पास ही धूप में कुछ उदास सी बैठी थी। अभिवादन करके वो उसके पास ही बैठ गई। बातें करते करते उसे पता चला कि कई दिन से उसका मोबाईल खराब है। बेटे बहू को कई बार कह चुकी है, लेकिन उसके पास समय ही नहीं होता। सारा दिन घर में अकेली रहती है, थोड़ा किसी से बात कर लेती, कोई विडियो देख लेती तो मन बहल जाता। उसका अपनी बेटी से बात करने को भी बहुत मन था, लेकिन नहीं कर सकी। हर घर की अपनी कहानी होती है। मालती ने ज्यादा कुछ नहीं पूछा। उसने अपने मोबाईल से बेटी की बात करवा दी। नंबर माताजी के पास डायरी में था। उसका मोबाईल भी साथ ले आई, किसी को भेजकर ठीक करवा दिया। जब माताजी को वापिस दिया तो उसकी आँखो ने बिना मुँह खोले सब कब दिया। जब उस बुजुर्ग ने उसके हाथों को चूमा तो जैसे उसके मन को भी सकून मिला। कई बार छोटी छोटी चीजों में भी बड़ी बड़ी खुशियां छुपी होती है।

एक बार मुहल्ले में किसी ने कोई प्रोग्राम किया था, जैसा कि अक्सर होता है, खाना बच जाता है, वो सारा खाना कूड़े के ड्रम में डाला पड़ा था। सुबह कुछ लोग बतिया रहे थे कि काश ये खाना जरूरतमंदों के मुहँ में जाता तो कितना अच्छा होता। कमेटी वालों की लाख कोशिशों के बाद भी गीला सूखा कूड़ा ढ़ग से अलग नहीं हो पा रहा था। घरों की बाग़वानी का कचरा भी यहाँ वहाँ बिखरा रहता। अपना घर साफ रहे, गली मुहल्ला जाए भाड़ में। और जब बरसात हुई अच्छी भली गलियों में घुटने घुटने पानी भर गया। कभी कभी लगता है कि पानी की कितनी कमी है। वैज्ञानिकों के अनुसार अगर हम अभी न संभले तो आने वाले समय में पानी की एक एक बूँद को तरसना पड़ सकता है। समय आ गया है कि पानी को संरक्षित किया जाए। ऐसी ही और भी बहुत सी बातें मालती के मन में आती रहती। उसे कहीं पर पढ़ी ये पक्तिंया याद हो आई कि जिंदगी के रंगमंच पर अपना किरदार कुछ इस तरह से निभाया जाए कि पर्दा गिरने के बाद भी तालिंया बजती रहें। उसे इस जगह पर आए कितना समय हो गया, लेकिन कभी ध्यान ही नहीं दिया। उसे अब पता चला था कि आम लोगों की दुनिया क्या होती है। अगर ख़ास लोग आम लोगों का दर्द, उनकी मजबूरियां समझ जाएँ तो कितना अच्छा हो। हर बात सरकार, नेताओं के भरोसे छोड़ने से कुछ नहीं होगा।

ज़िंदा हो तो बंदे को जिंदा दिखना चाहिए। इत्तफ़ाक़ से अगली किट्टी उसी के घर पर थी। रूटीन वाला सब कुछ हुआ। ज्यादातर महिलाएँ पहली बार मालती के घर पर आई थी। ये नहीं कि मालती उस कालोनी में सबसे अमीर थी, बहुत से पैसे वाले और भी थे या यूँ भी कह सकते है कि कुछ और लोगों के मुकाबले में वो कुछ भी नहीं थी, लेकिन वो कहते है न कि सलीक़ा , या रहन सहन का तरीका, कुछ तो था, जो मालती के घर पर सबको दिखा। सभी ने उसके घर की, खाने की बहुत तारीफ़ की। कुछ को न चाहते हुए भी करनी पड़ी, अब सब तो एक जैसे होते नहीं। किट्टी के आख़िर में उन सबका गाना वगैरह चलता था। इससे पहले कि ये सब शुरू हो, मालती ने खड़े होकर कहा कि वो कुछ कहना चाहती है। सबने खुशी से ये सोचकर खूब तालियाँ बजाई कि शायद मालती कुछ सुनाना चाहती है। मालती दो तीन बार और घरों में गा चुकी थी, लेकिन उसने बताया था कि उसे हारमोनियम पर गाना पंसद है,जब उसकी किट्टी होगी तो वो अपने घर पर हारमोनियम के साथ गाएगी। इससे

पहले कि कोई कुछ फ़रमाइश करता, उसने बिना कोई भूमिका बाँधे अपनी बात कहनी शुरू कर दी।" आप सभी का साथ मुझे बेहद अच्छा लगा, लेकिन हम इसे और भी अच्छा बना सकते है, अगर आप सभी का सहयोग हो तो। अपने लिए तो हम जी रहे हैं, लेकिन इससे आगे भी बहुत कुछ है, मैं कोई लीडर या नेता नहीं हूँ लेकिन मन की कुछ बातें आपसे साँझा करनी चाहती हूँ, अगर आप सब की इजाज़त हो तो"।

इतना कह कर मालती चुप हो गई और सबका चेहरे पढ़ने की कोशिश करने लगी। जाहिर है कि सबके मन में तरह तरह की बातें थी, लेकिन सबने हाँ तो बोलना ही था। अगले दस मिंट में मालती ने सब कह दिया, सफाई,कचरा, पानी, सेवा, दूसरों का दुख सुख, और भी बहुत कुछ। वैसे तो ये सभी की दुखती रग थी, लेकिन दूसरो के पचड़े में कौन पड़े, वाली कहावत तो लागू होती ही है। मालती ने फिर कहना शुरू किया, पहली बात तो ये कि हर चीज सरकार पर नहीं छोड़ी जा सकती, सरकार भी हम सबके मिलने से ही बनती है। कमियाँ बहुत है, लेकिन चलो हम कुछ शुरूआत अपनी और से करते है। जैसे पुराने समय में हमारे गाँवों में होता था। हम सिरफ हज़ार लोगों की एक इकाई सी बनाते है, इसमें जितने भी घर आ जाए। कुछ खर्च भी करना पड़े तो कोई बात नहीं। मैं पूर्ण सहयोग दूँगी।

कहते है न कि लीडर दमदार होना चाहिए, अच्छा हो या बुरा, भीड़ तो जुट ही जाती है। समय हो चला था। कईयों को घर जाने की जल्दी थी। मालती ने कुछ सोचते हुए कहा कि अगर वो उसकी बातों से सहमत है तो कल सभी शाम के चार बजे यहीं पर आना। बढ़िया से नाश्ते के साथ गाना बजाना भी होगा और इसी विषय पर बात करेगें। उसने हारमोनियम के साथ दो गाने सुनाने का भी वायदा किया। सब ने विदा ली। अगले दिन का निमंत्रण मालती ने यह सोचकर दिया कि जिस जिस को दिलचस्पी होगी वो जरूर आऐगें, वैसे भी किसी पर थोपा तो कुछ नहीं जा सकता। हाँ , कुछ और रास्ता ढूँढना पड़ेगा। लेकिन मालती की आशानुसार सभी आई, सिरफ रितु को छोड़कर। उसने भी फ़ोन पर अपनी मजबूरी बताते हुए कहा था कि वो उनके साथ है।

बहुत सी बातें हुई। मालती ने कुछ कुछ लिख कर भी रखा हुआ था। उसने कहा कि किसी को कहने की बजाए शुरूआत अपने घर से ही की जाए

और वैसे भी एक बार तो अकेला ही निकलना पड़ता है,लोग मिलते हैं, और क़ाफ़िला बनता है। सारी बातचीत का मक़सद था मुहल्ले में या आसपास जो कमियां देखते है, उनहें थोड़ा थोड़ा करके क्रमबध तरीके से कैसे ठीक किया जाए। अगर हम आगे आऐगे तो सरकारी सहयोग भी मिल सकता है। और फिर देखा देखी और लोगों को भी प्रेरणा मिलेगी। कितनी आपदाओं के बाद भी जापान का आगे बढ़ना एक मिसाल है। कहते है कि एक बार जापान में ट्रेन में एक भारतीय सफ़र कर रहा था। उसने देखा कि एक सीट का कवर थोड़ा सा फटा हुआ था। सामने से आए एक जापानी नी जेब से सुई धागा निकाला और उसे यथासंभव सिल दिया। भारतीय के आश्चर्य की सीमा न रही तो उसने इसका कारण पूछा। तो उसने कहा, ये मेरे देश की इज्जत की सवाल है। ये है देशप्रेम। सेवा, सुधार, देश भक्ति की कोई सीमा नहीं होती। ये जरूरी नहीं कि सीमा पर जाकर युद्ध किया जाए, और भी बहुत से तरीके है। ये भी जरूरी नहीं कि हर सेवा धन से होती है, या बहुत सारा समय देने से होती है।

मालती लगातार बोले जा रही थी, और सब उसे सुन भी रहे थे। उसने एक किस्सा और सुनाया कि कैसे विदेशों में आजकल एक और नया ट्रेंड सुनने में आ रहा है। बैंकों में पैसों की जगह आप सेवा के घंटे जमा करवा सकते हो। सब को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने आगे बताया कि कैसे युवा पीढ़ी ज़रूरतमंद बुजुरगों की सेवा करके अपने भविष्य के लिए समय जमा कर रही है। उदाहरणतय कोई हफ़्ते में दो घंटे निकाल सकता है, तो वो सेवा में लगा दे। जब उसे ज़रूरत होगी तो किसी और से वो समय उसे मिल जाएगा। सारा हिसाब किताब बैंक के पास रहेगा। है न मज़ेदार। खाना पीना भी हुआ। मालती ने दो गाने भी सुनाए। अब अंत में बात ये हुई कि शुरूआत कहाँ से की जाए। मालती ने इसका भी हल सोच रखा था। उसने कहा कि एक एक प्रौजेक्ट से शुरूआत करते है। पहला काम सूखा गीला कूड़ा अलग करने का काम करते है, और इसी से मिलते जुलते और काम भी देखते है। इसके लिए सहयोग चाहिए हमारे घरों में काम करने वाली बाईयों का।

अब एक एक को समझाना मुश्किल था। तय हुआ कि दो दिन के बाद हर कामवाली को तय समय पर साथ वाले ग्राउंड में बुला कर अपनी योजना समझाई जाएगी और उन्हें सैनेटरी नेपकीन भी बाँटे जाऐगें। शुरूआत

करने का सारा ज़िम्मा मालती ने लिया, मगर बाकी सब किट्टी मैंबर उसके साथ थी। अभी के लिए एक हज़ार लोगों के साथ ही शुरूआत थी मतलब कि दो अढाई सौ घर। जहाँ मालती का मन आज बहुत हल्का था, वहाँ बाक़ियों के मन में एक नया उत्साह था। इसी काम के अगले चरण के लिए मालती ने बहुत सारे कपड़े का आन लाईन आर्डर भी दे दिया था, ताकि थैले बनाकर बाटें जाएँ। कुछ अच्छा करने के सुनहरी भविष्य की एक छोटी सी कोशिश और नई शुरूआत हो चुकी थी।

बेनाम रिश्ता

नॉक-नॉक

तेज खटखटाहट ने सन्नाटे को तोड़ते हुए उसे झकझोर दिया, वह बैचेन हो उठी। इतनी देर रात कौन होगा ?उसने कहा। इतने में आवाज आई- दरवाजा खोलो। आवाज ऐसी थी कि जैसे वह सन्नाटे को चीरती हुई कहीं से आई हो। उसे सुनते ही उसकी सांसे अटक गई। दिल की धड़कन तेज़ हो गई,लड़की का हाथ दरवाजे की कुंडी से कुछ ही इंच की दूरी पर था। उसने कहा- यह नहीं हो सकता....

और उसका हाथ वहीं पर रूक गया। डरते डरते उसने की होल से देखने की कोशिश की लेकिन कुछ स्पष्ट नहीं दिखा तभी फिर से वही आवाज आई, "प्लीज दरवाजा खोल दो"। आवाज तो वही थी मगर कातरता पूर्ण थी। उसने खिड़की से ज़रा सा पर्दा हटाया, बाहर बहुत तेज बारिश हो रही थी। एक अठारह उन्नीस बरस के लड़के की झलक सी दिखलाई दी जो कि बुरी तरह भीग चुका था, न उसके पास छाता था और न ही रेनकोट पहन रखा था।

खनक असमंज में थी कि क्या करे। आवाज सुन कर तो वो घबरा गई थी लेकिन अस्पष्ट सी छवि से वह समझ चुकी थी कि ये वो नहीं जो वो समझ रही थी। फिर भी था तो पुरूष ही और वह घर में अकेली। नौकरानी मीरा भी आज छुट्टी थी। क्या करे वो, मानवता के नाते उसके अंदर से आवाज आ रही थी कि उसे मदद करनी चाहिए, लेकिन फिर आजकल के हालात के कारण मन में एक अनजाना डर भी था।

तभी उसे एक उपाय सूझा, दरवाजा खोलने से पहले उसने लक्षिता को फोन कर दिया और आने के लिए कहा। दो क्वार्टर छोड़ कर ही वो रहती थी। दरवाजा खोला तो देखा कि वो नौजवान पूरा भीग चुका था, सहारा देकर उसे लाकर कुर्सी पर बैठाया तो जैसे बेहोश सा हो गया।

रोशनी में उस लड़के का चेहरा देखते ही उसे बहुत जोर से झटका लगा। आवाज का भ्रम तो हो सकता है, मगर चेहरे का नहीं, मगर ये वो भी

नहीं। उसकी उमर तो अठतीस के करीब होनी चाहिए और ये तो अठारह उन्नीस से ज्यादा नहीं, परन्तु चेहरा लगभग वही। फिर उसे ध्यान आया, कहते है कि एक ही शक्ल के दुनिया में सात लोग होते है। आगे कुछ सोचती तब तक लक्षिता आ चुकी थी, उसके कपड़े तो वो न बदल सकी, लोकिन जितना हो सका निचोड़ दिए और हीटर आन कर दिया।

जल्दी ही उसे होश आ गया तो खनक उसके लिए गर्म दूध ले आई। जब वो दूध पी चुका तो खनक ने उसे एक टी शर्ट और चादर देते हुए कहा कि पहले वो अपने गीले कपड़े बदल दे। खनक और लक्षिता पास के कालिज में लैक्चरार थी और ये कालिज का ही आवास क्षेत्र था। खनक अकेली रहती थी और लक्षिता के साथ उसकी मां रहती थी।

लड़का देखने में किसी अच्छे घर का लग रहा था, उसके पास कोई सामान नहीं था, शायद वो घर से भाग कर आया या जो भी हो, अभी पूछने का समय नहीं था, क्यूंकि वो घबराया हुआ सा लग रहा था।अभी वो पुलिस के झंझट में भी नहीं पड़ना चाहती थी और बारिश में घर से बाहर निकालना उसे उचित नहीं लगा।चूंकि अभी रात बहुत बाकी थी, दो बैडरूम थे तो एक में उसे सोने के लिए कह कर वह दोनों बाहर आ गई। लक्षिता ने मां को फोन कर दिया कि वो वहीं पर रहेगी।

वो लड़का जिसका नाम देवांश था कुछ भी खाने से मना कर रहा था। खनक और लक्षिता में कुछ बातें हुई और वो दोनों भी लेट गई, अगले दिन इतवार था, कालिज की छुट्टी थी तो उठने की कोई जल्दी नहीं थी। लक्षिता तो जल्द ही नींद के आगोश में चली गई मगर खनक की आंखों में नींद कहां।

किसी अजनबी को अपने घर पर रात को इस तरह रखना कोई अक्लमंदी नहीं थी, लेकिन देवांश की शक्ल और आवाज ऐसी थी कि वो मजबूर हो गई। लेटे लेटे ही वो भूतकाल में खो गई। सब कुछ चलचित्र की तरह उसकी आंखों के सामने था। बड़े पुलिस अधिकारी की लाडली अठारह वर्षीय सुंदर लड़की, किसी चीज की कहीं कोई कमी नहीं। कालिज में पढ़ाई के इलावा भी हर कार्यक्रम मे भाग लेना।

लड़कों का कालिज भी पास ही था। इसी बीच बीस वर्षीय तेजस से मुलाकात हुई। देखने में शर्मीला सा लड़का लेकिन जब वो स्टेज पर बोलता तो

मजाल है किसी का ध्यान भटके। बातों में जैसे जादू, मिश्री घुली आवाज और अपनी बात को इतने दमदार तरीके से समझाता कि सामने वाला न कह ही नहीं पाता। उनकी दोस्ती में कोई फिल्मी स्टाईल नहीं था। दोस्ती हुई जो जल्दी ही प्यार में बदल गई और कच्ची उम्र का प्यार।

सब कुछ जैसे अपने आप होता चला गया। तेजस भी अच्छे घर से था मगर खनक के पिताजी की पुलिस अफसरी की और बात थी। लड़के लड़कियों में दोस्ती इस जमाने में एक आम बात हो गई है जो कि कुछ साल पहले नहीं थी। पता नहीं कब उनकी दोस्ती समाज की सीमाएं लाघं गई। खनक को जब इस बात का अहसास हुआ तो पछतावे के सिवाय कुछ नहीं बचा। उसने तेजस को बिना कुछ बताए दूरियां बना ली। मां को सब बता दिया लेकिन तेजस का नाम नहीं बताया, उसे पता था कि उसका पिता न जाने उसके साथ कैसा सलूक करें।

मां ने अपना सिर पीट लिया परन्तु क्या किया जाए। उसने अपने तरीके से पति से बात की। गुस्सा तो बहुत आया मगर वो कहते है न बड़े लोगों को रोने के लिए भी बंद कमरा और तमीज चाहिए। यहां भी कुछ ऐसा ही था। खनक का भाई उससे दस साल छोटा था और कहीं दूर सैनिक स्कूल में पढ़ ता था। शादी के लिए खनक बिल्कुल तैयार नहीं थी बच्चे को जन्म देने के सिवाय कोई चारा नहीं था। पहुचं बहुत दूर तक थी। सब निपटारा हो गया। बच्चा कहां गया ये खनक को न किसी ने बताया और न ही कभी उसने जानने की कोशिश की। मां बाप के सिवाय जिस डाक्टर को पता होगा, उसका मुँह खुलने का तो सवाल ही नहीं था।

खनक ने वो शहर छोड़ दिया और शादी से मना कर दिया। दूर किसी जगह अपनी पढ़ाई पूरी की और नौकरी करने लगी। न कभी उसने तेजस को कुछ बताया न उससे मिली। इस सारे प्रकरण में उसने खुद को ही जिम्मेवार माना। तेजस से उसने दिल से मुहब्बत की, वो आज भी उसकी सांसों में बसा था।

वो समझ गई थी कि देवांश वही रत्न है जो उसकी किस्मत में नहीं। मगर अब वो उसे खो नहीं सकती। सुबह उसी ने बताया कि वो छुप कर अनाथालय से भाग कर न जाने कितनी बस गाड़िया बदलता हुआ इस जगह पहुचां और मजबूरी में इस द्वार को खटकाया, और माफी भी मांगी।खनक ने

चुपके से तेजस की तस्वीर के साथ उसका मिलान किया। हूबहू उसकी कार्बन कापी। वो जाने को हुआ तो खनक ने उसे रोक लिया। उसने पुलिस को देवांश के बारे में बताया ताकि वो अनाथालय में खबर कर दे और इस बात की इजाजत भी चाही कि वो उसकी पढ़ाई लिखाई, होस्टल के सारे खर्च का जिम्मा लेना चाहती है। इस बेनाम रिश्ते को निभाने का फैसला वो कर चुकी थी, बाकी जो किस्मत को मजूंर!

(चण्डीगढ़ लिटरेरी सोसायटी की ओर से 2025 में ऑल इंडिया मुकाबले में यह कहानी 300 प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान पर रही)

सही-ग़लत

शादी का माहौल, चारों तरफ रोशनियां, फूल, मनमोहक सजावटें, कहीं रंगो की रंगोली तो कहीं मोतियों की लड़िया तो कहीं रंगबिंरगी झालरें, चारों तरफ इत्र की खुशबू और इन सबसे उपर आसपास छोटे छोटे फव्वारें रंगबिरंगी रोशनियों के साथ अपनी अलग ही छटा बिखेर रहे थे। स्वर्ग तो किसी ने नहीं देखा मगर जैसा पढ़ा सुना है ये नजारा बिल्कुल वैसा ही था। सिरफ अप्सराएं नाच नहीं रही थी, मगर यहां वहां सजी धजी नजाकत से डोलती धरती की सुंदरियों की छटा भी अप्सराओं से कम नहीं थी। और ऐसा सुंदर माहौल हो भी क्यूं ना ?शहर के जाने माने रईस संजय के बेटे ध्रुव की रिसेप्शन पार्टी जो थी। शहर का हर बड़ा अफसर, बिजनैस मैनों के इलावा आसपास से भी लोग आमत्रिंत थे, और मुख्यमंत्री के इलावा और भी कई मंत्री आमत्रिंत थे। रिसेप्शन पर बिना कार्ड दिखाए कोई अंदर नहीं आ सकता था।

सभी दुल्हा दुल्हन के आने का इंतजार भी कर रहे थे और तरह तरह के व्यजनों का आनंद भी उठा रहे थे। संजय के एक बेटा और दो बेटियां थी। दोनों बेटियां शादीशुदा थी और अपने अपने घरों में सुखी थी। ध्रुव सभी का बहुत लाडला था, और हो भी क्यों ना। खूब पढा लिखा, सुंदर, सजीला नौजवान होने के साथ साथ बहुत मेहनती भी था। अपने पुशतैनी बिजनैस को बखूबी संभाल रहा था। संजय का नाम बहुत बड़े बिल्डरों में शुमार था। कई आफिस थे। वैडिंग प्लानर ने सब कुछ बहुत बढ़िया तरीके से किया हुआ था मगर फिर भी संजय हर चीज का खुद जायजा ले रहे थे। तभी सामने से उनकी बेटियां पत्नी मजुंला और कुछ रिश्तेदारों ने हंसते खिलखिलाते हुए प्रवेश किया। साफ दिख रहा था कि वो सभी पार्लर से होकर आ रही है। लेकिन सब पर सरसरी नजर डालकर संजय की नजर सबसे पीछे धीरे धीरे चलकर आती हुई पत्नी मंजुला पर ऐसी अटकी कि कुछ क्षण के लिए वो आंख झपकाना भूल गया। हल्के जामुनी रंग का कढ़ाई किया हुआ लंहगा, कसी हुई मोतियों की लड़ियों वाली चोली और राजस्थानी स्टाईल की गोटेदार चुनरी के साथ मैचिंग ज्वैलरी

और हल्का सा मैकअप। सामने से झूलती आवारा लट और खुले बालों में असली फूलों का गजरा।

कौन कह सकता है कि ये चौपन साल की और तीन बच्चों की मां है। भारी कपड़ों और गहनों के कारण मंजुला धीमी चाल से चल रही थी, मगर उसमें भी एक अदा थी मानों मदमस्त हिरणी चल रही हो या फिर धीमी धीमी हवा। उसका मन उसके पास जाने को मचल उठा परन्तु हाल में प्रवेश करते ही उसे मेहमानों ने घेर लिया और मन मारकर वो भी दूसरी और निकल गया, मगर जब भी मौका लगता वो उसे देख लेता। आखिर उसे मौका मिल ही गया। जैसे ही वो अकेली दिखी वो हाथ में जूस का गिलास लेकर उसकी और लपक कर गया और उसके हाथ में गिलास पकड़ा कर हल्के से अपने पुराने अंदाज में आंख दबाते हुए बोला, यूं सजधज के न आया करो भरी महफिल में, बंदे की जान ही न निकल जाए। दो चार और भी रोमांटिक लाईनें उसने अपने अंदाज में ऐसी बोली कि मंजुला का अपनी हंसी पर काबू पाना मुश्किल हो गया और बड़ी मुश्किल से वो पल्लू से हंसी को दबाते हुए वहां से निकली।

पति की जरा सी प्रशंसा से पत्नी खुश हो जाती है, अगर वो प्यार से एक फूल भी भेंट कर दें तो उसका दिन बन जाता है और मंजुला की खुशकिस्मती कि उसे संजय जैसा दिल से चाहने वाला पति मिला जिसने कि उसकी छोटी से छोटी चाहत भी पूरी करने की कोशिश की। तीस साल का वैवाहिक जीवन कैसे खुशी खुशी बीत गया, मंजुला को पता भी नहीं चला। कहते है कि हर एक का अपना अपना भाग्य होता है। मजुंला को मायके में भी प्यार की कभी कमी महसूस नहीं हुई । वो दो बहनें और दो भाई है, भाई दोनों बड़े और एक छोटी बहन। कुल मिलाकर अच्छा खाता पीता परिवार। पिताजी का अपना बढ़िया बिजनैस जो कि अब भाई संभाल रहे है। ससुराल भी बढ़िया, पांच भाई बहन, सभी अपने अपने घरों में खुशहाल।

बेटे ध्रुव की शादी तो परसों हो गई थी, आज उसकी रिसैप्शन पार्टी थी। बारात में तो परिवार के लोग ही शामिल थे, अपने दोस्त मित्रों के इलावा बहुत से खास लोगों को आज आमत्रिंत किया गया था। संजय सबसे मिलकर अत्यंत गर्मजोशी से सभी का स्वागत कर रहे थे, वहीं उनकी निगाहें यहां वहां डोलती मंजुला को भी बीच बीच में निहार रही थी। तभी दुल्हा दुल्हन स्टेज की

और आते दिखाई दिए। फिर तो रस्में शुरू हो गई, हंसी खुशी सब निबट गया। दो दिन बाद सब मेहमान भी विदा हो गए। बेटियां भी अपने अपने नेग लेकर फिर आने का वादा करके विदा हो गई। ध्रुव और जिया भी हनीमून मनाने विदेश के लिए रवाना हो गए। घर में रह गए मंजुला और संजय और गोपाल काका। घर में हर समय एक नौकर तो दिन रात रहता था, उसके लिए घर के बाहर की तरफ अलग कमरा था , दिन में काम करने के लिए दो मेड भी आती थी। नौकर घर का सारा काम करते परन्तु संजय को मंजुला के हाथ की बनी सब्जी ही पंसद आती। और मंजुला भी संजय की थाली में गरम गरम चपाती परोसती। आज जबकि बाहर खाने का चलन बहुत बढ़ गया है, और नाना प्रकार के व्यजनं परोसे जाते हैं, संजय को घर का खाना ही पंसद था। दोपहर के लिए वो टिफिन साथ ही रखता। उसके दोस्त मित्र कई बार उसे छेड़ते कि क्या तुम टिफिन साथ में रखते हो, इतने होटल है खाने के लिए। मगर संजय किसी की न सुनता, हंस कर टाल देता या पेट खराब होने का बहाना भी बना देता। कभी मजबूरी में बाहर खाना भी पड़ जाता तो उसकी भूख अधूरी ही रह जाती। संजय को शूगर नहीं थी पंरतु उसके खानदान में कईयों को थी तो वह बहुत परहेज से खाना खाता। जिस प्रकार मंजुला उसका ध्यान रखती उससे बढ़ कर वो मंजुला का ध्यान रखती। दोनों का इस प्रकार से प्यार देखकर अक्सर उनकी बेटियां उन्हें छेड़ती। क्योंकि आजकी नौजवान पीढ़ी के प्यार के मायने कुछ बदल गए थे। एक तो दोनों का आमतौर पर काम पर जाना और दूसरा नए जमाने का चलन। चलो जैसे भी गृहस्थी की गाड़ी चले, मतभेद चाहे हो, मनभेद नहीं होना चाहिए।

ध्रुव और जिया हनीमून से वापिस आ चुके थे। ध्रुव ने वापिस काम पर जाना शुरू कर दिया। जिया भी बहुत अच्छे खाते पीते घर की बेटी थी , शादी से पहले वो शौकिया नौकरी करती थी मगर उसकी बाहर के काम में कोई ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी। घर में रहना, सजना संवरना , टीवी देखना और जैसा कि आजकल सोशल मीडिया पर एक्टिव रहना , यही उसे भाता था। जब भी ध्रुव फरी होता घूमना, बाहर खाना ये सब चलता रहता। घर में किसी चीज की कमी नहीं थी पंरतु जिस प्रकार मंजुला किचन का काम अपनी देखरेख में ही करवाती थी, वो चाहती थी कि जिया भी घर के कामों की और ध्यान दे, और नहीं तो ध्रुव के खाने पीने का तो ध्यान रखे। मगर जिया को इससे कोई मतलब

नहीं। वो ज्यादातर अपने कमरे में ही रहती, देर से उठती, जो खाने का मन होता मेड से बनवा लेती। नाशता लंच तो वो अपने कमरे में ही मगंवा लेती, डिनर पर कई बार सब इकट्ठे होते। उसका बस चलता तो वो ध्रुव के साथ अपने कमरे में ही डिनर करती मगर अभी चुप थी।हफ्ते में एक दो बार तो वो किसी न किसी बहाने ध्रुव के साथ डिनर बाहर ही करती या फिर कुछ न कुछ फास्ट फूड आन लाईन मंगवा लेती। मंजुला की मन की मन में रह जाती। सोचा था बेटियां ससुराल गई तो उनका खालीपन बहू से भर जाएगा, मगर ऐसा कुछ न हुआ। मन की बात कहे भी तो किससे। जिया ने कभी उसे कुछ बुरा भला नहीं कहा और न ही उसने। बस मौन ही पसरा रहता। एक दो बार उसने उसके ज्यादा देर से उठने, ड्रैसअप के बारे में या फिर कुछ और बातों के बारे में ध्रुव से या संजय से कुछ कहना चाहा तो संजय का जवाब था, धीरे धीरे सीख जाएगी और ध्रुव तो बात को टाल ही जाता। हार कर मंजुला भी अब इन सब की आदी हो गई।

दो साल इसी तरह बीत गए। राखी पर या बीच में बेटियां दो तीन बार आई । भाभी का व्यवहार उन्हें भी कुछ ठीक नहीं लगा परन्तु शातिं बनाए रखने की मंशा से वो चुप ही रही। वैसे भी उन्हें अपने घरें से कहां फुरसत थी। उन्हें अपनी मां की चिंता तो थी परन्तु अब किया भी क्या जाए जब सामने वाला सब जान बूझ कर अनजान ही बना रहे, वैसे भी इज्जत, प्यार तो मन से होता है, मांगने पर या जबरदस्ती से तो लिया नहीं जा सकता। समय का पहिया तो अपनी गति से चलता ही रहता है। मंजुला वैसे तो स्वस्थ थी परन्तु उसका ब्लड प्रैशर कई बार बढ़ जाता और कई बार बिल्कुल ही नीचे आ जाता।. सांस की समस्या भी थी। उसकी सांस कई बार फूल जाती। दवाईयां और परहेज सब हो रहा था, वैसे भी आजकल के खान पान के चलते पचास के ऊपर हम छोटी मोटी बीमारियों को एक आम सी बात मान लेते है। लेकिन जब उपर से बुलावा आता है तो उम्र , बीमारी, हालात कुछ मायने नहीं रखता। पिछले दो दिनों से संजय काम के सिलसिले में शहर से बाहर थे। रात के दो बजे, सब नींद की मीठी आगोश में। ध्रुव और जिया उपर अपने कमरे में और नौकर कोठी के बाहर वाले कमरे में। मंजुला को एकदम खांसी छिड़ी, खांसते खांसते बेदम हो गई। पास रखे जग से मुश्किल से दो घूंट पानी पिया। बेटे को फोन लगाया, शायद साईलैंट पर था। नौकर ने भी नहीं उठाया। संजय का कवरेज एरिया से बाहर

आ रहा था। मंजुला में बिल्कुल हिम्मत नहीं थी, उपर से खांसी, शायद सांस का दौरा पड़ा या राम जाने क्या। फिर भी उसने हिम्मत करके पति को कई बार काल की लेकिन नहीं लगी। जब उपर से बुलावा आता है तो बहाने खुद ही बन जाते हैं।

पता नहीं रात को किस समय उसके प्राण पखेरू उड़ गए। अगले दिन नौकर तो सुबह ही उठकर शायद किसी काम से या बाजार वगैरह निकल गया। बच्चों ने ध्यान ही नहीं दिया, वैसे भी वो लेट ही उठते थे और अब तो जिया पेट से भी थी । लगभग दस बजे जब नौकरानी आई तो उसने मजुंला को रसोई में न पाकर आवाज लगाई। नौकरों के अदंर आने का दरवाजा अलग से था, चाबी वहीं रखी होती थी। घर काफी बड़ा था, मेड माया ने यहां वहां सब देख लिया, सोचा शायद उपर वाली मंजिल पर या छत पर हो, इतने में सफाई करने वाली प्रभा भी आ गई। दोनों हैरान, क्योंकि मंजुला हमेशा ही सामने हाल में या रसोई में ही मिलती थी। सोने वाले कमरे में वो नहीं गई, अच्छा नहीं लगता। कुछ देर तक तो माया रसोई में और प्रभा सफाई में लग गई, मगर काम में मन नहीं लग रहा था। क्या करें, उपर ध्रुव के कमरे में जाने की हिम्मत नहीं थी, क्यूंकि वहां जाने का समय निशचित था। फिर दोनों ने आपस में सलाह करके बैडरूम खटकाने की ही सोची कि कहीं मालकिन बीमार ही न हो। वो जानती थी कि साहब घर पर नहीं है, लेकिन हो सकता है, आ गए हो। दोनों बहुत पुरानी थी, इसलिए घर के हालात से अच्छी तरह वाकिफ भी थी। दोनों ने मंजुला का दरवाजा हल्के से खटकाया, उन्हें लगा कि शायद अंदर से बंद हो, बेचारी डर भी रही थी। जब दो तीन बार खटकाने के बाद भी न खुला तो जोर से धकेला। अंदर की कुंडी नहीं लगी हुई थी। सामने का दृश्य देखकर दोनों के होश उड़ गए। प्रभा आयु में अभी छोटी थी, वो तो डर के मारे चिल्ला पड़ी। माया फिर भी बड़ी उमर की थी। मंजुला नीचे फर्श पर बेसुध पड़ी थी, पता नहीं वो जिंदा थी भी या नहीं।

माया ने आवाजे लगाई 'भैया भैया, ध्रुव भैया, भाभी' सीढ़िया वहीं अंदर से ही थी, लेकिन उपरली मंजिल तक आवाज शायद सुनाई न दी, दरवाजा भी बंद हो सकता है। प्रभा भाग कर सीढ़ीयां चढ़कर उपर गई और ध्रुव का दरवाजा जोरों से खटकाया। आंखे मलता हुआ ध्रुव बाहर निकला और गुस्से में

कुछ बोलने ही वाला था कि प्रभा रोते हुए बड़ी मुश्किल से बोल पाई, भैया, वो मांजी, क्या हुआ मां को, वो भागकर नीचे आया, उठा कर बैड पर लिटाया, फटाफट डाक्टर को फोन किया, मगर नब्ज पकड़ते ही डाक्टर के ये दो शब्द, "शी इज नो मोर" से सब सतब्ध रह गए। इतने में जिया भी नीचे आ गई थी। उधर संजय ने सुबह जब मंजुला की इतनी सारी मिस्डकाल देखी तो उसका माथा ठनका। दरअसल वो जहां ठहरा हुआ था, वहां बेसमैंट होने के कारण नेटवरक की समस्या थी, दूसरा जरूरी मीटिंग के चलते उसने फोन बंद किया तो आन करना ही भूल गया। सारा दिन का थका मांदा, थोड़ी पी भी ली थी, इसलिए गहरी नींद लग गई और अब जाकर आंख खुली।

अभी वो मंजुला को फोन करने ही वाला था कि ध्रुव का फोन आ गया। संजय की आंखो के आगे अंधेरा छा गया, बड़ी मुश्किल से खुद को संभालकर फ्लाईट से पहुंचा। उसकी तो दुनिया लुट चुकी थी। यकीन करना मुश्किल हो रहा था, मगर होनी को कौन टाल सकता है। दुनियादारी के अनुसार सारी रस्में निभाई गई। सब यत्रंवत हो रहा था। धीरे धीरे करके सब मेहमान चले गए। बेटियों का मन तो नहीं था जाने का, पापा की बहुत चिंता था। वो जानती थी कि पापा ममी से बेहद प्यार तो करते ही थे, अपनी छोटी से छोटी जरूरत के लिए भी वो मां पर आश्रित थे। बच्चों की तरह मां को उनका ध्यान रखना पड़ता था। न जाने अब वो कैसे रहेगें, यही चिंता उन्हें सताए जा रही थी। मगर अपनी घर गृहस्थी भी तो देखनी जरूरी थी। रोते बिलखते दोनों चली गई। मंजुला की छोटी बहन आभा अभी रूकी हुई थी। दोनों बेटियों को भी आभा मौसी के रूकने से कुछ सकून मिला। समय चक्र तो चलता ही रहता है। महीना रूक कर अब आभा को भी जाना पड़ा। दिन रात तो वही थे पर घर तो जैसे पूरा बिखर गया। सब अपने अपने कामों में व्यस्त मगर संजय तो बुरी तरह टूट गए। बेटियां फोन पर रोज बात करती परन्तु संजय हूं हां करके ही रह जाते। कई बार तो फोन ही न उठाते। नौकर चाकर अपना काम करके चले जाते। कोई उन्हें रोकने टोकने वाला नहीं था। जिया को तो घर गृहस्थी में कोई रूचि ही नहीं थी और अब तो उसकी तबियत भी ठीक नहीं थी। चार महीने बाद घर में बेटी का जन्म हुआ, लगा जैसे कुछ खुशियां लौट आई। कुछ ने तो ये भी कहा, भगवान ने मंजुला को ही भेज दिया।

पिछले दो महीने से ध्रुव जिया नीचे वाले ही एक कमरे में रह रहे थे क्योंकि जिया की हालत को देखते हुए डाक्टर ने उसे सीढ़िया चढ़ने से मना किया था, मगर अब वो फिर से अपने कमरे में चले गए क्योंकि उनके सामान वगैरह की सैंटिग वहीं पर थी। कुछ तो जिया बच्चे में व्यस्त, कुछ उसका स्वभाव, वो संजय की और बिल्कुल ध्यान न देती। उसे यही लगता कि नौकर सब कर देते है। ध्रुव के पास फुर्सत नहीं । ये नहीं कि उसे मां की कमी महसूस नहीं हो रही थी, लेकिन अपने काम और परिवार खासतौर पर 'परी' के साथ ही वो सब भूल जाता। संजय अब उम्र के उस दौर से गुजर रहे थे जहां आदमी न बूढ़ा होता है और न ही जवान कह सकते है। इस उम्र में अगर साथी बिछड़ जाए तो खुद को संभालना मुश्किल हो जाता है। औरत तो फिर भी अपने आप को घर के कामों में व्यस्त कर लेती है मगर मर्द कई बार टूट जाता है। अपने आप को संभालना और इच्छा शक्ति को मजबूत करने की जरूरत होती है। पुराने जमाने में संयुक्त परिवारों में और बात थी, आज युग बदल चुका है। खुद का सारथी खुद ही बनना पड़ता है। संजय को ऐसा लगता जैसे उन्हें जी भर कर रोटी खाए एक जमाना हो गया। रोटी सब्जी वही थी मगर स्वाद गायब हो चुका था। संजय पहले ही कम बोलते थे अब तो बिल्कुल ही चुप्पी ओढ़ ली। बीच में बेटियों ने कई बार अपने साथ ले जाना चाहा, मगर संजय ने साफ मना कर दिया।

काम पर जाना भी कम कर दिया। वैसे तो ध्रुव काम में बहुत होशियार था मगर बिल्डर की जिम्मेवारी भी कितनी बड़ी होती है। जमीनें खरीदकर फ्लैट तैयार करवाने के लिए कितने सरकारी और गैरसरकारी काम होते है। भले ही स्टाफ था मगर मार्गदर्शन , निगरानी बड़े बड़े फैसले तो मालिकों को ही लेने होते है। एक साल बीतते बीतते संजय को काफी हद तक अवसाद ने घेर लिया। कभी कभार शराब पीने वाला रोज ही पीने लग गया। दोस्त मित्र भी घर पर आने से कतराते, दफ्तर में ही मिलते। सभी ने समझाया। पहले पहल जब परी का जन्म हुआ तो कुछ समय के लिए संजय का दिल भी बहल गया और उसे भी लगता कि ये मंजुला का ही दूसरा रूप है। परन्तु वो बाद में उससे ही कम मिल पाता। आजकल बच्चों को पालने के तौर तरीके भी बदल चुके है। फोन टीवी तथा अन्य नए नए उपकरणों के चलते बुजुर्गों से कहानियाँ, उपदेश सुनने का चलन नहीं रहा। जिया को कुछ मतलब नही था कि पापा ने खाना खाया,

दवाई खाई, या कैसी तबियत है। वो अपनी दिनचर्या में व्यस्त रहती। भले ही ध्रुव को पापा की चिंता थी बहुत प्यार था मगर जताना भी जरूरी है। अगर दिन में कुछ समय के लिए ही कोई उनके साथ रहता, हंसता बोलता, खाता, उनकी पंसद नापंसद जानने की कोशिश करता, कहीं बाहर इकट्ठे खाने, घूमने जाते तो शायद उनकी हालत ये न होती। बड़ी बेटी हनी कुछ दिन पहले चार पांच दिन रही, उसका तीन साल का बेटा भी साथ था। उनके साथ संजय को ऐसा लगा जैसे फिर से जीने की तमन्ना हो गई। बाहर घूमने भी गए। हनी जिया को समझाना चाहती थी कि दिन में वो और परी कुछ समय पापा जी के साथ हंसे बोले, ताकि उनका मन बहल जाए। लेकिन जिया चुप रही, कुछ नहीं बोली। ध्रुव को भी उसने पापा जी का खास ध्यान रखने को कहा, मगर न जाने हालात कैसे बन रहे थे। भाई भाभी को ज्यादा उपदेश देकर वो भी अपने रिश्ते नहीं बिगाड़ना चाहती थी।

कुछ महीनें और निकल गए, संजय की सेहत खराब रहने लगी। दफ्तर जाना भी कभी कभार होता। तीन चार मित्र थे, जिन्हें उसकी चिंता थी। परी बड़ी हो चली थी, दादू के पास खुश रहती मगर जिया किसी न किसी बहाने परी को संजय से दूर ही रखती और न ही उसे संजय के दोस्तों का घर पर आना पंसद था। संजय का मन तो करता बहुत कुछ कहने को मगर वो चुप रहता । पवन उसका खास दोस्त था। उसने महसूस किया कि अगर हालात यही रहे तो संजय अवसाद का शिकार हो जाएगा। किसी बहाने से वो उसे डाक्टर के पास ले गया। पूरी केस हिस्ट्री जानने के बाद डाक्टर ने कहा कि संजय अकेलेपन से पीड़ित है। माना कि दुनिया में बहुत लोग अकेले रह जाते है, लेकिन कुछ अपने आप को संभाल कर परिस्थिती अनुसार ढ़ल जाते है और कुछ नहीं ढ़ल पाते। पवन के मन में दो ख्याल आये कि या तो इसकी फिर से शादी हो जाए या फिर ये वृद्धाश्रम जाए। बच्चों से तो कोई उम्मीद नहीं थी, कारण भले जो भी हो। वृद्धआश्रम जितनी तो उसकी उम्र भी नहीं थी और शादी की बात भी आसान नहीं थी। फिर भी हिम्मत करके पवन ने ध्रुव से बात की। जवाब वही था जिसका पवन को अंदेशा था। दोनों बातों पर ही वो भड़क उठा। डा. ने तो साफ कह दिया कि या तो ये खुद को संभाले या कोई ऐसा हो जो इसे संभाले। घर के पुराने नौकर से तो लाख कोशिशों के बाद भी स्थिती ज्यों की त्यों रही। दोस्तों ने जब उससे शादी की बात की तो वो चुप सा ही रहा। उसकी हालत तो ऐसे

बच्चे समान थी जो कुछ कहने के हालात में न हो। घर वालों की परवाह न करते हुए तीन चार खास दोस्तों में से दिन के समय अक्सर एक तो उसके साथ ही रहता। मगर रात का साथी तो शराब ही थी। आखिर क्या किया जाए।

उन्होनें फैसला किया कि कोई ऐसी औरत ढूंढ़े जो इसकी देखभाल भी करें और इसकी हमसफर भी बने। विदेशों में तो ये बात आम है मगर हमारे देश में अभी यह चलन बहुत कम देखने में आता है। कानून की और से कोई मनाही नहीं मगर समाज और परिवार अभी ऐसे रिश्तों को अच्छी नजर से नहीं देखता। चलो कोई रिश्ता देखे, बाद की बाद में देखेगें, दोस्तों में ये फैसला हुआ। सभी ने यहां वहां, दोस्तों रिश्तेदारों, अखबारों में तलाश शुरू कर दी। आखिर किसी जानकार के द्वारा लगभग पचास के ऊपर की एक ऐसी औरत का पता लगा जो उसकी रिश्तेदार थी और उसके पति की मौत हो चुकी थी, कोई बच्चा भी नहीं था, मायके ससुराल में कोई पूछने वाला नहीं। थोड़ा पढ़ी लिखी होने से आगंनवाड़ी में लगी हुई थी। चलो, बनते बनते बात बन गई। संजय के बच्चे, रिश्तेदार कतई राजी न हुए। उन्हें तो समाज की चिंता सताए जा रही थी। दोस्तों ने संजय को तो किसी तरह मना लिया था। कोर्ट मैरिज हो गई। मगर किसी ने पार्वती को किसी भी रिश्ते में स्वीकार न किया। पार्वती बहुत ही भली औरत थी, गरीब तो थी ही। सब को यही लगा कि पैसे के लालच में उसने ये शादी की।वो बेचारी नहीं जानती थी कि कैसे परिवार को खुश रखा जाए। बच्चों ने तो साफ कह दिया, पापा की पत्नी ही बनी रहो, हमारी मां बनने की कोशिश मत करना। सिरफ ध्रुव की मासी आभा ही थी जिसने दिल पर पत्थर रखकर पार्वती को अपनी बहन की जगह स्वीकार किया। उसे अपनी बहन के पति की चिंता थी। वो जानती थी दोनों के प्यार को। सब ये जानते है कि जाने वाले के साथ कोई नहीं जा सकता। वो कुछ दिन वहीं रूकी। बेटियां तो आई ही आई, और रिश्तेदार जो सालों से नहीं आए थे वो भी किसी न किसी बहाने चक्कर लगा गए जैसे सर्कस में तमाशा देखने जा रहे हैं। संजय की हालत पहले से बेहतर हो चली थी। हालात की मारी पार्वती बहुत सुलझी हुई औरत थी। सिरफ आभा ही उससे बात करती थी। उसने आभा से स्पष्ट कह दिया कि उसे धन दौलत का कोई लालच नहीं, बस सहारे की तलाश में वो इस घर में आई है। वो तो लिख कर देने को भी तैयार थी, परन्तु संजय खामोश रहा। आभा ने ध्रुव से बात करने की कोशिश परन्तु ध्रुव का कहना था कि पापा ने इस उम्र में हमारी नाक

कटवा दी। समाज में क्या इज्जत रह गई हमारी। और भी बहुत कुछ कहा। घर का माहौल बहुत ही टैंशन वाला था।

संजय और आभा ने कुछ सलाह की और संजय पार्वती को साथ लेकर अलग फ्लैट में जाकर रहने लगे। कुछ प्रौजेक्ट अपने पास रखकर बाकी काम ध्रुव को सौंप दिया। आज इस बात को लगभग दो साल होने को आए। बच्चों ने पार्वती से अभी तक कोई रिश्ता नहीं रखा। संजय पार्वती के साथ खुश है। दोस्त आते रहते है, आभा भी अपने जीजा की खुशी में सकून से है। संजय ने यह फ्लैट और कुछ धन पार्वती के नाम कर दिया ताकि मुश्किल के समय उसे दर दर की ठोकरें न खानी पड़े। बाकी सब उसके तीनों बच्चों का या जैसे भी वो चाहें। ये नहीं कि संजय मंजुला को भूल गया है, वो तो उसके रग रग में बसी है, लेकिन जीवन तो जीना ही पड़ता है। उसका यह फैसला सही है या गल्त, समय ही बताएगा। पंरतु इतना जरूर है कि दुनिया सिरफ तमाशा देखती है, अपनी लड़ाई खुद ही लड़नी पड़ती है।